वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

SW-07

Social Case Work and Social Group Work

वैयक्तिक समाज कार्य एवं सामूहिक समाज कार्य

अनुक्रमणिका

इकाई व	इकाई का नाम	पृष्ठ संख्या
इकाई 1	वैयक्तिक समाज कार्य : अवधारणा एवं आवश्यकता	1-7
इकाई 2	वैयक्तिक समाज कार्य :अर्थ एवं परिभाषा	8-14
इकाई 3	वैयक्तिक समाज कार्य के उद्देश्य	15-25
इकाई 4	वैयक्तिक समाज कार्य के अहम्	26-31
इकाई 5	व्यक्ति व अनुकूलन	32-39
इकाई 6	वैयक्तिक समाज कार्य के सिद्धान्त	40-47
इकाई 7	समूह के साथ समाज कार्य	49-55
इकाई 8	समूह की विशेषतायें	56-63
इकाई 9	सामूहिक समाज कार्य :अवधारणा एवं आवश्यकता	64-71
इकाई 10	सामूहिक कार्य: अर्थ एवं परिभाषा	72-78
इकाई 11	सामूहिक कार्य: उद्देश्य एवं विशेषताएं	79-90
इकाई 12	सामूहिक समाज कार्य में कार्यक्रम	91-101

इकाई 1

वैयक्तिक समाज कार्य: अवधारणा एवं आवश्यकता

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 वैयक्तिक समाज कार्य की अवधारणा

1.3 वैयक्तिक समाज कार्य का विकास

1.4 भारत में वैयक्तिक समाज कार्य का विकास

1.5 वैयक्तिक समाज कार्य एक प्रणाली के रूप में

1.6 वैयक्तिक समाज कार्य की आवश्यकता

1.7 सारांश

1.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

1.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

1.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरांत आप--

1. सर्वप्रथम वैयक्तिक समाज कार्य की अवधारणा को समझ सकेंगे |

2. वैयक्तिक समाज कार्य के विकास के बारे में जान सकेंगे। जिसके अन्तर्गत भारत में स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व तथा पश्चात् विभिन्न कालों को जान सकेंगे।

3. वैयक्तिक समाज कार्य की प्रणाली को समझ सकेंगे।

4. वैयक्तिक समाज कार्य की आवश्यकता को समझ सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में वैयक्तिक समाज कार्य की अवधारणा पर विचार किया गया है। समाज कार्य एक ऐसी कला है जिसमें विभिन्न साधनों का प्रयोग वैयक्तिक, सामूहिक एवं सामुदायिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किया जाता है| इसके लिए एक ऐसी वैज्ञानिक प्रणाली का प्रयोग किया जाता है जिसमें लोगों की ऐसी सहायता की जाती है कि वह स्वयं अपनी सहायता कर सके। इसमें सेवार्थी की स्थायी रूप से सहायता की जाती है। जिससे वह इस योग्य हो सके कि वह स्वयं आगे चलकर अपनी समस्याओं का समाधान निर्देशित मार्गों को अपनाकर करने में समर्थ हो सके।

1.2 वैयक्तिक समाज कार्य की अवधारणा

`वैयक्तिक समाज कार्य, समाज कार्य की एक प्रणाली है जिसके द्वारा एक समस्याग्रस्त व्यक्ति की सहायता निश्चित तरीकों द्वारा की जाती है। इसका मूल उद्देश्य व्यक्तियों की समस्याओं को सुलझाकर इस योग्य बनाना है कि जिससे वह भविष्य में स्वावलम्बी बनकर अपने पर्यावरण के साथ उचित समायोजन स्थापित कर सके। विकास की प्रारम्भिक अवस्था में वैयक्तिक समाज कार्य मुख्य रूप से आर्थिक समस्याओं पर केन्द्रित था। परन्तु कालक्रम के साथ इसके उद्देश्य में परिवर्तन तथा विस्तार आया और इसका उद्देश्य व्यक्ति की आंतरिक समस्याओं तथा व्यक्तिगत कठिनाईयों के उपचार पर केन्द्रित हो गया।

सभी प्राचीन धर्मों ने सहायता करने के कार्य को प्रोत्साहन दिया गया है । हिन्दू दर्शन, असीरियायन, वेवीलोनियन तथा मिश्र की धार्मिक संहिताओं में, यूनान तथा रोम की प्रथाओं में विशेषकर यहूदी तथा ईसाई धार्मिक उपदेशों में इस उद्देश्य की भावना के लक्षण प्रकट होते हैं। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का भी उद्विकास समाज कार्य के समान ही धार्मिक भावना से प्रेरित होकर हुआ।

मनुष्य एक मनोसामाजिक प्राणी है। सामाजिक जीवन का इतिहास ही मानव का इतिहास है। परन्तु जहाँ पर सामाजिक जीवन ने मनुष्य को विशिष्ट अस्तित्व प्रदान कर सामाजिक गुणों को विकसित किया है वहां पर पारिवारिक एवं व्यक्तिगत दोनों ही प्रकार की समस्याओं का विकास हुआ है। इसी कारण समाज को अनेक सुरक्षात्मक कदम उठाने पड़े हैं। समाज कार्य भी इसी प्रकार एक सुरक्षात्मक कदम है जिसके द्वारा लोगों की सामाजिक तथा भावनात्मक अनुकूलन सम्बन्धी समस्याओं के समाधान में सहायता प्रदान किया जाता है। वैयक्तिक समाज कार्य चूंकि समाज कार्य की एक प्रणाली है इसलिए उसे समझने से पहले समाज कार्य का अर्थ स्पष्ट कर देना उचित प्रतीत होता है।

विद्वानों ने समाज कार्य की अनेकों परिभाषाओं का उल्लेख किया है जिनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं:-

फ्रीडलैण्डर (1955), ''समाज कार्य एक व्यावसायिक सेवा है जो वैज्ञानिक ज्ञान एवं मानव सम्बन्धों की निपुणता पर आधारित है। यह व्यक्तियों की अकेले या समूह में सहायता करता है जिससे कि वे सामाजिक वैयक्तिक संतुष्टि एवं स्वतन्त्रता प्राप्त कर सकें।''

इंडियन कान्फ्रेन्स ऑफ सोशल वर्क (1975) के अनुसार, ''समाज कार्य एक कल्याणकारी क्रिया है जिसका आधार मानवोचित दर्शन, वैज्ञानिक ज्ञान एवं प्राविधिक निपुणतायें है और जिसका उद्देश्य व्यक्तियों, समूहों या समुदायों की सहायता करना है जिससे वे सुखी और सम्पूर्ण जीवन व्यतीत कर सकें।''

स्टूरूप (1960) के अनुसार, ''समाज कार्य एक ऐसी कला जिसमें विभिन्न साधनों का प्रयोग वैयक्तिक, सामूहिक एवं सामुदायिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किया जाता है और इसके लिए एक ऐसी वैज्ञानिक प्रणाली का प्रयोग किया जाता है जिसमें लोगों की ऐसी सहायता की जाती है ताकि वे स्वयं अपनी सहायता कर सकें।''

समाज कार्य की उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि समाज कार्य एक सहायता का कार्य है जिसका उद्देश्य व्यक्ति की समस्याओं को सुलझाना है इसमें सेवार्थी की स्थायी रूप से सहायता की जाती है। जिससे वह इस योग्य हो सके कि वह स्वयं आगे चलकर अपनी समस्याओं का समाधान निर्देशित मार्गों को अपनाकर करने में समर्थ हो सके|

1.3 वैयक्तिक समाज कार्य

समस्याग्रस्त व्यक्ति को वैयक्तिक स्तर पर सेवायें प्रदान करने का इतिहास उतना ही प्राचीन है जितना मानव सभ्यता का । सभी प्राचीन धर्मो में समस्याग्रस्त व्यक्तियों को सहायता प्रदान करने के कार्य को प्रोत्साहन दिया जाता था। चाहे हिन्दू दर्शन हो, या पाश्चात्य दर्शन , चाहे बेबिलोनिया तथा मिस्र की धार्मिक संहितायें हो, चाहे यूनान तथा रोम की धार्मिक प्रथायें हो, इन सबमें समस्याग्रस्त व्यक्त्यिों की सहायता को एक प्रमुख स्थान प्रदान किया गया था।

वैयक्तिक समाज कार्य की प्रारंभिक अवस्था में वैयक्तिक स्तर पर सहायता प्रमुख रूप से अर्थिक समस्याओं से ग्रस्त व्यक्तियों को प्रदान की जाती थी| किन्तु कालचक्र में परिवर्तन के साथ-साथ वैयक्तिक समाज कार्य सहायता का सम्बन्ध व्यक्ति की आन्तरिक तथा बाह्य समाज से सम्बन्धित कठिनाईयों से हुआ। 1601 में एलिजाबेथ पूअर लॉ से सम्बन्धित निरीक्षक निर्धनों को सहायता प्रदान करने के लिए प्रार्थना पत्र देते थे| उनकी परिस्थितियों की जाँच करते थे और इसके आधार पर यह निर्णय लेते थे कि सहायता प्रदान की जाये अथवा नही, और यदि सहायता दी जाये तो उसका स्वरूप क्या हो? टामस चामर्स ने अपने अनुभवों के आधार पर दान की इस पद्धति की कटु अलोचना की क्योंकि दान निर्धनों का चारित्रिक पतन करती थी और उनकी स्वालम्बन की इच्छा को निर्बल बनाती थी। चामर्स ने सहायता वैयक्तिक आधार पर जाँच किये जाने पर बल दिया। उनका यह विचार था कि व्यक्ति में पाई जाने वाली अज्ञानता एवं दूरदर्शिता की कमी निर्धनता को उत्पन्न करती है। उन्होंने व्यक्तिगत कमियों को ही निर्धनता का प्रमुख कारण माना है। उनकी यह धारणा थी कि निराश्रितों को सहायता प्रदान करने की प्रक्रिया में वैयक्तिक रूप से ध्यान दिया जाना आवश्यक है।

चामर्स के इन अग्रगामी विचारों के काफी समय बाद लंदन चेरिटी आर्गनाइजेशन सोसाइटी ने सहायता का एक कार्यक्रम बनाया जो प्रमुख रूप से चामर्स के विचारों पर आधारित था| इस आन्दोलन की आधारभूत विचारधारा यह थी कि सार्वजनिक निर्धन सहायता अपने उद्देश्यों की प्राप्ति में असफल रही और सहायतार्थी का इस प्रकार पुनर्वास होना चाहिए कि वह अपना और अपने परिवार का उचित रूप से भरण-पोषण कर सके। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु चैरिटी आर्गनाइजेशन सोसाइटी के आयोजन में इस बात की व्यवस्था की गई कि निर्धनों के घर जाकर उनका निरीक्षण किया जायें, उन्हें परामर्श प्रदान किया जाये, अनुचित कार्यो को करने से रोका जाये और उन्हें आर्थिक सहायता प्रदान की जाये। परिणामतः निर्धनों के पुनर्वास के पूर्व उनकी परिस्थितियों की सावधानी से जांच करना तथा उनकी समस्या के सम्बन्ध में स्वयं तथा उनके सम्बन्धित लोगों से विचार विमर्श करना आवश्यक माना जाने लगा । निर्धनों तथा अभावग्रस्त व्यक्तियों को सहायता प्रदान किये जाने के इतिहास में यह एक ऐसा ऐतिहासिक मोड़ है जहाँ से वैयक्तिक समाज कार्य का होता है।

वैयक्तिक समाज कार्य शब्द का पहली बार उल्लेख एडवर्ड टी डेवाइन के लेख में हुआ जो उन्होंने चैरिटी आर्गेनाइजेषन सोसाइटी के सेक्रेटरी होने के बाद 1897 में प्रकाषित किया। 1909 में मेरी के0 सिम्फोबिच जो ग्रीनविच हाउस, न्यूयार्क में थीं, ने सुझाव दिया कि पुनस्थापना की आवष्यता रखने वाले परिवारों के साथ वैयक्तिक समाज कार्य अधिक सहायक सिद्ध हो सकता है। 1895 से लेकर 1920 के बीच मेरी रिचमण्ड के अनेक लेख प्रकाषित हुये। 1917 में पहली बार मेरी रिचमण्ड ने अपनी पुस्तक सोषल डाइगनाषिस में वैयक्तिक समाज कार्य के सम्बन्ध में एक सुव्यवस्थित मत प्रस्तुत किया जिससे वैयक्तिक समाज कार्य को एक वैज्ञानिक आधार प्राप्त हुआ।

1.4 भारत में वैयक्तिक समाज कार्य का विकास

भारत में दीन-दुखियों, असहायों तथा पीड़ित व्यक्तियों की सहायता करने की परम्परा प्राचीन काल से ही चली आ रही है। मनोचिकित्सा सम्बन्धी कार्य भी प्राचीन युग से होते चले आये हैं। कृष्ण का अर्जुन को उपदेश देना, वशिष्ठ का राम को कर्तव्य बोध कराना, बुद्ध का अंगुलितमाल के व्यवहार को परिवर्तित करना आदि इसके उदाहरण हैं। भारतीय संस्कृति तथा धर्म का मुख्य उद्देश्य उन व्यक्तियों की सहायता करना है जो उत्पीड़ित हैं तथा दयनीय जीवन व्यतीत करते हैं। प्राचीन काल से लेकर आज तक भी भिखारियों को दान देना, निर्धनों तथा असहायों की सहायता करना, धर्मशालाएं बनवाना, रोगियों की सहायता करना आदि पुण्य के कार्य समझे जाते रहे हैं। इतिहास इस बात का साक्षी है कि ऐसे सहायता मूलक कार्य करने के लिए व्यक्तियों में होड़ लगती थी। भारत में विभिन्न कालों में समाज में असहाय लोगो की सहायता का विभिन्न स्वरुप मिलता है जो निम्नलिखित है -

बौद्ध काल

बौद्ध काल में समाज की भलाई के लिए अनेक प्रकार के उपदेश देने का प्रबन्ध किया गया था। बोधिसत्व में इस बात का उल्लेख मिलता है कि दानी व्यक्तियों के कौन-कौन से कार्य थे। बोधिसत्व के अनुसार सहायताकारी कार्यों को पहले अपने सगे सम्बन्धियों तथा मित्रों की सहायता, उसके पश्चात् असहाय, रोगी, संकटग्रस्त तथा दरिद्र व्यक्तियों की सहायता करनी चाहिए।

मौर्य काल

मौर्य काल में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का क्षेत्र अधिक व्यापक हो गया था। बच्चों, वृद्धों तथा रोगग्रस्त व्यक्तियों की देखभाल का कार्य अत्यन्त धार्मिक समझा जाता था। गांव के वयोवृद्ध तथा मुखिया अनाथ बच्चों की देखभाल का कार्य करता था। निर्धन बच्चों के लिए निःशुल्क शिक्षा तथा भोजन का प्रबन्ध अध्यापक करता था।

इस्लाम काल

13वीं शताब्दी से भारतीय लोक जीवन में इस्लाम का आविर्भाव हुआ। इस्लाम धर्म में प्रारम्भ से ही भिक्षा देने की प्रथा रही है। यह दान उन व्यक्तियों को दिये जाने की व्यवस्था है जो हज पर जाने का व्यय न वहन कर सके, जिनके पास भोजन न हो, भिखारी हों तथा जिन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन ईश्वर हेतु अर्पित कर दिया हो। जकात से प्राप्त धन का उपयोग समाज कल्याण के कार्यों में ही किया जाता था। कुतुबुद्दीन, इल्तुतमिश, नासिरुद्दीन आदि सुल्तानों ने इस क्षेत्र में अनेक कार्य किये। फिरोज ने ऐसे व्यक्तियों की सहायता करने के लिए जिनके पास पुत्रियों का विवाह करने के लिए पर्याप्त धन नहीं था एक दीवान-ई-खरात संस्था का निर्माण किया था। मुल्कि काल में ऐसी अनेक दूकाने खोल दी जाती थीं जहां पर सस्ते मूल्य पर अनाज मिलता था। उस समय एक ऐसे विभाग का संगठन भी था जो आवश्यकता वाले व्यक्तियों की सूची रखता था। निरीक्षकों की नियुक्ति भेदभाव को रोकने के लिए की जाती थी। सुल्तान गयासुद्दीन तुगलक ने व्यक्तियों को रोजगार देने तथा अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति करने का वृहद कार्यक्रम बनाया था। उसका विचार था कि अपराधों का कारण आवश्यकताओं की संतुष्टि का न होना है।

अंग्रेजी शासन काल

अंग्रेजी शासन काल में अनेक समाज सुधार आंदोलनों का सूत्रपात हुआ। राजाराम मोहन राय ने बाल विवाह तथा सती प्रथा को रोकने का प्रयत्न किया। उनके प्रयत्नों के फलस्वरूप सन् 1829 ई. में प्रतिबन्ध अधिनियम पारित किया गया जिसने सती प्रथा को अवैध घोषित कर दिया। सन् 1856 ई. में हिन्दू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम पास हुआ। गांधी जी के प्रयत्नों के फलस्वरूप अनेक समाज सुधार कार्य सम्भव हो सके। भारत में सन् 1936 ई. से पहले वैयक्तिक समाज कार्य को एक एच्छिक कार्य समझा जाता था। सन् 1936 ई. में पहली बार समाज कार्य की व्यावसायिक शिक्ष के लिए संस्था सर दोरावजी टाटा ग्रेजुएट स्कूल आफ सोशल वर्क के नाम से स्थापित हुई। इस समय इस बात की आवश्यकता महसूस हो चुकी थी कि वैयक्तिक समाज कार्य करने के लिए औपचारिक शिक्षा अनिवार्य है।

स्वतन्त्रता के बाद

बीसवीं शताब्दी में समाज सेवी संस्थाओं की वृद्धि हुई है। अनाथालयों, शिशु सदनों तथा अन्धों के लिए स्कूलों की स्थापना की गयी। विकलांग बच्चों के लिये पहली बार सन् 1947 ई. में एक ऐच्छिक संस्था स्थापित हुई। इस संस्था के कार्यों से प्रभावित होकर भारत के अनेक चिकित्सालयों में विकलांग चिकित्सा विभाग स्थापित हुए। सन् 1952 ई. में इण्डियन कौंसिल फार चाइल्ड वेलफेयर की स्थापना हुई| जिसका उद्देश्य शिशु कल्याण के क्षेत्र में कार्य करने वाली संस्थाओं के बीच समन्वय स्थापित करना और दूसरी ओर ऐच्छिक संस्थाओं एवं राज्य के बीच सम्पर्क स्थापित करना है।

वैयक्तिक समाज कार्य का चिकित्सा क्षेत्र में उपयोग होना प्रारम्भ हुआ| जब भारतीय चिकित्सक अमेरिका तथा इंग्लैण्ड गये और उन्होंने रोगियों के साथ सेवा कार्य के महत्व को समझा तो भारतीय चिकित्सालयों ने भी इसके विकास पर जोर दिया। दि हेल्थ सर्वे एण्ड डेवलमपेंट कमेटी (भोर कमेटी) ने सन् 1945 ई. में चिकित्सालयों में प्रशिक्षित सामाजिक कार्यकर्ता की नियुक्ति की सिफारिश की। चिकित्सीय वैयक्तिक सेवा कार्य के विकास में यह महत्वपूर्ण कारक था। दूसरा कारण मानसिक चिकित्सालयों की स्थापना तथा इसमें मनोसामाजिक कार्यकर्ताओं के महत्व को समझा जाता है।

सन् 1946 ई. में टाटा इंस्टीट्यूट ने चिकित्सकीय समाज कार्य की शिक्षा का प्रबन्ध किया। सन् 1944 ई. में डा. जे . एम. कुमारप्पा इंस्टीट्यूट के निदेशक, अमेरिका गये तथा चिकित्सकीय समाज कार्य के लिए विजिटिंग प्रोफेसर के लिए समझौता किया। इसके परिणामस्वरूप् लूईस विले, कंटकी की मिल लुईस ब्लैन्की नवम्बर सन् 1946 ई. में भारत आयीं। कुछ महीनों तक उन्होंने भारतीय स्वास्थ्य समस्याओं को समझने तथा चिकित्सालयों की समस्याओं से अवगत होने में अपना ध्यान लगाया। कुछ समय बाद एक नये विभाग चिकित्सकीय तथा मनोचिकित्सकीय समाज कार्य का संगठन किया। जिस अवधि में मिल ब्लैन्की भारत आयीं थीं उन्हीं दिनों डॉ. (मिस) जी. आर. बनर्जी चिकित्सकीय तथा मनोचिकित्सकीय समाज कार्य में प्रशिक्षण हेतु शिकागो गयीं और वापस आकर मिस ब्लैन्की से सन् 1948 ई. में कार्यभार संभाल लिया।

सन् 1946 ई. में जे. जे. हास्पिटल बाम्बे (वर्तमान में मुम्बई) में प्रथम चिकित्सकीय सामाजिक कार्यकर्ता की नियुक्ति हुई थी। उस समय से उसमें काफी वृद्धि हो रही है। आज चिकित्सकीय सामाजिक कार्यकर्ता न केवल सामान्य चिकित्सालयों में बल्कि विशेषीकृत चिकित्सालयों, क्लीनिकों तथा पुनस्थापन केन्द्रों में कार्य करने लगे हैं।

यद्यपि यह सत्य है कि वैयक्तिक समाज कार्य का क्षेत्र व्यापक हो रहा है परन्तु कार्यकर्ता अपनी भूमिकाओं को पूरा करने में अनेक बाधाएं अनुभव कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं को चयन में कोई विशेष वरीयता नहीं मिलती है। आशा है समय परिवर्तन के साथ-साथ इस दृष्टिकोण में परिवर्तन आयेगा तथा वैयक्तिक समाज कार्य का सामान्य विकास सम्भव हो सकेगा।

1.5 वैयक्तिक समाज कार्य एक प्रणाली के रूप में

सेवार्थियों की सहायता के लिए समाज कार्य 6 प्रणालियों को विकसित किया है। प्रथम तीन सामाजिक वैयक्तिक समाज कार्य, सामूहिक समाज कार्य तथा सामुदायिक संगठन व्यक्तियों के साथ प्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित कर सहायता प्रदान करता है। शेष तीन प्रणालियां सामाजिक अनुसंधान, समाज कल्याण तथा सामाजिक क्रिया प्रथम तीन प्रणालियों के निश्चित उपयोग में सहायता प्रदान करती है। वैयक्तिक समाज कार्य द्वारा एक समय में केवल एक व्यक्ति की सहायता की जाती है तथा वही सेवा कार्य का केन्द्र बिन्दु होता है। इस विधि से व्यक्ति की आन्तरिक एवं बाह्य क्षमताओं का ज्ञान होता है। कार्यकर्ता सेवार्थी की इस प्रकार से सहायता करता है जिससे वह अपनी क्षमताओं में आवश्यकतानुसार विकास कर बाह्य जगत से समायोजन स्थापित कर सके। अतः वैयक्तिक समाज कार्य एक ऐसी प्रक्रिया है जो व्यक्तित्व (आन्तरिक सम्बन्ध) और सामाजिक परिस्थितियों (बाह्य सम्बन्ध) में समायोजन स्थापित करने का प्रयास करती है।

वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता यद्यपि एक व्यक्ति (सेवार्थी) के साथ कार्य करता है, परन्तु उसका कार्य उसी तक सीमित नहीं रहता है। सेवार्थी पर बाह्य कारक प्रत्येक क्षण अपना प्रभाव डालते रहते हैं इसलिए बाह्य कारकों के सम्बन्ध में भी कार्य करता है।

सामाजिक अन्तःक्रिया के परिणामस्वरूप दो प्रकार की शक्तियाँ-संगठनात्मक तथा विघटनात्मक प्रकट होती हैं। इनका प्रभाव व्यक्ति पर पड़ता है। जब तक संगठनात्मक शक्तियों का प्रभुत्व उस पर रहता है तब तक सामान्य रूप से कार्य करता रहता है। परन्तु ऐसी भी स्थिति आती है जब संगठनात्मक शक्तियाँ कमजोर हो जाती हैं और वे व्यक्ति को सामान्य जीवनयापन में रुकावट उत्पन्न कर देती हैं। ऐसी दशा में व्यक्ति को बाह्य सहायता की आवश्यकता होती है। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य व्यक्ति की सहायता वैयक्तिक एवं अंतःवैयक्तिक समस्याओं को सुलझाने में करता है। व्यक्ति जन्म से निर्बल प्राणी है उसमें आशा एवं विश्वास का संचार वैयक्तिक सहायता द्वारा ही किया जा सकता है। वह तभी अपनी छिपी हुई क्षमताओं एवं शक्तियों को रचनात्मक कार्य में लगा सकता है जब उनका सामान्य रूप से विकास सम्भव हो। यह तभी सम्भव हो सकता है जब व्यक्ति को आवश्यकतानुसार सहायता मिलती रहे। इस प्रकार व्यक्ति को जन्म से लेकर प्रौढ़ावस्था तक वैयक्तिक सहायता की आवश्यकता होती है क्योंकि प्रत्येक स्तर पर उसे समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

मनोवैज्ञानिक रूप से जब हम वैयक्तिक समाज कार्य की आवश्यकता की ओर दृष्टिपात करते हैं, तो स्पष्ट प्रतीत होता है कि इदं(Id), अहं(Ego) तथा पराअहं(Super ego) में संतुलन बनाये रखने के लिए कभी-कभी मनोवैज्ञानिक आलम्बन की आवश्यकता होती है। जब इन शक्तियों में सामन्जस्य नहीं रहता है और अहं कमजोर हो जाता है ऐसी स्थिति में व्यक्ति सामान्य कार्य नहीं कर पाता है। उसे मनोवैज्ञानिक सहायता देनी आवश्यक हो जाती है।

1.6 वैयक्तिक समाज कार्य की आवश्यकता

सामाजिक अन्तःक्रिया के परिणामस्वरूप दो प्रकार की शक्तियाँ-संगठनात्मक तथा विघटनात्मक प्रकट होती हैं। इनका प्रभाव व्यक्ति पर पड़ता है। जब तक संगठनात्मक शक्तियों का प्रभुत्व उस पर रहता है तब तक

सामान्य रूप से कार्य करता रहता है। परन्तु ऐसी भी स्थिति आती है जब संगठनात्मक शक्तियाँ कमजोर हो जाती हैं और वे व्यक्ति को सामान्य जीवनयापन में रुकावट उत्पन्न कर देती हैं। ऐसी दशा में व्यक्ति को बाह्य सहायता की आवश्यकता होती है। वैयक्तिक समाज कार्य व्यक्ति की सहायता वैयक्तिक एवं अन्तर्वैयक्तिक समस्याओं को सुलझाने में करता है।

व्यक्ति जन्म से निर्बल प्राणली है उसमें आशा एवं विश्वास का संचार वैयक्तिक सहायता द्वारा ही किया जा सकता है। वह तभी अपनी छिपी हुई क्षमताओं एवं शक्तियों को रचनात्मक कार्य में लगा सकता है जब उनका सामान्य रूप विकास सम्भव हो। यह तभी सम्भव हो सकता है जब व्यक्ति को आवश्यकतानुसार सहायता मिलती रहे। इस प्रकार व्यक्ति को जन्म से लेकर प्रौढ़ावस्था तक वैयक्तिक सहायता की आवश्यकता होती है क्योंकि प्रत्येक स्तर पर उसे समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

मनोवैज्ञानिक रूप से जब हम वैयक्तिक सेवा कार्य की आवश्यकता की ओर दृष्टिपात करते हैं तो स्पष्ट प्रतीत होता है कि इदं, अहं तथा पराहं संतुलन बनाये रखने के लिए कभी-कभी मनोवैज्ञानिक आलम्बन की आवश्यकता होती है। जब इन शक्तियों में सामंजस्य नहीं रहता है और अहं कमजोर हो जाता है ऐसी स्थिति में व्यक्ति सामान्य कार्य नहीं कर पाता है उसे मनोवैज्ञानिक सहायता देनी आवश्यक हो जाती है।

1.7 सारांश

प्रस्तुत इकाई में सर्वप्रथम वैयक्तिक समाज कार्य के अर्थ एवं परिभाषा का अध्ययन किया। तत्पश्चात् वैयक्तिक समाज कार्य के विकास का अध्ययन किया तथा भारत में वैयक्तिक समाज कार्य के विकास के विषय में ज्ञान प्राप्त किया। इकाई के अंत में वैयक्तिक समाज कार्य की प्रणाली का अध्ययन किया तथा इसकी आवश्यकता को समझा।

1.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. वैयक्तिक समाज कार्य क्या है? समझाइये।
2. वैयक्तिक समाज कार्य की आवश्यकता को समझाइये।
3. वैयक्तिक समाज कार्य को समाज कार्य की एक प्रणाली के रूप में समझाइये।

1.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

सिंह, डी॰ के॰, भारती, ए॰ के॰, सोशल वर्क कान्सेप्ट ऐंड मैथड्स, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.

सिंह, डी॰ के॰, पालीवाल, सौरभ, मिश्र, रोहित, मानव समाज, संगठन एवं विघटन के मूल तत्व, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2010.

मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक सामूहिक कार्य, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, वर्ष 1977.

सिंह, सुरेन्द्र, मिश्र, पी॰ डी॰, समाज कार्य- इतिहास, दर्शन एवं प्रणालियाँ, रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2006.

मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, वर्ष 1985.

सिंह, डी॰ के॰, भारत में समाज कल्याण प्रषासन: अवधारणा एवं विषय क्षेत्र, रायल बुक डिपो लखनऊ, वर्ष 2011.

सिंह, सुरेन्द्र, वर्मा, आर॰ बी॰ एस॰, भारत में समाज कार्य का क्षेत्र, रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.

इकाई-2

वैयक्तिक समाज कार्य : अर्थ एवं परिभाषा

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2. वैयक्तिक समाज कार्य का अर्थ

2.3 वैयक्तिक समाज कार्य की परिभाषा

2.4 सारांश

2.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

2.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

2.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात्

1. वैयक्तिक समाज के अर्थ का वर्णन कर सकेंगे।
2. वैयक्तिक समाज कार्य की परिभाषाओं का अध्ययन कर सकेंगे।
3. पर्लमैन के वर्गीकरण का अध्ययन करेंगे जिसमें उन्होंने वैयक्तिक समाज कार्य को व्यक्ति समस्या, स्थान तथा प्रक्रिया चार प्रमुख अंगों में विभाजित किया है।
4. देसाई, स्वीथन वीवर्स, मेरी रिचमण्ड तथा टैफ्ट जैसे अनेक विद्वानों के विषय में अध्ययन कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में वैयक्तिक समाज कार्य विषय पर चर्चा की गई है। वैयक्तिक समाज कार्य विभिन्न व्यक्तियों के साथ सहयोग करते हुए उनकी अपनी तथा समाज की एक साथ भलाई प्राप्त करने हेतु उनके साथ विभिन्न प्रकार के कार्यों को करने की एक कला है। यह व्यक्ति के व्यक्तित्व, व्यवहार और सामाजिक सम्बधों को समझने तथा एक अधिक अच्छे सामाजिक एवं वैयक्तिक समायोजन को लाने में उनकी सहायता करने के प्रयासयुक्त कुसमायोजित व्यक्ति का सामाजिक उपचार है। इसके अतिरिक्त वे प्रतिक्रियाएं जो व्यक्तियों को सामाजिक संस्थाओं के प्रतिनिधियों द्वारा निश्चित नीतियों के अनुसार और वैयक्तिक आवश्यकताओं को सामने रखकर सेवा प्रदान करने, आर्थिक सहायता देने या वैयक्तिक परामर्श देने में सम्बद्ध है।

2.2 वैयक्तिक समाज कार्य का अर्थ

वैयक्तिक समाज कार्य, समाज कार्य की एक प्राथमिक इकाई है। वैयक्तिक सामाजिक कार्यकर्ता यद्यपि एक व्यक्ति (सेवार्थी) के साथ कार्य करता है परन्तु उसका कार्य उसी तक सीमित नहीं रहता है। सेवार्थी पर बाह्य कारक प्रत्येक

क्षण अपना प्रभाव डालते रहते हैं इसलिए बाह्य कारकों के सम्बन्ध में भी कार्य करता है। समस्याग्रस्त व्यक्ति को वैयक्तिक स्तर पर सेवायें प्रदान करने का इतिहास उतना ही प्राचीन है जितना मानव सभ्यता का। सभी प्राचीन धर्मो में समस्याग्रस्त व्यक्तियों को सहायता प्रदान करने के कार्य को प्रोत्साहन दिया जाता था। चाहे हिन्दू दर्शन हो, या पाश्चात्य दर्शन, चाहे बेबिलोनिया तथा मिस्र की धार्मिक संहितायें हो, चाहे यूनान तथा रोम की धार्मिक प्रथायें हो, इन सबमें समस्याग्रस्त व्यक्तियों की सहायता को एक प्रमुख स्थान प्रदान किया गया था। वैयक्तिक समाज कार्य की प्रारंभिक अवस्था में वैयक्तिक स्तर पर सहायता प्रमुख रूप से आर्थिक समस्याओं के शिकार व्यक्तियों को प्रदान की जाती थी किन्तु कालचक्र में परिवर्तन के साथ-साथ वैयक्तिक समाज कार्य सहायता का सम्बन्ध व्यक्ति की आन्तरिक तथा बाह्य समाज से सम्बन्धित कठिनाइयों से हुआ। 1601 में इलिजाबेथेन पूअर ला से सम्बन्धित निरीक्षक निर्धनों को सहायता प्रदान करने के लिए प्रार्थना पत्र देते थे, उनकी परिस्थितियों की जाँच करते थे और इसके आधार पर यह निर्णय लेते थे कि सहायता प्रदान की जाये अथवा नही और यदि सहायता दी जाये तो उसका स्वरूप क्या हो? टामस चामर्स ने अपने अनुभवों के आधार पर दान की इस पद्धति की कटु अलोचना की क्योंकि यह निर्धनों का चारित्रिक पतन करती थी और उनकी स्वावलम्बन की इच्छा को निर्बल बनाती थी। चामर्स ने वैयक्तिक आधार पर जाँच किये जाने पर बल दिया। उनका यह विचार था कि व्यक्ति में पाई जाने वाली अज्ञानता एवं दूरदर्शिता की कमी निर्धनता को उत्पन्न करती है। उन्होंने व्यक्तिगत कमियों को ही निर्धनता का प्रमुख कारण माना है। उनकी यह धारणा थी कि निराश्रितों को सहायता प्रदान करने की प्रक्रिया में वैयक्तिक रूप से ध्यान दिया जाना आवश्यक है। चामर्स के इन अग्रगामी विचारों के काफी समय बाद लंदन चैरिटी आर्गनाइजेशन सोसाइटी ने सहायता का एक कार्यक्रम बनाया जो प्रमुख रूप से चामर्स के विचारों पर आधारित था। इस आन्दोलन की आधारभूत विचारधारा यह थी कि सार्वजनिक निर्धन सहायता अपने उद्देश्यों की प्राप्ति में असफल रही और सहायतार्थी का इस प्रकार पुनर्वास होना चाहिए कि वह अपना और अपने परिवार का उचित रूप से भरण-पोषण कर सके। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु चैरिटी आर्गनाइजेशन सोसाइटी के आयोजन में इस बात की व्यवस्था की गई कि निर्धनों के घर जाकर उनका निरीक्षण किया जाये, उन्हें परामर्श प्रदान किया जाये, अनुचित कार्यों को करने से रोका जाये और उन्हें आर्थिक सहायता प्रदान की जाये। परिणामतः निर्धनों के पुनर्वास के पूर्व उनकी परिस्थितियों की सावधानी से जांच करना तथा उनकी समस्या के सम्बन्ध में स्वयं तथा उनके सम्बन्धित लोगों से विचार विमर्ष करना आवश्यक माना जाने लगा। निर्धनों तथा अभावग्रस्त व्यक्तियों को सहायता प्रदान किये जाने के इतिहास में एक ऐसा ऐतिहासिक मोड़ है जहाँ से वैयक्तिक समाज कार्य का उद्भव होता है।

वैयक्तिक समाज कार्य शब्द का पहली बार उल्लेख एडवर्ड टी डेवाइन के लेख में हुआ जो उन्होंने चैरिटी आर्गेनाइजेशन सोसाइटी के सेक्रेटरी होने के बाद 1897 में प्रकाशित किया। 1909 में मेरी के सिम्फोबिच जो ग्रीनविच हाउस, न्यूयार्क में थीं, ने सुझाव दिया कि पुनस्र्थापना की आवश्यकता रखने वाले परिवारों के साथ वैयक्तिक समाज कार्य अधिक सहायक सिद्ध हो सकता है। 1895 से लेकर 1920 के बीच मेरी रिचमण्ड के अनेक लेख प्रकाशित हुये। 1917 में पहली बार मेरी रिचमण्ड ने अपनी पुस्तक सोशल डाइग्नाशिस में वैयक्तिक समाज कार्य के सम्बन्ध में एक सुव्यवस्थित मत प्रस्तुत किया जिससे वैयक्तिक समाज कार्य को एक वैज्ञानिक आधार प्राप्त हुआ।

2.3 वैयक्तिक समाज कार्य की परिभाषाएं

समय-समय पर विभिन्न विद्वानों द्वारा वैयक्तिक समाज कार्य की भिन्न-भिन्न परिभाषायें प्रदान की गयी हैं जो एक काल एवं स्थान विशेष पर वैयक्तिक समाज कार्य के सम्बन्ध में पाये जाने वाले ज्ञान का परावर्तन करती है। वैयक्तिक समाज कार्य की प्रमुख परिभाषाएं निम्नवत् है:-

मैरी रिचमण्ड (1915): वैयक्तिक समाज कार्य ''विभिन्न व्यक्तियों के साथ सहयोग करते हुए उनकी अपनी तथा समाज की एक साथ भलाई प्राप्त करने हेतु उनके साथ विभिन्न प्रकार के कार्यों को करने की एक कला है।''

उपरोक्त परिभाषा के निम्न तत्व हैं:-

1. वैयक्तिक समाज कार्य एक कला है।
2. इसके माध्यम से व्यक्ति की समस्याएं सुलझाई जाती हैं।
3. समस्याओं की भिन्नता के कारण भिन्न-भिन्न कार्य सम्पन्न किये जाते हैं।
4. सेवार्थी का सहयोग चिकित्सा प्रक्रिया में आवश्यक होता है।

मेरी रिचमण्ड ने अपनी परिभाषा में यद्यपि समस्याओं का उल्लेख किया है परन्तु इस बात का स्पष्ट नहीं किया है कि किस प्रकार की समस्याओं का समाधान वैयक्तिक समाज कार्य द्वारा किया जाता है। इन कमियों को दूर करने के लिए सन् 1922 ई. को दूसरी परिभाषा प्रस्तुत की। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में वे प्रक्रियाएं आती हैं जो एक-एक करके व्यक्तियों एवं उनके सामाजिक पर्यावरण के बीच सचेतन रूप से समायोजन स्थापित करती हैं।

मैरी रिचमण्ड (1917): वैयक्तिक समाज कार्य '' व्यक्ति के रूप में पुरूषों तथा स्त्रियों अथवा बच्चों के सामाजिक सम्बन्धों में अधिक अच्छे समायोजन लाने की एक कला है।

टैफ्ट (1920): वैयक्तिक समाज कार्य ''व्यक्ति के व्यक्तित्व, व्यवहार और सामाजिक सम्बन्धों को समझने तथा एक अधिक अच्छे सामाजिक एवं वैयक्तिक समायोजन को लाने में उसकी सहायता करने के प्रयासयुक्त कुसमायोजित व्यक्ति का सामाजिक उपचार है।

टैफ्ट ने अपनी परिभाषा में निम्न तत्वों का उल्लेख किया है:-

(1) वैयक्तिक समाज कार्य एक सामाजिक चिकित्सा है। इसका अर्थ यह है कि इस प्रविधि द्वारा सामाजिक संतुलन को स्थिर रखा जाता है और यदि आवश्यकता हुई तो असंतुलन उत्पन्न करने वाले कारकों को दूर करके व्यक्ति को सुखी बनाया जाता है।

(2) समायोजन रहित व्यक्ति की चिकित्सा की जाती है। अनेक ऐसी शक्तियाँ होती हैं जो व्यक्ति को झकझोर देती हैं और इस भंवर में पड़कर वह समायोजन रहित हो जाता है। ऐसी दशा में वैयक्तिक समाज कार्य उसका सामाजिक संतुलन स्थापित करने में सहायता करता है।

(3) इस प्रणाली द्वारा सर्वप्रथम समायोजन रहित व्यक्ति के व्यक्तित्व व्यवहार एवं सामाजिक संबंधों को समझा जाता है और तब उसकी सहायता का रूप निर्धारित किया जाता है। इससे स्पष्ट होता है कि व्यक्ति की समस्याएँ समान होने पर भी उनका कारण तथा उनकी व्यक्ति में प्रतिक्रिया भिन्न-भिन्न होती है।

सन् 1939 में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का दूसरा महत्वपूर्ण कार्य आर्थिक सहायता देना भी सम्मिलित किया गया।

मेरी रिचमण्ड (1922): वैयक्तिक सामाज कार्य का अर्थ 'ऐसी प्रक्रियाओं जो व्यक्तियों एवं उनके सामाजिक पर्यावरण के बीच एक-एक करके चेतन रूप में लाये गये समायोजन के माध्यम से व्यक्तित्व का विकास करती है, से हैं।

डखीनिज (1939): ''वे प्रतिक्रियाएं जो व्यक्तियों को सामाजिक संस्थाओं के प्रतिनिधियों द्वारा निश्चित नीतियों के अनुसार और वैयक्तिक आवश्यकताओं को सामने रखकर सेवा प्रदान करने, आर्थिक सहायता देने या वैयक्तिक परामर्श देने से सम्बद्ध हैं'' सामाजिक वैयक्तिक समाज कार्य के अन्तर्गत सम्मिलित की जाती हैं।

उपरोक्त परिभाषा से यह बात स्पष्ट होती है कि

(1) सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य द्वारा वैयक्तिक परामर्श एवं आर्थिक सहायता दोनों ही प्रदान की जाती है।

(2) सहायता प्रदान करने का कार्य किसी सामाजिक संस्था के कर्मचारी द्वारा किया जाता है।

(3) सहायता प्रदान करने के कुछ निश्चित नियम व तरीके एवं नीतियाँ होती हैं जिसका सेवा प्रदान करने वाला कर्मचारी अनुसरण करता है।

स्वीथन वीवर्स (1949): ''वैयक्तिक समाज कार्य एक ऐसी कला है जिसके अन्तर्गत मानव सम्बन्धों के विज्ञान के ज्ञान तथा सम्बन्ध की निपुणता का प्रयोग व्यक्ति की उपयुक्त क्षमताओं तथा समुदाय के संसाधनों को सेवार्थी तथा उसके सम्पूर्ण पर्यावरण के समस्त अंगों अथवा किसी अंग के बीच अधिक अच्छे समायोजन के लिए गतिशील बनाने हेतु किया जाता है''।

वीवर्स ने अपनी परिभाषा द्वारा वैयक्तिक समाज कार्य को एक नया रूप प्रदान किया। उन्होंने निम्न विशेषताओं का उल्लेख किया।

(1) वैयक्तिक समाज कार्य एक कला है और इस कला का उपयोग व्यक्ति के असमायोजनकारी व्यवहार को दूर करने के लिए किया जाता है।

(2) इस कला को व्यवहार में लाने के लिए विशेष ज्ञान एवं निपुणताओं की आवश्यकता होती है।

(3) यह कला मानव सम्बन्धों के ज्ञान पर आधारित है।

(4) मानवीय व्यवहार और सम्बन्धों में ज्ञान तथा निपुणता का प्रयोग अत्यन्त सावधानी से करना होता है।

(5) इस कला द्वारा सेवार्थी की शक्तियों को गतिमान किया जाता है। उसके अहं को शक्तिशाली बनाया जाता है तथा समायोजन प्राप्त किया जाता है।

(6) इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए समाज के साधनों को गतिमान किया जाता है।

देसाई (1956): वैयक्तिक समाज कार्य ''व्यक्ति की न केवल यथास्थिति के साथ समायोजन करने बल्कि परिवर्तन तथा नये-नये स्तरों पर अपने परिवर्तित होते हुए पर्यावरण के साथ संश्लेषण करने की प्रक्रिया के सक्रिय भागीदार बनाने में सहायता प्रदान करने की प्रक्रिया है''।

पर्लमैन (1957): वैयक्तिक समाज कार्य कुछ मानव कल्याण अभिकरणों के द्वारा व्यक्तियों की सामाजिक क्रिया में अपनी समस्याओं का अधिक प्रभावपूर्ण रूप से समाधान करने में सहायता प्रदान करने हेतु प्रयोग में लाई जाने वाली एक प्रक्रिया है।

पर्लमैन (1957): वैयक्तिक समाज कार्य एक प्रक्रिया है जिसका प्रयोग कुछ मानव कल्याण संस्थाएं करती हैं ताकि व्यक्तियों की सहायता की जाये कि वे सामाजिक कार्यात्मकता की समस्याओं का सामना उच्चतर प्रकार से कर सकें।

पर्लमैन ने वैयक्तिक समाज कार्य के 4 अंगों का उल्लेख अपनी परिभाषा में किया है: (1) व्यक्ति, (2) समस्या, (3) स्थान तथा (4) प्रक्रिया।

व्यक्ति

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का मुख्य उद्देश्य समस्याग्रस्त व्यक्ति की सहायता करना है जिससे वह आन्तरिक एवं बाह्य समायोजन स्थापित कर सके। व्यक्ति की मानसिक एवं शारीरिक दो प्रकार की आवश्यकताएं

होती हैं। वह इन आवश्यकताओं की पूर्ति अपनी क्षमता एवं साधन उपलब्धि के आधार पर करता है। परन्तु कभी-कभी वह पूर्ति करने में असफल रहता है अतः वैयक्तिक सहायता द्वारा उसको इस योग्य बनाया जाता है कि वह अपना कार्य संचालन सुचारू रूप से कर सके। व्यक्ति की असफलता के कई कारण हो सकते हैं, जैसे-वह स्वयं सक्षम न हो, आवश्यकता पूर्ति के साधनों का ज्ञान न हो, आवश्यकता स्पष्ट न हो, सहायता प्रदान करने वाली संस्थाओं से अनभिज्ञ हो, संस्था में सहायता के पूर्ण साधन उपलब्ध न हो या उसकी आवश्यकताएं वास्तविक न हों। ऐसी स्थिति में व्यक्ति बाह्य सहायता के लिए संस्था में आता है जहां पर उसके व्यक्तित्व एवं समस्या का अध्ययन कर सहायता की जाती है।

समस्या

समस्या के कई रूप होते हैं परन्तु जो समस्याएं व्यक्ति के व्यक्तित्व से सम्बन्धित होती है और जिनसे व्यक्ति की सामाजिक क्रियाशीलता कम हो जाती है, वैयक्तिक समाज कार्य के क्षेत्र में आती हैं। इस समस्या के कारण व्यक्ति अपने कार्यों को न तो सुचारू रूप से कर पाता है और न वास्तविकता को स्पष्ट रूप से देख पाता है। कभी-कभी समस्या की उत्पत्ति बाह्य कारकों से होती है। अतः वैयक्तिक कार्यकर्ता आन्तरिक एवं बाह्य दोनों प्रकार के कारकों पर अपना ध्यान आकर्षित करता है।

स्थान

सहायता प्रदान करने हेतु स्थान एवं संस्था होती है। कुछ संस्थाएं विशिष्ट प्रकार की सेवाएं प्रदान करती हैं तथा कुछ संस्थाएं सामान्य लक्ष्यों की पूर्ति करती हैं। बाल निदेशन केन्द्र, मंत्रणा केन्द्र, परिवार कल्याण केन्द्र, व्यावसायिक मंत्रणा केन्द्र आदि विशिष्ट संस्थाएं हैं। इनमें प्रशिक्षित कार्यकर्ता द्वारा समस्याग्रस्त व्यक्ति की सहायता की जाती है। द्वितीयक प्रकार की वे संस्थाएं हैं जो समाज कार्य विधियों का उपयोग उद्देश्य प्राप्ति के लिए करती हैं और ये विधियाँ गौण स्थान रखती है। चिकित्सालय, विद्यालय, श्रम कल्याण सुधार गृह आदि इसके उदाहरण हैं। भारत वर्ष में अधिकांश सामान्य प्रकार की संस्थाएं हैं।

प्रक्रिया

वैयक्तिक समाज कार्य की प्रक्रिया में कार्यकर्ता का सम्बन्ध मुख्यतः तीन कार्यों से रहता है:-

1. सेवार्थी की समस्या के सम्बन्ध में आन्तरिक एवं बाह्य वातावरण से सम्बन्धित आंकड़ों का संकलन एवं अध्ययन।
2. समस्या का वैयक्तिक विधियों द्वारा निदान।
3. इस प्रकार प्रक्रिया के तीन अभिन्न अंग हैं:-

क) अध्ययन

ख) निदान एवं मूल्यांकन

ग) चिकित्सा

कार्यकर्ता समस्या का अध्ययन निरीक्षण, अन्वेषण तथा वैयक्तिक इतिहास के आधार पर करता है। निदान का कार्य भी अध्ययन के साथ ही चलता रहता है। कार्यकर्ता सेवार्थी के व्यक्तित्व तथा समस्या के मूल्यांकन द्वारा यह देखता है कि उसकी समस्या क्या है, उसकी समस्या का रूप क्या है, वास्तविकता तथा समस्या से क्या सम्बन्ध हैं। इसके पश्चात् वह निश्चित करता है कि सेवार्थी को किस प्रकार की सहायता की आवश्यकता है।

उपरोक्त परिभाषाओं पर विश्लेषणात्मक दृष्टि डालने पर यह पता चलता है कि वैयक्तिक समाज कार्य सर्वप्रथम मेरी रिचमण्ड द्वारा एक कला के रूप में वर्णित किया गया जिसका उद्देश्य अपनी तथा समाज की उन्नति करना था। तदुपरान्त टैफ्ट ने वैयक्तिक समाज कार्य को एक सामाजिक चिकित्सा के रूप में चिन्हित करते हुए इसका उद्देश्य अधिक अच्छा वैयक्तिक एवं सामाजिक समायोजन बताया। बाद में वैयक्तिक समाज कार्य को एक प्रक्रिया के रूप में स्वीकार कर लिया गया तथा इस प्रक्रिया के दौरान किये जाने वाले विभिन्न प्रकार के कार्यों तथा अंगभूतों का निरूपण करते हुए समायोजन लाने को प्रोत्साहित करने के अतिरिक्त परिवर्तन की प्रक्रिया में सक्रिय रूप से भाग लेने के उद्देष्य पर भी बल दिया जाने लगा।

2.4 सारांश

प्रस्तुत इकाई में वैयक्तिक समाज कार्य के अर्थ का अध्ययन किया गया। वैयक्तिक समाज कार्य की अनेक विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाओं का विश्लेषण किया जिसमें प्रमुख हैं मेरी रिचमण्ड, टैफ्ट, देसाई तथा स्वीथन वीवर्स जिन्होंने वैयक्तिक समाज कार्य का अलग-अलग दृष्टिकोण से वर्णन किया है।

2.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. वैयक्तिक समाज कार्य का अर्थ बताइए।
2. वैयक्तिक समाज कार्य की परिभाषाओं को विस्तृत रूप से वर्णित कीजिए।

2.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य, उत्तर प्रदेष हिन्दी संस्थान, वर्ष 1985.

सिंह, डी॰ के॰, भारत में समाज कल्याण प्रषासन: अवधारणा एवं विषय क्षेत्र, रा ॅयल बुक डिपो लखनऊ, वर्ष 2011.

सिंह, सुरेन्द्र, वर्मा, आर॰ बी॰ एस॰, भारत में समाज कार्य का क्षेत्र, रा ॅयल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.

मिश्रा, पी॰ डी॰, मिश्रा, बीना, व्यक्ति और समाज, न्यू रा ॅयल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2007.

सिंह, डी॰ के॰, भारती, ए॰ के॰, सोषल वर्क का ॅन्सेप्ट ऐंड मैथड्स, न्यू रा ॅयल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.

सिंह, डी॰ के॰, पालीवाल, सौरभ, मिश्र, रोहित, मानव समाज, संगठन एवं विघटन के मूल तत्व, न्यू रा ॅयल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2010.

मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक सामूहिक कार्य, उत्तर प्रदेष हिन्दी संस्थान, वर्ष 1977.

सिंह, सुरेन्द्र, मिश्र, पी॰ डी॰, समाज कार्य- इतिहास, दर्षन एवं प्रणालियाँ,

रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2006.

इकाई-3

वैयक्तिक समाज कार्य के उद्देश्य

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 वैयक्तिक समाज कार्य के उद्देष्य

3.2.1 सेवार्थी की मनोसामाजिक समस्याओं का अध्ययन करना तथा समाधान करना

3.2.2 सेवार्थी की मनोवृत्तियों में परिवर्तन लाना

3.2.3 सेवार्थी में समायोजन लाने की क्षमता का विकास करना

3.2.4 सेवार्थी में आत्मनिर्णयात्मक मनोवृत्ति का विकास करना

3.2.5 सेवार्थी को स्वयं सहायता करने के लिए प्रेरित करना

3.2.6 सेवार्थी का वैयक्तिक अध्ययन करना

3.2.7 सेवार्थी की समस्याओं का सामाजिक निदान करना तथा उपचार करना

3.2.8 विभिन्न समाज विज्ञानों का सहारा लेते हुए सेवार्थी में चेतना का प्रसार करना

3.3 सारांश

3.4 अभ्यासार्थ प्रश्न

3.5 सन्दर्भ ग्रन्थ

3.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात

1. वैयक्तिक समाज कार्य के उद्देश्यों के विषय में अध्ययन कर सकेंगे।
2. सेवार्थी की समस्याओं के समाधान का वर्णन कर सकेंगे।
3. सेवार्थी में आत्म निर्णायक मनोवृत्ति के विकास का अध्ययन कर सकेंगे एवं सहायता के लिए प्रेरणा, नेतृत्व की क्षमता के विकास के विषय में अध्ययन कर सकेंगे।
4. सेवार्थी की समस्याओं के निदान एवं उपचार तथा सेवार्थी के वैयक्तिक अध्ययन के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में वैयक्तिक समाज कार्य के उद्देश्यों का वर्णन किया गया। समस्या कुछ आवश्यकताओं, बाधाओं या भग्नाशा के एकीकरण या समायोजन आदि के एक या संयुक्त होकर व्यक्ति की जीवन स्थिति पर या समाधान करने के प्रयत्नों की उपयुक्तता पर धमकी देता है या आक्रमण कर चुका होता है, से उत्पन्न होता है। सेवार्थी की मनोवृत्ति पूर्व ज्ञान रूपी प्रतिक्रिया का स्वरूप और क्रिया का आरम्भ है जिसका पूर्ण ज्ञान होना आवश्यक नहीं है। इसके अतिरिक्त प्रतिक्रिया की इस तत्परता में किसी प्रकार की विशिष्ट या सामान्य परिस्थिति निहित रहती है। वैयक्तिक समाज कार्य का उद्देश्य वैयक्तिक मनोसामाजिक समस्याओं के निदान व उपचार में सहायता करना है। मानव प्रकृति की विशेषता है कि वह अपनी मूल समस्याओं के स्रोत को जहाँ तक सम्भव होता है छिपाने का प्रयास करता है और समस्या के कारण को दूसरे कारक पर प्रक्षेपित कर देता है। जिसके कारण सेवार्थी की मनोस्थिति तथा वाह्य स्थिति का वास्तविक ज्ञान प्राप्त करना कठिन हो जाता है।

3.2 वैयक्तिक समाज कार्य के उद्देश्य

वैयक्तिक समाज कार्य के निम्नलिखित उद्देश्य हैं:

3.2.1 सेवार्थी की मनोसामाजिक समस्याओं का अध्ययन करना तथा समाधान करना

मानव समाज की ऐसी कोई समस्या नहीं है जो संस्था में सेवार्थी द्वारा न लायी जाती हो। भूख मिटाने तथा भूख लगने की समस्या, प्रेम करने तथा प्रेम न करने की समस्या, साथ रहने अथवा दूर जाने की समस्या, विवाह करने तथा विवाह न होने की समस्या, बच्चे न हो तथा बच्चे अधिक होने की समस्या, धन अर्जित करने तथा खर्च करने की समस्या, तिरस्कार करने तथा तिरस्कृत किये जाने की समस्या, नौकरी न मिलने तथा कार्य करने की दशाओं की खराबी की समस्या, शारीरिक, मानसिक सावेंगिक आदि समस्याएं सेवार्थी द्वारा संस्था में लायी जाती है। इन सभी समस्याओं को समझना तथा उनका समाधान करना अत्यन्त दुष्कर कार्य है। इसका कारण भिन्न-भिन्न समस्याओं के लिए भिन्न-भिन्न संस्थाएं बन गयी है जो एक विशेष समस्या का समाधान करती हैं।

पर्लमैन के अनुसार, ''समस्या आवश्यकताओं, बाधाओं या भग्नाशा के एकीकरण या समायोजन आदि के एक या संयुक्त होकर व्यक्ति की जीवन स्थिति पर या समाधान करने के प्रयत्नों की उपयुक्तता पर धमकी देता है या आक्रमण कर चुका होता है, से उत्पन्न होती है।

समस्या के कारक:

निम्नलिखित कारक समस्या उत्पन्न करते हैं:

1. वर्तमान स्थिति से अरुचि या असंतोष
2. वर्तमान स्थित में परिवर्तन जिससे एक निश्चित उद्देश्य की पूर्ति हो।
3. सकारात्मक प्रयत्न तथा क्रिया की आवश्यकता जिससे कि वर्तमान को इच्छित दिशा में परिवर्तित किया जा सके।
4. समस्या की प्रकृति तथा जटिलता उद्देश्य की प्रकृति तथा जटिलता पर निर्भर होती है।

वैयक्तिक कार्यकर्ता को समस्या के सम्बन्ध में निम्नलिखित जानकारी आवश्यक है:-

1. सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की परिधि में उन्हीं समस्याओं को सम्मिलित किया जाता है जो सामाजिक कार्यात्मकता को प्रभावित करती हैं या सामाजिक कार्यात्मकता द्वारा प्रभावित होती हैं।

2. सेवार्थी की समस्या के अनेकानेक रूप तथा गत्यात्मक प्रकृति, समस्या के किसी एक अंग का चुनाव करने के लिए कार्यकर्ता व सेवार्थी को मजबूर करती है।

3. समस्या सदैव श्रृंखलाबद्ध रूप में प्रतिक्रिया करती है।

4. कोई भी समस्या जिससे व्यक्ति ग्रसित होता है वस्तुगत (बाह्य) तथा विषयगत (आन्तरिक) दोनों प्रकार से महत्वपूर्ण होती है।

5. समस्या के बाह्य तथा आन्तरिक तत्व न केवल एक साथ घटित होते हैं बल्कि इनमें से कोई भी एक दूसरे का कारण हो सकता है।

6. समस्या जिसको कि सेवार्थी संस्था में ले जाता है उसकी प्रकृति कैसी भी हो परन्तु सदैव या अधिकांशतः सेवार्थी होने की समस्या से जुड़ी रहती है।

समस्या समाधान करने के लिए आवश्यक योग्यताएं

1. समस्या के तथ्यों का पूर्ण ज्ञान होना।

2. समस्या के सभी तत्वों के अन्तर्सम्बन्धों का ज्ञान होना।

3. तत्वों को व्यवस्थित करने की योग्यता तथा विकास की गति का ज्ञान।

4. परिस्थिति का उचित प्रत्यक्षीकरण।

5. पूर्व अनुभवों का उचित उपयोग।

6. सम्प्रेरणाओं की जटिलता तथा प्रकार का ज्ञान।

समस्या समाधान की प्रक्रिया को दो चरणों में विभक्त किया जा सकता हैः- (1) समस्या विश्लेषण चरण, (2) निर्णय लेने का चरण।

समस्या विश्लेषण

समस्या विश्लेषण में निम्न बातों का ज्ञान प्राप्त किया जाता है:-

1. अपेक्षित कर्तव्य पूर्ति का स्तर तथा वास्तविक कर्तव्य पूर्ति में अन्तर का स्पष्टीकरण।

2. कर्तव्य पूर्ति स्तर से भिन्न व्यवहार समस्या का कारण स्पष्ट करना।

3. स्तर से निम्नता का स्पष्ट अवलोकन, प्रत्यक्षीकरण तथा विवरण।

4. कुछ महत्वपूर्ण कारक।

5. समस्या का कारण, कुछ महत्वपूर्ण यंत्रों, विधियों तथा स्थितियों से बदलता रहता है जिसका अवांछनीय प्रभाव पड़ता है।

6. समस्या उत्पन्न करने के एक प्रमुख कारक की खोज करना।

3.2.2 सेवार्थी की मनोवृत्तियों में परिवर्तन लाना

मनोवृत्ति शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा से हुई है जिसका अर्थ योग्यता से है। अर्थात् व्यक्ति की योग्यता को निर्धारित करने तथा विकसित करने में मनोवृत्तियों का विशेष हाथ होता है।

यंग, किम्वाल के अनुसार, ''आवश्यक रूप से मनोवृत्ति पूर्व ज्ञान रूपी प्रतिक्रिया का स्परूप और क्रिया का आरम्भ है, जिसका पूर्ण होना आवश्यक नहीं है। इसके अतिरिक्त प्रतिक्रिया की इस तत्परता में किसी प्रकार की विशिष्ट या सामान्य परिस्थिति निहित रहती है।

ग्रीन वी. एफ. के अनुसार, ''मनोवृत्ति की अवधारणा में एक क्रमशीलता या प्रत्युत्तरों के बारे में भविष्यवाणी करना निहित है।''

अकोलकर के शब्दों में, ''एक वस्तु या व्यक्ति के विषय में सोचने, अनुभव करने या उसके प्रति विशेष ढंग से कार्य करने या उसके प्रति विशेष ढंग से कार्य करने की तत्परता की स्थिति को मनोवृत्ति कहते हैं।

मनोवृत्ति की विशेषताएं

1. मनोवृत्ति सीखी जाती हैं।
2. मनोवृत्ति स्थायी होती हैं।
3. मनोवृत्तियों तथा सम्प्रेरणाओं में सम्बन्ध होता है।
4. मनोवृत्ति तथा विषयवस्तु में सम्बन्ध होता है।
5. मनोवृत्तियां व्यवहार के ढंग निश्चित करती हैं।
6. मनोवृत्तियाँ प्रायः व्यक्ति की आवश्यकताओं तथा समस्याओं से सम्बन्धित

होती हैं।

7. मनोवृत्ति का प्रभाव सापेक्षिक होता है।
8. मनोवृत्ति का सम्बन्ध संवेग तथा भावना से होता है।
9. मनोवृत्ति पर व्यक्तित्व का प्रभाव पड़ता है।
10. मनोवृत्ति अमूर्त होती है।

मनोवृत्ति का वर्गीकरण

आलपोर्ट ने मनोवृत्तियों को 3 वर्गों में विभक्त किया है:-

1. सामाजिक मनोवृत्तियाँ
2. विशिष्ट व्यक्तियों के प्रति मनोवृत्तियाँ
3. विशिष्ट समूहों के प्रति मनोवृत्ति

मनोवृत्तियों का निर्माण

मनोवृत्तियों के निर्माण में निम्नलिखित कारक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं-

1. सांस्कृतिक कारक
2. सामाजिक या सामूहिक कारक
3. सामाजिक सीखना
4. प्रेरणात्मक कारक
5. मनोवैज्ञानिक कारक
6. उद्दीपक
7. परिचय प्रगाढ़ता
8. क्रियात्मक कारक
9. सूचना एवं प्रसार
10. व्यक्तित्व

मनोवृत्तियों में परिवर्तन लाने के उपाय

1. प्रचार
2. शिक्षा
3. सम्पर्क
4. प्रतिष्ठित व्यक्ति का प्रभाव
5. व्यक्तिगत अनुभव
6. संस्कृति का मिलाप
7. मनोवृत्ति की विशेषतायें तथा परिवर्तन

3.2.3 सेवार्थी में समायोजन लाने की क्षमता का विकास करना

जब हम किसी व्यक्ति को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि वह अच्छी प्रकार से समायोजित, मनोवैज्ञानिक रूप से स्वस्थ तथा सुखमय जीवन व्यतीत कर रहा है तो इसका तात्पर्य यह नहीं है कि वह या उसकी परिस्थितियाँ किसी एक प्रकार की विलम्बित उत्कृष्टता में स्थिर हो गयी हैं बल्कि इसका तात्पर्य यह है कि वास्तविक समस्याएं जिनसे वह संघर्ष करता है वे न तो संख्या में अधिक हैं और न ही अधिक शक्तिशाली, बल्कि वे उसके प्रबन्ध की सीमा में हैं तथा दिन-प्रतिदिन की समस्याओं से निपटने के लिए उसकी प्रणाली यथोचित तथा अल्पव्ययी है।

समायोजन एक सार्वभौमिक तथा निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। जीवित अवयव साधारण से जटिल अवस्था से निरन्तर समायोजन का प्रयास करता है। इन समायोजनों का सम्बन्ध प्राणिशास्त्रीय आवश्यकताओं जैसे-भूख, प्यास की संतुष्टि से सम्बन्धित होता है अथवा मानवीय स्तर पर मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं जैसे सम्बन्ध स्थापन की इच्छा, प्रेम तथा वात्सल्य प्राप्त करने की इच्छा, स्वीकृति अथवा स्थिति ग्रहण करने की इच्छा या रचनात्मक आत्म प्रदर्शन के अवसर प्राप्त करने की इच्छा की पूर्ति से होता है।

हमारी दिन-प्रतिदिन की क्रियाओं का अधिकांश सम्बन्ध समायोजन तथा अनुकूलन से होता है। हम अनेक यन्त्रों को इस प्रकार से यथास्थान व्यवस्थित करते हैं जिससे उनकी कार्यात्मकता में वृद्धि होती है।

इस अर्थ में समायोजन का तात्पर्य किसी वस्तु को इस प्रकार से व्यवस्थित करना एवं संगठित करना जिस उद्देश्य के लिए वह बनाया गया है, उसकी पूर्ति सम्भव हो। इसी प्रकार हम सामाजिक परिस्थितियों तथा दशाओं को पर्यावरण में इस प्रकार समायोजित करने का प्रयत्न करते हैं जिससे क्रियाओं के प्रतिदिन के कार्यक्रम सरलता से चल सकें।

समायोजित व्यक्ति की विशेषताएं

संतोषजनक समायोजन के लिए निम्नलिखित विशेषताएं आवश्यक होती हैं-

1. वैयक्तिकृत की भावना

बालक प्रारम्भ से ही यह जान लेता है कि उसका अस्तित्व दूसरों से भिन्न है। जैसे-जैसे वह बढ़ता जाता है वैसे-वैसे अहं के ज्ञान की योग्यता बढ़ती जाती है। एक समायोजित व्यक्ति समाज के आदर्शों के अनुसार अपने आपको परिवर्तित कर लेता है और यह भी निश्चित करने में समर्थ होता है कि वह कौन सी परिस्थिति होगी जब समाज की मांगों को पूरा करना अनुचित होगा।

2. आत्मनिर्भरता

समायोजित व्यक्ति स्वयं की समस्याओं के समाधान के लिए स्वयं आत्मनिर्भर होता है। अपने उद्देश्यों एवं इच्छाओं की पूर्ति स्वयं कर लेता है।

3. विश्वास

विश्वास के आधार पर ही एक व्यक्ति दूसरे व्यक्तियों से घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करता है। वह अपनी शक्तियों एवं कमियों को समझता है तथा उसके अनुसार कार्य करता है।

4. स्वयं तथा अन्य व्यक्तियों की स्वीकृति

समायोजित व्यक्ति अपनी स्थिति को सही-सही समझता है तथा अपना स्थान समाज में निश्चित करता है तथा उनके अधिकारों की रक्षा करता है।

5. सुरक्षा की भावना

समायोजित व्यक्ति अपने को आन्तरिक एवं बाह्य रूप से सुरक्षित महसूस करता है।

6. उत्तरदायित्व की भावना

समायोजित व्यक्ति अपने कार्यों का उत्तरदायित्व ग्रहण करता है और कार्यों के परिणामों को स्वीकार करता है तथा दूसरों की आवश्यकताओं का ध्यान रखता है। वह उन उत्तरदायित्वों को पूरा करता है जो परिवार, समूह तथा समाज द्वारा निश्चित किये जाते हैं।

7. अभिस्थापन

समायोजित व्यक्ति नये ज्ञान की खोज के लिए सदैव तत्पर रहता है। वह अपनी प्रेरणा शक्ति को अपनी योग्यताओं एवं क्षमताओं को विकसित करने के लिए अधिकाधिक उपयोग करता है। उसके निश्चित उद्देश्य होते हैं तथा लक्ष्य की दिशा भी निश्चित होती है।

8. अनुभव का उचित उपयोग

एक समायोजित व्यक्ति वर्तमान समस्याओं से निपटने तथा क्रियाओं के सम्पादन में अपने पूर्व अनुभव का समुचित उपयोग करता है।

9. समस्या समाधान की मनोवृत्ति

समायोजित व्यक्ति की मनोवृत्ति सदैव परिस्थिति का सामना करने के लिए तैयार रहती है। वह समस्या का सामना करने के लिए अपने व्यवहार में परिवर्तन लाता है तथा परिस्थिति में परिवर्तन करना जानता है।

10. व्यक्तिगत मूल एवं जीवन दर्शन

समायोजित व्यक्ति के मूल्य सामाजिक मूल्यों के समान विकसित होते हैं। उसके जीवन का दर्शन व्यक्तिगत एवं सामाजिक कल्याण करना होता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट कहा जा सकता है कि समायोजित व्यक्ति में विश्वास, सुरक्षा, उत्तरदायित्व, अनुभव से सीखने की क्षमता, व्यक्तिगत मूल्य एवं आदर्शों की उपयुक्तता आदि विशेषताएं पायी जाती हैं।

3.2.4 सेवार्थी में आत्मनिर्णयात्मक मनोवृत्ति का विकास करना

वैयक्तिक सेवा कार्य सम्बन्ध का यह एक विशिष्ट गुण है। कार्यकर्ता अपनी प्रक्रिया में इसकी मनोवृत्ति को अपनाता है। इस मनोवृत्ति का आधार वैयक्तिक समाज कार्य का दर्शन है जो यह मानता है कि व्यक्ति की समस्या उत्पन्न करने में कोई दोष नहीं है या वह अपराधी नहीं है बल्कि परिस्थितियाँ इसके लिए उत्तरदायी हैं। यह व्यक्ति की मनोवृतिक स्तर तथा क्रिया-प्रतिक्रिया के कार्यों को महत्व देता है।

''निर्णय'' का तात्पर्य व्यक्ति को किसी कार्य के लिए उत्तरदायी या उसकी अज्ञानता को निश्चित करने से होता है। यह एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा निश्चित किया जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति उक्त कार्य के लिए स्वयं दोषी है या उसने यह अपराधपूर्ण कार्य नहीं किया है। उसी आधार पर इसे दोषी ठहराया जाता है।

वैयक्तिक समाज कार्य में भी निर्णय का यह अर्थ लिया जाता है। अर्थात् सेवार्थी पर दोषारोपण मौखिक या अन्य किसी प्रकार अपनी समस्या के लिए करना। समस्या के कारक चाहे पर्यावरणीय हों या व्यक्तित्व से सम्बन्धित हों, सेवार्थी की सहायता करने में यद्यपि उसकी असफलताओं तथा कमियों को जानना आवश्यक होता है। लेकिन वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता का निर्णय करने का कोई उत्तरदायित्व एवं कार्य नहीं होता है। निर्णय करने का अधिकार दूसरे अधिकारियों का होता है। समाज कार्य दर्शन, विश्वास, प्रेम, सहानुभूति तथा सहयोग सिखाता है। इसका दृढ़ विश्वास है कि व्यक्ति के विषय में कोई निर्णय लेना अतार्किक तथा अव्यावहारिक है। दोषी को तिरस्कार करना अथवा बहिष्कृत करना कोई बुद्धिमानी नहीं है। ये भावनाएँ सहायक प्रक्रिया में बाधा पहुँचाती हैं तथा सेवार्थी आत्मग्लानि अनुभव करता है। समाज कार्य दण्ड के स्थान पर सहायता में विश्वास करता है।

सेवार्थी की सहायता करने, समुदाय के स्रोतों का उपयोग करने, आन्तरिक क्षमताओं में समस्या-समाधान के लिए वृद्धि करने, उचित समायोजन प्राप्त करने, व्यक्तित्व का विकास एवं वृद्धि करने के लिए वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता को सेवार्थी तथा उसकी समस्या दोनों को समझना होता है। सहायता को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए आवश्यक होता है कि वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता सेवार्थी की समस्या के कारणों को जाने। इस प्रक्रिया में वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता सेवार्थी पर न तो दोषारोपण करता है न ही उसे अपराधी बताता है और न ही उसे समस्या उत्पन्न करने का कारक निश्चित करता है। यह कार्यकर्ता सेवार्थी को आत्म निर्णय के करने के लिए तैयार करता है।

3.2.5 सेवार्थी को स्वयं सहायता करने के लिए प्रेरित करना

वैयक्तिक समाज कार्य में कार्यकर्ता द्वारा सेवार्थी को स्वयं सहायता करने के लिये प्रेरित किया जाता है जिससे कि वह अपनी समस्याओं का समाजशास्त्रीय समाधान ढूंढ सके और उनका निराकरण कर सके। इसमें सेवार्थी को अपनी समस्याओं को पहचानने एवं उनका विश्लेषण करने तथा उनको किस प्रकार दूर किया जा सकता है, समझाया जाता है जिसके फलस्वरूप सेवार्थी अपनी समस्या का समाधान कर पाता है।

इसके अन्तर्गत वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता सेवार्थी को अपना मार्ग स्वयं निश्चित करने के लिए प्रोत्साहित करता है। सेवार्थी को अपनी रुचि के अनुसार वैयक्तिक समाज कार्य प्रक्रिया में भाग लेने की पूरी स्वतन्त्रता होती है। उसके अधिकारों एवं आवश्यकताओं को महत्व दिया जाता है। कार्यकर्ता सेवार्थी की स्वयं सहायता को उत्तेजित करता है तथा संस्था में उपलब्ध साधनों का ज्ञान कराता है। सेवार्थी का स्वयं निश्चय करने का अधिकार उसकी सकारात्मक एवं रचनात्मक निर्णय शक्ति की सीमा पर निश्चित होता है। संस्था के कार्य भी इस अधिकार को प्रभावित करते हैं।

वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता सेवार्थी को आत्म निर्णय लेने के अधिकार को व्यवहार में लाता है और उसमें स्वयं सहायता करने की प्रवृत्ति को विकसित करता है। उसको अपना अनुभव तथा अपनी भूमिका इस सिद्धान्तों के पालन में सहायता करती है। कार्यकर्ता की मनोवृत्ति तथा व्यक्तित्व भी सहायक रूप से कार्य करता है| कार्यकर्ता की भूमिका इस सिद्धान्त के आधार पर दो प्रकार की होती है: सकारात्मक तथा नकारात्मक। सकारात्मक रूप से कार्यकर्ता की निम्नलिखित भूमिकायें सेवार्थी में स्वयं सहायता करने के लिए प्रेरित करती हैं:

1. समस्या एवं आवश्यकता को वास्तविक अर्थ में समझने तथा प्रत्यक्षीकरण करने में सेवार्थी की सहायता करता है।

2. समुदाय में उपलब्ध स्रोतों से अवगत कराना है।

3. सेवार्थी को अपना निर्णय लेने के लिए उत्साहित करता है।

4. सम्बन्धों की प्रकृति इस प्रकार से बनती है जिसमें सेवार्थी अपनी सहायता के संदर्भ में स्वयं कार्य करने लगता है। कार्यकर्ता सेवार्थी की बात को सुनता है, सक्रिय भाग लेता है तथा समस्या समझने में पूरा सहायता करता है।

कार्यकर्ता के निम्नलिखित कार्य उसकी नकारात्मक भूमिका को स्पष्ट करते हैं तथा सेवार्थी में स्वयं निर्णय/सहायता लेने में कठिनाई बनते हैं।

1. समस्या सम्बन्धी मुख्य उत्तरदायित्व को स्वयं ग्रहण करना तथा सेवार्थी को गौण स्थान प्रदान करना।

2. सेवार्थी क्या सहायता चाहता है इसको ध्यान में न रखकर प्रत्येक सामाजिक तथा सांवेगिक स्थिति के सूक्ष्म अवलोकन करने का प्रयास करने से भी विपरीत प्रभाव पड़ता है।

3. प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सेवार्थी को अपना (कार्यकर्ता का) निर्णय मानने के लिए मजबूर करना। कभी-कभी कार्यकर्ता सेवार्थी को अपनी इच्छा व्यक्त करने का अवसर ही नहीं देता है तथा स्वयं रास्ता बताते चलता है।

इस प्रकार का दृष्टिकोण कार्यकर्ता तभी अपनाता है जब वह समझता है कि उसकी भूमिका का क्षेत्र कम हो रहा है। परन्तु वास्तविकता यह कभी नहीं होती है। कार्यकर्ता को सेवार्थी को अपना निर्णय या अपनी स्वयं सहायता करने का अधिकार देकर बहुत बड़ी सहायता मिलती है। इसके पालन से सेवार्थी अपने भविष्य की समस्याओं को समझने तथा समाधान करने की क्षमता विकसित कर लेता है एवं आत्म-नियंत्रण एवं निर्देशन का विकास होता है।

3.2.6 सेवार्थी का वैयक्तिक अध्ययन करना

वैयक्तिक समाज कार्य का उद्देश्य व्यक्ति की मनोसामाजिक समस्याओं के निदान व उपचार में सहायता करना है। मानव प्रकृति की विशेषता है कि वह अपनी मूल समस्या के स्रोत को जहां तक सम्भव होता है छिपाने के उपाय करता है और समस्या के कारण को दूसरे कारक पर प्रक्षेपित कर देता है जिसके कारण सेवार्थी की मनोस्थति तथा बाह्य स्थिति का वास्तविक ज्ञान प्राप्त करना कठिन हो जाता है। साक्षात्कार के समय सेवार्थी ऐसी जटिल समस्याएं उत्पन्न करता है जिसके कारण अनुभवी कार्यकर्ता भी कभी-कभी असमंजस में पड़ जाता है और चिकित्सात्मक कार्य में बाधा उत्पन हो जाती है। अतः सेवार्थी का सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त करना वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता का प्रथम उद्देश्य होता है। वह सेवार्थी की आन्तरिक तथा बाह्य दोनों प्रकार की स्थितियों का अध्ययन करता है और समस्या से सम्बन्धित सभी पहलुओं का साकार चित्रण करता है। यह कार्य वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता के लिए मार्ग प्रशस्त करता है।

वैयक्तिक समाज कार्य समाज कार्य की एक महत्वपूर्ण प्रणाली है जिसके द्वारा एक व्यक्ति की सहायता की जाती है जिससे वह अपनी समस्याओं को सुलझा सके तथा भविष्य में इस समस्या से ग्रसित न हो। उसे आत्म निर्भर बनाने का प्रयत्न किया जाता है। अतः सहायता प्राप्त करने वाले व्यक्ति का पूर्ण व्यक्तित्व जानना आवश्यक होता है तभी उसमें निहित शक्ति एवं क्षमता को उभार कर सक्रिय रूप में उपयोग में लाया जा सकता है। वैयक्तिक अध्ययन से व्यक्ति की सम्पूर्ण स्थिति का चित्रण होता है, उसकी सम्पूर्ण दशाओं का ज्ञान होता है, परिस्थतियों के प्रभावों का पता चलता है। इन सूचनाओं के आधार पर ही वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता उपचार एवं सहायता कार्य करने में सफल होता है।

3.2.7 सेवार्थी की समस्याओं का सामाजिक निदान करना तथा उपचार करना

समस्या कोई एक या एक से अधिक आवश्यकता होती है जो व्यक्ति के जीवनचर्या में व्यवधान तथा कष्ट उत्पन्न कर देती हे। समस्या उस समय उत्पन्न होती है जब व्यक्ति सामाजिक भूमिका पूरी करने में बाधा अनुभव करता है तथा वह अपने को समस्या के समाधान करने में असमर्थ पाता है। संस्था में आने का सेवार्थी का उद्देश्य सहायता प्राप्त करना है जिससे वह अपनी भूमिका को पूरा कर सके। अतः वैयक्तिक कार्यकर्ता का कार्य सेवार्थी की आन्तरिक समस्याओं के समाधान के लिए मनोचिकित्सा का उपयोग करना है। सामाजिक स्थितियां तथा समस्याएं अंतर्क्रिया करती हैं एवं एक दूसरे को प्रभावित करती हैं। अतः कार्यकर्ता इनका ज्ञान प्राप्त करता है। वह इस अंतर्क्रिया का अर्थ ज्ञात करता है तथा उन प्रभावों का पता लगाता है जो सामाजिक अनुकूलन के लिए आवश्यक होते हैं।

यद्यपि समस्या का पूर्ण ज्ञान आवश्यक होता है परन्तु समस्या का पूर्ण समाधान कठिन होता है। कार्यकर्ता समस्या के केन्द्र बिन्दु पर ध्यान देता है तथा समस्या को पूर्णता में देखता है। समस्या के चुनाव में कार्यकर्ता तीन बातों पर ध्यान देता है:-

1. सेवार्थी क्या चाहता है या उसकी प्रमुख आवश्यकता क्या है?
2. कार्यकर्ता क्या महत्वपूर्ण समझता है?
3. संस्था में कौन-कौन सी सुविधाएं उपलब्ध हैं?

कार्यकर्ता के लिए आवश्यक होता है कि वह अपना कार्य वहाँ से प्रारम्भ करे जहाँ से सेवार्थी इच्छा रखता है परन्तु अपने अनुभव द्वारा समस्या के केन्द्र बिन्दु पर पहुँच जाता है।

समस्या चाहे जितनी आसान हो, समाधान चाहे जितना सरल हो परन्तु सेवार्थी के लिए महत्वपूर्ण अवश्य होती है। परन्तु समान समस्या से ग्रस्त व्यक्तियों की प्रतिक्रियाएं समान नहीं होती हैं। अतः कार्यकर्ता समस्या के बाह्य तथा आन्तरिक या वस्तुगत एवं विषयगत दोनों पहलुओं को समझता है।

समस्या समाधान की प्रक्रिया के दो चरण होते हैं:-

1. समस्या विश्लेषण चरण
2. निर्णय प्रक्रिया।

समस्या विश्लेषण में निम्न बातों का ज्ञान आवश्यक है:-

1. अपेक्षित कर्तव्य पूर्ति का स्तर तथा वास्तविक कर्तव्य पूर्ति में अन्तर,
2. स्तर से व्यवहार का विचलन या भूमिका की अपूर्णता,
3. भूमिका का स्पष्ट अवलोकन, प्रत्यक्षीकरण तथा उसका विवरण,
4. समस्या उत्पन्न करने वाले कारकों के प्रभाव में परिवर्तन,
5. प्रमुख कारकों की खोज जो समस्या उत्पन्न करने में सक्रिय रहा है।

निर्णय प्रक्रिया में उद्देश्यों का स्पष्टीकरण, महत्व के आधार पर उद्देश्यों का वर्गीकरण, समाधान के वैकल्पिक उपाय, उपायों का मूल्यांकन तथा निर्णय के सम्भावित प्रभाव आदि ज्ञात करना कार्यकर्ता के लिए आवश्यक होता है।

3.2.8 विभिन्न समाज विज्ञानों का सहारा लेते हुए सेवार्थी में चेतना का प्रसार करना

कभी-कभी सेवार्थी बाह्य परिस्थितियों की जटिलता के कारण समायोजन नहीं कर पाता है। कार्यकर्ता इस उद्देश्य का सहारा लेते हुए उसके वातावरण में परिवर्तन लाता है तथा तनावपूर्ण स्थिति को कम करता है। इसके लिए कार्यकर्ता को विभिन्न सामाजिक विज्ञानों का सहारा लेते हुए सेवार्थी में उत्पन्न समस्या के कारणों की खोज करना तथा उसके प्रभावों का अध्ययन करना चाहिए तथा उनका निदान करते हुए सेवार्थी में चेतना प्रसार किया जाना चाहिए।

3.3 सारांश

प्रस्तुत इकाई में वैयक्तिक समाज कार्य के उद्देश्यों के विषय में अध्ययन किया गया। सेवार्थी की मनोवृत्ति में परिवर्तन को समझा गया। समायोजन लाने की क्षमता के विकास का अध्ययन किया गया। अनिर्णायक अभिवृत्ति के विकास को समझा, समस्याओं के सामाजिक निदान एवं उपचार के महत्व को समझा। सेवार्थी के वैयक्तिक अध्ययन के बारे में अध्ययन किया तथा सेवार्थी की सोच में परिवर्तन लाने के प्रयास के विषय में ज्ञान प्राप्त किया।

3.4 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. वैयक्तिक समाज कार्य के उद्देश्यों का वर्णन कीजिए।
2. वैयक्तिक समाज कार्य में समायोजन लाने की क्षमता का विकास एवं स्वयं सहायता करने के लिए प्रेरित करने के बारे में समझाइये।
3. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए:
    1. वैयक्तिक अध्ययन करना
    2. मनोसामाजिक समस्याओं का अध्ययन करना तथा समाधान करना।
    3. समस्याओं का सामाजिक निदान करना।

3.5 सन्दर्भ ग्रन्थ

सिंह, डी॰ के॰, पालीवाल, सौरभ, मिश्र, रोहित, मानव समाज, संगठन एवं विघटन के मूल तत्व, न्यू रा ॅयल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2010.

मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक सामूहिक कार्य, उत्तर प्रदेष हिन्दी संस्थान, वर्ष 1977.

मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य, उत्तर प्रदेष हिन्दी संस्थान, वर्ष 1985.

सिंह, डी॰ के॰, भारत में समाज कल्याण प्रषासन: अवधारणा एवं विषय क्षेत्र, रा ॅयल बुक डिपो लखनऊ, वर्ष 2011.

सिंह, सुरेन्द्र, वर्मा, आर॰ बी॰ एस॰, भारत में समाज कार्य का क्षेत्र, रा ॅयल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.

मिश्रा, पी॰ डी॰, मिश्रा, बीना, व्यक्ति और समाज, न्यू रा ॅयल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2007.

सिंह, डी॰ के॰, भारती, ए॰ के॰, सोषल वर्क का ॅन्सेप्ट ऐंड मैथड्स, न्यू रा ॅयल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.

सिंह, सुरेन्द्र, मिश्र, पी॰ डी॰, समाज कार्य- इतिहास, दर्षन एवं प्रणालियाँ,

रोंयल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2006.

इकाई-4

वैयक्तिक समाज कार्य के अहम्

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 अहम् का अर्थ एवं परिभाषा

4.3 वैयक्तिक समाज कार्य में अहम्

4.4 अहम् की प्रमुख विशेषताएँ

4.5 सारांश

4.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

4.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के पश्चात् वैयक्तिक समाज कार्य के अहम को समझ सकेंगे। वैयक्तिक समाज कार्य के अहम् की परिभाषाओं का वर्णन कर सकेंगे। विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गई अहम् की परिभाषाओं के वर्गीकरण का उल्लेख कर सकेंगे। तत्पश्चात् वैयक्तिक समाज कार्य में अहम् की भूमिका का अध्ययन कर सकेंगे। अहम् की विशेषताओं के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में वैयक्तिक समाज कार्य में अहम् की भूमिका का वर्णन किया गया है। अहम् व्यक्तित्व के चेतनात्मक कार्यकारी भाग का प्रतिनिधित्व करता है, जिसके द्वारा व्यक्ति स्वयं को व्यक्त करता है तथा दूसरों से संचार व्यवस्था स्थापित करता है। अहं प्रत्यय का तात्पर्य उन अंतर्वैयक्तिक शक्तियों से है जो निरंतर व्यक्ति के विभिन्न तथा कभी-कभी एक दूसरे से संघर्षात्मक सम्प्रेरणाओं तथा वाह्य जगत की मांगों के साथ संतुलन बनाये रखने का प्रयत्न करता है। जन्म के बाद से ही अहं उन सभी प्रणालियों का विकास करता है, जिनके द्वारा अव्यवस्थित चालकों, वाह्य खतरा तथा पराहं के निषेधों से निपटा जा सके। इड तथा अहं मे प्रमुख अंतर यह है कि इड केवल मस्तिष्क के विषयात्मक वास्तविकता पर आधारित होता है जबकि अहं मस्तिष्क की वस्तु तथा वाह्य स्थिति में अंतर स्पष्ट करता है।

4.2 अहम् का अर्थ एवं परिभाषा

अहं , (Ego) वैयक्तिक समाज कार्य के केन्द्रीय महत्त्व का विषय है। इसके अन्तर्गत वही बातें आती हैं एवं उन्हीं तथ्यों का स्पष्टीकरण होता है जो वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता को पहले से ही ज्ञात होता है। इसमें मनोविश्लेषण सम्बन्धी सिद्धान्तों का भी स्पष्टीकरण होता है। अहम् सुख तत्व के स्थान पर यथार्थ से परिचालित होता है। अहं का कार्य व्यक्ति में उत्पन्न तनाव को उचित साधनों एवं विधियों के माध्यम से विसर्जित करना होता है। भूखे व्यक्ति की भूख तभी शान्त होती है जब वह भोजन की खोज करके उसे सेवन कर लेता है। अतः उसको वास्तविक भोजन तथा प्रतिबिम्ब में अन्तर का ज्ञान सीखना होता है।

डेविसन के अनुसार, ''अहं व्यक्तित्व के चेतनात्मक कार्यकारी भाग का प्रतिनिधित्व करता है, जिसके द्वारा व्यक्ति स्वयं को व्यक्त करता है तथा दूसरों से संचार व्यवस्था स्थापित करता है।''

फ्रीडलैण्डर के अनुसार, ''अहं प्रत्यय का तात्पर्य उन अन्तर्वैयक्तिक शक्तियों से है जो निरन्तर व्यक्ति के विभिन्न तथा कभी-कभी एक दूसरे से संघर्षात्मक सम्प्रेरणा तथा बाह्य जगत की माँगों के साथ संतुलन बनाये रखने का प्रयत्न करता है।''

पाराड, हावर्ड जे हेन्स ने इस संदर्भ में अपना मत व्यक्त करते हुए कहा कि ''मैं अहं को व्यक्तित्व में एकीकरण करने वाले प्रयासों के सम्पूर्ण योग अथवा दूसरे शब्दों में संघर्ष के समाधान की यांत्रिक व्यवस्था के सम्पूर्ण योग, के रूप में परिभाषित करूँगा।''

अहं लैटिन शब्द आई (I) से बना है जिसका तात्पर्य होता है व्यक्ति जैसा वह है और जैसा वह स्वयं को अपने बाह्य जगत के समक्ष प्रस्तुत करता है। अहं को नियन्त्रणकारी तथा एकीकरण करने वाली शक्ति के रूप में जाना जा सकता है। क्योंकि इसका कार्य व्यक्ति के बाह्य जगत तथा अंतर्जगत में संतुलन स्थापित करना है।

अहं मन का चेतन स्तर है जिसके द्वारा इड (Id)पर नियन्त्रण लगाया जाता है। यह व्यक्ति को वास्तविकता का बोध कराता है। पाराड ने अहं के 3 कार्यों का उल्लेख किया है: रुको (Stop), देखो (Look), तथा सुनो (Listen)। इड बाह्य सत्यता ,पराहं तथा अहं उत्तेजा प्राप्त करता है। इस प्रकार यह तीन तरीकों का सामना करता है। मूल प्रवृत्तियाँ इड से उत्पन्न होती हैं और सुख के सिद्धान्त द्वारा नियन्त्रित होती हैं। इस प्रकार जन्म के बाद से ही अहं उन सभी प्रणालियों का विकास करता है जिनके द्वारा अव्यवस्थित चालकों, बाह्य खतरा तथा पराहं के निषेधों से निपटा जा सके।

सारांश में अहं:

1. परिणामों के विषय में सोचता है।
2. स्थितियों का पूर्वानुमान करता है जो अभी घटित नहीं हुई है।
3. समाधान के उपाय निर्धारित करता है।

फ्रान्ज अलेक्जेण्डर ने अहं के कार्यों को 4 वर्गों में विभाजित किया है:

1. आन्तरिक विषयात्मक इच्छाओं तथा आवश्यकताओं का प्रत्यक्षीकरण।
2. बाह्य तथा मान्य वास्तविक माँगों तथा अवसरों का प्रत्यक्षीकरण।

3. वास्तविक सिद्धान्त के द्वारा संतुष्टि के लिए चयन तथा साधनों के पसन्द करने में दो प्रकार के प्रत्यक्षीकरण के बीच एकीकरण तथा समझौता करना।

4. चेतन ऐच्छिक व्यवहार का नियोजन तथा प्रबन्ध करना।

4.3 वैयक्तिक समाज कार्य में अहम्

अहम् का प्राथमिक एवं मूलभूत कार्य व्यक्तित्व में संतुलन बनाये रखना है। व्यक्तित्व पर दो कारकों का प्रभाव पड़ता है: आन्तरिक आवश्यकतायें एवं बाह्य वास्तविकता। आन्तरिक आवश्यकतायें अपनी पूरी शक्ति के साथ उन्हें अपने को संतुष्ट करने का प्रयास करती हैं परन्तु बाह्य पर्यावरण केवल उन्हीं आवश्यकताओं को पूरा करने देना चाहता है जो केवल मान्य हैं अतः दोनों में संघर्ष चला करता है। अहं इस संघर्ष को दूर करता है और आन्तरिक आवश्यकताओं पर नियन्त्रण लगाता है। यह एक सक्रिय कारक है जिसके द्वारा एक कठिन परिस्थिति का सामना किया जाता है। अहं अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए अचेतन तथा चेतन दोनों प्रकार के यंत्रों तथा साधनों का प्रयोग करता है। यह उस समय तक सामान्य प्रकार से कार्य करता है जब तक व्यक्ति की आन्तरिक एवं बाह्य आवश्यकताओं में एकीकरण बना रहता है तथा कम से कम संघर्ष होता है। अहं की शक्ति आयु से सम्बन्धित होती है। आयु बढ़ने के साथ-साथ इसमें संतुलन, नियन्त्रण एवं एकीकरण की शक्ति बढ़ती जाती है।

वैयक्तिक समाज कार्य में सेवार्थी के अहं की शक्ति को समझने का सबसे पहले प्रयत्न किया जाता है। उसके आधार पर ही चिकित्सा की विधियों का उपयोग होता है। कमजोर अहं को अनेक साधनों एवं विधियों द्वारा सुदृढ़ बनाकर समस्या-समाधान करने का प्रयत्न किया जाता है। वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता का प्रमुख लक्ष्य सेवार्थी में स्वयं ऐसी शक्ति (अहं) का विकास करना होता है जिससे वह स्वयं आन्तरिक एवं बाह्य कठिनाइयों को निपटाने में योग्य सिद्ध हो सके।

यद्यपि वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ताओं ने सदैव ही अहं की सम्पूर्ण कार्यात्मकता को ध्यान में रखकर कार्य किया है परन्तु अधिकांशतः अहं को पूर्ण समझने का प्रयत्न नहीं किया है। वे बाह्य पर्यावरण के संदर्भ में तो अच्छी जानकारी रखते हैं परन्तु आन्तरिक व्यवहार को समझने में अभी पूरी क्षमता प्राप्त नहीं हो पायी है। अहं मनोविज्ञान को समझने के लिए उसके नये अर्थ अचेतन अहं, जो दिन प्रतिदिन के कार्यकलापों में निहित होता है, को समझना आवश्यक प्रतीत होता है। मेरी रिचमण्ड ने कहा है कि वैयक्तिक समाज कार्य में सामाजिक पृष्ठभूमि तैयार करना प्रमुख कार्य होता है। सामाजिक वास्तविकता का अर्थ यह नहीं है कि हम अचेतन तथा मूल प्रवृत्ति सम्बन्धी व्यवहार को कम महत्व दें परन्तु इसका अर्थ यह है कि इन दोनों का हमें अधिकाधिक ज्ञान हो। सामाजिक पहलुओं के अचेतन महत्व को समझा जाय तथा दिन प्रतिदिन की मान्य क्रियाओं में अचेतन के व्यावहारिक प्रयासों को समझा जाय। सामाजिक कार्यकर्ता को चाहिए कि वह केवल स्थानान्तरण, अवरोध तथा अहं सुरक्षात्मक प्रयत्नों पर ही केवल ध्यान न दे बल्कि सावधानीपूर्वक सामाजिक सूचनाओं को भी एकत्र करे। उसको अहं की सम्पूर्ण गतिविधि का ज्ञान होना आवश्यक होता है। अब कार्यकर्ता इस ओर काफी ध्यान देने लगे हैं जिसके कारण मनोविश्लेषणात्मक ज्ञान तथा आधुनिक वैयक्तिक कार्य में सहयोग बढ़ता जा रहा है। वैयक्तिक कार्यकर्ता सदैव सेवार्थी के विषय में जानने का प्रयत्न करता है कि वह किस प्रकार से अपनी वर्तमान स्थिति का प्रत्यक्षीकरण करता है, किस प्रकार अपने पूर्व अनुभव का उपयोग करता है तथा किस प्रकार समस्या समाधान करने का प्रयत्न करता है। वर्तमान समस्या के विषय में सेवार्थी तनावपूर्ण स्थिति होने के कारण, सही प्रत्यक्षीकरण नहीं कर पाता है। अतः कार्यकर्ता यह जानने का प्रयत्न करता है कि सेवार्थी ने किस प्रकार से विगत दिनों में समान

परिस्थितियों का प्रत्यक्षीकरण किया है। कार्यकर्ता इस ज्ञान की उपलब्धि के पश्चात् समस्या समाधान करने की शक्ति की खोज करता है। वह अहं शक्ति का विकास करता है जिससे सेवार्थी समस्या का अधिक प्रभावपूर्ण ढंग से सामना कर सके। अहं कार्यात्मकता का अध्ययन तथा निदान कार्यकर्ता को सेवार्थी के प्रत्यक्षीकरण, विचार तथा ज्ञान को जानने का अवसर प्रदान करता है।

वैयक्तिक कार्यकर्ता सेवार्थी की सम्प्रेरणाओं को भी जानने का प्रयत्न करता है। वह यह भी जानता है कि सेवार्थी किस प्रकार अपनी समस्या का समाधान करना चाहता है। यदि सेवार्थी की सम्प्रेरणा शक्ति अधिक क्षीण होती है तो वह समस्या समाधान में अपनी कोई भी रुचि नहीं प्रकट करता है। इसके अतिरिक्त यदि संघर्षात्मक सम्प्रेरणाएं होती हैं तो सेवार्थी भ्रमित रहता है और वह निश्चय नहीं कर पाता है कि किस प्रकार समस्या समाधान सम्भव हो। जब तक सेवार्थी में तनाव, चिन्ता तथा संघर्ष बना रहता है तब तक वह उचित प्रत्यक्षीकरण नहीं कर पाता है। वैयक्तिक कार्यकर्ता इन बाधाओं को दूर कर सेवार्थी के अहं को सुदृढ़ करता है। वह सेवार्थी से वर्तमान स्थिति में संतुलन बनाये रखने की शक्ति का विकास करता है जिससे सेवार्थी स्वयं समस्या समाधान कर लेता है।

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के द्वारा सेवार्थी की सामाजिक दक्षता एवं योग्यता का विकास करके दिन प्रतिदिन के जीवन में संतोष प्राप्त कराने का प्रयत्न किया जाता है। सेवार्थी को प्रायः सम्बन्धों की समस्या होती है। उसकी इस समस्या के अतिरिक्त सामाजिक समायोजन की भी समस्या होती है। इस समस्या का विकास व्यक्ति में सामाजिक कार्यात्मकता की कमी के कारण होता है। आधुनिक वैयक्तिक सेवा कार्य का विश्वास है कि व्यक्ति में समस्या होती है। इस समस्या का विकास व्यक्ति में सामाजिक कार्यात्मकता की कमी के कारण होता है। आधुनिक समाज कार्य का विश्वास है कि व्यक्ति में समस्या समाधान करने की अयोग्यता का कारण निम्न कारकों में से किसी भी कारक की कमी हो सकती है।

(1) उचित तरीकों द्वारा समस्या पर कार्य करने की सम्प्रेरणा की कमी।

(2) उचित तरीकों द्वारा समस्या पर कार्य करने की क्षमता की कमी।

(3) अवसरों (साधनों व तरीकों) की कमी।

उपर्युक्त विश्वास के आधार पर वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता निम्न कार्य करता हैः-

(1) सेवार्थी की सम्प्रेरणा में परिवर्तन लाने के लिए दिशा निर्देशित करता है, शक्ति प्रदान करता है तथा अनुकूल तरीकों के आधार पर प्रयोग करने को प्रोत्साहन देता है। वह सेवार्थी की अयोग्यता की चिन्ता को कम करके आलम्बन तथा सुरक्षा प्रदान करता है जिससे अहं सुरक्षात्मक प्रयत्नों में कमी आती है। पारितोष की आशा में वृद्धि होती है जिससे कार्य में संलग्न अहं शक्ति बल के साथ कार्य करती है।

(2) सेवार्थी की मानसिक, सांवेगिक तथा क्रियात्मक क्षमताओं का ज्ञान कराकर उनका उपयोग समस्या समाधान के लिए करता है। इस कार्य के अन्तर्गत कार्यकर्ता अहं के कार्यों, प्रत्यक्षीकरण, भावना, ज्ञान, चयन, निर्णय तथा क्रिया को समस्या समाधान के लिए अवसर प्रदान करता है।

(3) कार्यकर्ता उन साधनों, स्रोतों तथा तरीकों को प्रदान करता है जो समस्या समाधान के लिए आवश्यक होते हैं।

4.4 अहम् की प्रमुख विशेषताएँ

1. यह व्यक्तित्व का चेतन भाग है।
2. यह तार्किक होता है।

3. इसका सम्बन्ध वास्तविकता से होता है।

4. ये अनुभव से विकसित होती हैं।

5. अचेतन मन की इच्छायें प्रशस्त करता है।

6. यह समायोजन का मार्ग प्रशस्त करता है।

इड तथा अहं में प्रमुख अन्तर यह है कि इड केवल मस्तिष्क के विषयात्मक वास्तविकता पर आधारित होता है जबकि अहम् मस्तिष्क की वस्तु तथा बाह्य स्थिति में अन्तर स्पष्ट करता है।

अहं द्वितीयक प्रक्रिया है जिसका तात्पर्य यथार्थ को ऐसी कार्य योजना के द्वारा प्राप्त किया जाये जिसका विकास तर्क द्वारा हो। इसे समस्या को सुलझाना या विचार करना कहते हैं।

अहं की ऊर्जा नहीं होती है। विवेक स्मरण, निर्णय चिन्तन आदि द्वारा वह कार्य करता है। तनाव से मुक्ति पाने के लिए अहं की आवश्यकता होती है। बिम्ब तथा यथार्थ भेद करना होता है। जब किसी विषय का विचार विषय के अनुकूल होता है तो विचार और वस्तु में तादात्म्य स्थापित हो जाता है। तादात्म्य की प्रक्रिया के फलस्वरूप ऊर्जा को बिम्ब में न खर्च करके बाह्य जगत में उचित प्रतिबिम्ब की ओर मोड़ दी जाती है। यहाँ पर इच्छापूर्ति के स्थान पर तार्किक चिंतन आ जाता है। ऊर्जा का इड से संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं में आ जाना अहं की विकास का प्रथम चरण है।

4.5 सारांश

प्रस्तुत इकाई में वैयक्तिक समाज कार्य के अहम् का वर्णन किया गया है। इसके अर्थ तथा परिभाषाओं का विश्लेषण किया है। विभिन्न विद्वानों के अलग-अलग तर्कों को प्रस्तुत किया गया है। इसके पश्चात् वैयक्तिक समाज कार्य में अहम् के महत्व को दर्शाया गया है तथा अंत में अहम् की विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया है।

4.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. वैयक्तिक समाज कार्य में अहम् के अर्थ एवं परिभाषाओं का वर्णन कीजिए।

2. वैयक्तिक समाज में अहम् को समझाइये।

3. अहम् की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

सिंह, डी॰ के॰, भारत में समाज कल्याण प्रषासन: अवधारणा एवं विषय क्षेत्र, रायल बुक डिपो लखनऊ, वर्ष 2011.

सिंह, सुरेन्द्र, वर्मा, आर॰ बी॰ एस॰, भारत में समाज कार्य का क्षेत्र, रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.

मिश्रा, पी॰ डी॰, मिश्रा, बीना, व्यक्ति और समाज, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2007.

सिंह, डी॰ के॰, भारती, ए॰ के॰, सोषल वर्क कान्सेप्ट ऐंड मैथड्स, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.

सिंह, सुरेन्द्र, मिश्र, पी॰ डी॰, समाज कार्य- इतिहास, दर्शन एवं प्रणालियाँ, रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2006.

सिंह, डी॰ के॰, पालीवाल, सौरभ, मिश्र, रोहित, मानव समाज, संगठन एवं विघटन के मूल तत्व, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2010.

मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक सामूहिक कार्य, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, वर्ष 1977.

मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, वर्ष 1985.

इकाई-5

व्यक्ति व अनुकूलन

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 व्यक्ति व अनुकूलन

5.3 मानव व्यवहार के प्रमुख सिद्धान्त

5.4 व्यवहार का उद्देश्य

5.5 सारांश

5.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

5.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के उपरांत आप –

1.व्यक्ति के व्यवहार के विषय में अवगत हो जायेंगे।

2.मानव व्यवहार के प्रमुख सिद्धान्तों एवं उद्देश्यों का वर्णन कर सकेंगे।

3. तत्पश्चात् व्यवहार के प्रभाव तथा व्यक्तित्व के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

4. दबाव के महत्व तथा व्यक्ति व अनुकूलन के विषय पर चर्चा कर सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में व्यक्ति व अनुकूलन का वर्णन किया गया है। व्यवहार का तात्पर्य व्यक्ति के वाह्य पर्यावरण के प्रति किये गये प्रयुत्तर से है। व्यक्ति प्रतिउत्तर समायोजन करने के लिए करता है। प्रत्येक क्षण व्यक्ति को वाह्य प्रेरक, आवश्यकताएं तथा सामाजिक प्राणी प्रभावित करते हैं, जिसके कारण उस पर दबाव पड़ता है। फलतः उसे तनाव एवं चिन्ता की अनुभूति होती है। इस चिंता को कम करने तथा दबाव के तनाव को हटाने के लिए व्यक्ति जो कार्य करता है, उसे उस व्यक्ति का व्यवहार कहा जाता है। फ्रायड ने जीवन शक्ति, अवरोध व्यवस्था, संगठन व नियंत्रण शक्तियों को इदम्, अहम् तथा पराहम् कहा है। जब इन शक्तियों के कार्यों पर व्यवधान उत्पन्न हो जाता है अथवा असंतुलन की स्थिति आ जाती है जब व्यवहारिक विघटन होता है।

5.2 व्यक्ति व अनुकूलन

जो व्यक्ति मनोसामाजिक तथा सांवेगिक सहायता के लिए संस्था में आता है वह व्यक्ति चाहे पुरुष हो, स्त्री हो अथवा बालक हो, सेवार्थी कहा जाता है। यद्यपि सामाजिक संस्था में आने वाला सेवार्थी अन्य व्यक्तियों के समान ही होता है। उसकी भाषा तथा संस्कृति प्रायः अन्य आने वाले व्यक्तियों के समान होती है परन्तु कुछ भिन्नताएं भी होती हैं। भिन्नताएं उस समय परिलक्षित होती हैं जब हम सेवार्थी को एक व्यक्ति के रूप में देखने का प्रयत्न करते हैं। उसका व्यक्तित्व भिन्न होता है, उसके सांवेगिक तथा मानसिक गुण भिन्न होते हैं। उसका व्यक्तित्व भिन्न होता है, उसके सांवेगिक तथा मानसिक गुण भिन्न होते हैं। परन्तु प्रत्येक स्थिति में वह पूर्ण अन्तःक्रिया करता है। समस्या उसकी चाहे सामाजिक हो, मनोवैज्ञानिक हो अथवा सांवेगिक हो वह प्रत्येक स्थिति में शारीरिक मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक विशेषताओं के साथ प्रतिक्रिया करता है। शारीरिक, भौतिक, सामाजिक, अनुभव, प्रत्यक्षीकरण, आकांक्षाएं, इच्छाएं आदि संयुक्त होकर व्यक्ति को प्रभावित करती हैं। यह शारीरिक मनोवैज्ञानिक-सामाजिक विगत वर्तमान तथा भविष्य का चक्र व्यक्ति के साथ सभी स्थितियों में रहता है और इसके प्रभाव से पृथक् नहीं हो सकता है।

वैयक्तिक कार्यकर्ता सेवार्थी के सम्बन्ध में जो जानकारी चाहता है उसका सम्बन्ध उसकी समस्या से अधिक होता है। वह उन तथ्यों की खोज करता है जिनसे समस्या समझने, उसके निदान करने तथा समाधान करने में सहायता मिलती है। समस्या की प्रकृति ही निश्चित करती है कि किस प्रकार के ज्ञान की कार्यकर्ता को आवश्यकता है तथा किस प्रकार सेवार्थी सामाजिक अनुकूलन पुनः प्राप्त करने में सफल हो सकता है।

5.2.1 व्यवहार

व्यवहार का तात्पर्य व्यक्ति के बाह्य पर्यावरण के प्रति किये गये प्रत्युत्तर से है। व्यक्ति प्रत्युत्तर समायोजन करने के लिए करता है। प्रत्येक क्षण व्यक्ति को आन्तरिक तथा बाह्य प्रेरक, आवश्यकताएं तथा सामाजिक पर्यावरण प्रभावित करता है जिसके कारण उस पर दबाव पड़ता है। फलतः उसे तनाव एवं चिन्ता की अनुभूति होती है। इस चिन्ता को कम करने तथा दबाव के तनाव को हटाने के लिए व्यक्ति जो कार्य करता है उसे उस व्यक्ति का व्यवहार कहा जाता है। इस प्रकार व्यवहार के अन्तर्गत एक समय में व्यक्ति द्वारा किये गये समस्त संवेग, विचार, दृष्टिकोण तथा कार्य आते हैं। व्यक्ति के सामाजिक व्यवहारों के अन्तर्गत वे सभी कार्य आते हैं जिनका समाज का सदस्य होने और सामाजिक क्रियाओं में भाग लेने के कारण व्यक्ति से आशा की जाती है।

व्यक्ति क्यों व्यवहार करता है?

व्यक्तित्व संगठन की विशेषताओं के कारण व्यक्ति के समस्त व्यवहार संचालित होते हैं। फ्रायड के अनुसार व्यक्तित्व के तीन अंग या तीन शक्तियां हैं जो अन्तर्सम्बन्धित होकर कार्य करती हैं तथा व्यवहार करने के लिए बाध्य करती हैं। ये शक्तियाँ हैं - (1) इदम्, (2) अहम्, (3) पराहम्। इदम् का स्वरूप अचेतन तथा पशुवत है जो आवश्यकताओं को मूल रूप में संतुष्ट करना चाहती है। अहं वास्तविकता को बताता है तथा इच्छाओं पर नियन्त्रण रखता है। पराहम् व्यक्ति में आदर्श का निर्माण करता है। इस प्रकार व्यक्ति के अन्तर्गत इदम् द्वारा उत्पन्न हुई असामाजिक तथा असांस्कृतिक इच्छाओं पर अहं द्वारा नियन्त्रण किया जाता है तथा पराहम् द्वारा व्यक्ति को समाज के आदर्शों अथवा मूल्यों के अनुकूल चलने के लिए प्रेरित किया जाता है।

5.3 मानव व्यवहार के प्रमुख सिद्धान्त

मानव व्यवहार अनेक सिद्धान्तों पर आधारित है। यहां पर कुछ प्रमुख सिद्धान्तों या आधारभूत तथ्यों का उल्लेख किया जा रहा है:

1. व्यवहार अर्थ पूर्ण होते हैं।
2. व्यक्ति की मनोवैज्ञानिक स्थिति व्यवहार को प्रभावित करती है।
3. विगत अनुभव व्यवहार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
4. सामाजिक पृष्ठभूमि व्यवहार के ढंग को प्रभावित करती हैं।
5. वंश परम्परा पर विशेषताओं का प्रभाव पड़ता है।
6. व्यवहार चेतन व अचेतन दोनों प्रकार का होता है।
7. वर्तमान स्थितियों का प्रभाव व्यवहार पर पड़ता है।
8. भविष्य की आशाओं का भी व्यवहार में महत्वपूर्ण स्थान है।
9. सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों का व्यवहार व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करता है।
10. कभी-कभी एक निश्चित आवश्यकता और लक्ष्य द्वारा परिचालित व्यवहार नवीन तथ्यों को जानकारी के पश्चात् बदलता भी रहता है।

5.4 व्यवहार का उद्देश्य

व्यक्ति के व्यवहार का अर्थ एवं उद्देश्य संतोष प्राप्त करना, भग्नाशा को दूर करना एवं समस्या समाधान करना तथा कार्यात्मक संतुलन बनाना है। व्यक्ति जीवन के प्रारम्भिक काल से ही अपनी आवश्यकताओं को पूरा करना चाहता है। प्रारम्भ में ये आवश्यकताएं प्राथमिक होती हैं जैसे भोजन की आवश्यकता, शारीरिक व मानसिक भूख शांत करने के लिए होती है ,सुरक्षा की आवश्यकता के कारण धन अर्जन, प्रेम, व रुचियाँ उत्पन्न होती हैं। प्रत्येक व्यक्ति की प्रस्थिति तथा पर्यावरण भिन्न-भिन्न होने के कारण उसके प्रयास तथा संतुष्टि का स्तर भिन्न-भिन्न होता है। उसका व्यवहार अपने विचारों, रुचियों, भावनाओं तथा क्रियाओं के अनुरूप होता है।

वैयक्तिक कार्यकर्ता के लिए आवश्यक होता है कि वह सेवार्थी के सूक्ष्म से सूक्ष्म व्यवहार का अवलोकन करे। वह यह समझे कि सेवार्थी क्या अनुभव कर रहा है, क्या सोच रहा है, क्या क्रियाएं कर रहा है, विगत जीवन में उसने किस प्रकार से समस्याओं का समाधान किया है, विभिन्न स्थितियों में वह किस प्रकार प्रत्युत्तर करता है, उसका वास्तविकता से कितना सम्बन्ध है आदि । ये बातें जान लेने के पश्चात ही कार्यकर्ता सेवार्थी की सहायता कर सकता है। विगत जीवन में इच्छाओं की संतुष्टि से सम्बन्धित किये गये प्रत्युत्तर एवं व्यवहार जो सफलता एवं असफलता को प्रदर्शित करते हैं वे भविष्य के प्रत्युत्तर एवं व्यवहार करने के तरीके निश्चित करते हैं। अतः कार्यकर्ता को सेवार्थी के पूर्व प्रत्युत्तरों को जानना आवश्यक होता है।

5.4.1 व्यवहार का प्रभाव

व्यक्ति का व्यवहार उसका हित करने में प्रभावकारी है या नहीं यह मूल रूप से उसके व्यक्तित्व संरचना की कार्यात्मकता द्वारा निश्चित होता है। मानव व्यक्तित्व में निम्नलिखित तीन शक्तियाँ पायी जाती हैं:-

1. **जीवन शक्ति,** जिससे व्यक्ति शक्ति प्राप्त करता है तथा संतुष्टि की ओर प्रयास करता है।
2. **अवरोध व्यवस्था**, स्वतः एवं ऐच्छिक होती है । इसके द्वारा इच्छाओं पर रोक लगती है। इच्छाएं तथा उनके संतुष्टि के ढंग परिवर्तित होते रहते हैं।
3. **संगठित व नियन्त्रण** कार्य जो समझौते को प्रभावित करते हैं। व्यक्ति क्या चाहता है तथा उसमें कितनी क्षमता है इसमें संतुलन होना आवश्यक होता है। इन शक्तियों के द्वारा वैयक्तिक व सामाजिक संतुलन को बनाये रखा जाता है।

फ्रायड ने इन शक्तियों को इदम्, अहम् तथा पराहम् कहा है। जब इन शक्तियों के कार्यों पर व्यवधान उत्पन्न हो जाता है अथवा असंतुलन की स्थिति आ जाती है जब व्यवहारिक विघटन होता है।

अचेतन सम्प्रेरणाएं केवल इदम् की मूल प्रवृत्ति के प्रभाव से ही कार्य नहीं करती हैं| व्यक्ति का पराअहम् भी युवावस्था तक अचेतन हो जाता है, परन्तु उसका कुछ भाग अवश्य चेतन में रहता है। व्यक्ति चेतन के प्रति उस समय अधिक सजग होता है जब वह कुछ करना चाहता है परन्तु वह समाज द्वारा मान्य नही होता है। उदाहरण के लिए एक विद्यार्थी परीक्षा दे रहा है। उसने कभी भी दूसरे की न तो नकल की है और न ही अनुचित साधनों का उपयोग किया है क्योंकि ऐसा करना वह नैतिक अपराध मानता है तथा ऐसा करने से अप्रतिष्ठा अनुभव करता है। परन्तु यदि उसे परीक्षा में एकाएक कठिन प्रश्न-पत्र मिल जाता है जिसका उत्तर उसे नहीं आता है। उस समय उसका इदम् कहता हे कि अब उसकी प्रतिष्ठा जाने वाली है| उसका जीवन खतरे में है (अर्थात् परीक्षा में फेल हो जायेगा) अब वह चेतन के प्रति जागरूक होता है क्योंकि प्रश्न पत्र का उत्तर न जानने से उसे क्लेश भी होता है। चेतन कहता है कि अनुचित साधनों का उपयोग न करो, आत्म सम्मान बनाये रखो, सफलता असफलता पर ध्यान न दो या आप नकल में पकड़े गये तो क्या होगा? इस प्रकार चेतन की ये तीन भिन्न-भिन्न आवाजें आती हैं। प्रथम पैतृक सीख का प्रभाव, दूसरा स्वयं का प्रभाव तथा तीसरा मस्तिष्क के चेतन भाग का प्रभाव क्योंकि वह परिणाम जानता है तथा दण्ड के भय से दूर रखना चाहता है परन्तु नकल करना गलत नहीं मानता। विद्यार्थी में आन्तरिक संघर्ष प्रारम्भ हो जाता है। अहं संघर्ष को दूर करने का प्रयास करता है। अहं यदि इदम् का पक्ष लेता है तो अनेक प्रकार से अनुकूल कार्य को उचित ठहराने का प्रयास करता है। जैसे- सभी नकल करते हैं, प्रश्न विषय से पृथक है, नकल तो तब होती है जब पूरा का पूरा उत्तर नकल से दिया जाये, केवल कुछ प्वाइंट देखना नकल नहीं है आदि। अहं शक्तिशाली होकर ऐसा करने के लिए व्यक्ति को बाध्य करता है और उसे उचित ठहरा कर व्यक्ति को संतोष दिलाता है। परन्तु यदि पराअहं शक्तिशाली होता है तो कार्य के पश्चात् अपराध की भावना धीरे-धीरे जाग्रत हो जाती है। पराहम् बालक में आत्मग्लानि तथा पश्चाताप की भावना को विकसित करता है।

5.4.2 व्यक्तित्व

व्यक्तित्व की संरचना तथा कार्यात्मकता की उत्पत्ति वंशानुगत तथा शारीरिक विशेषताओं से होती है तथा जो सदैव भौतिक मनोवैज्ञानिक व सामाजिक पर्यावरण एवं वैयक्तिक अनुभवों से निरन्तर अन्तर्क्रिया करता है।

वंशानुगत विशेषताएं व्यक्तित्व की विशेषताओं को निर्धारित करती हैं, ऐसा अनेक परीक्षणों तथा अनुभवों से सिद्ध किया जा चुका है। प्रारम्भिक अवस्था में वंशानुगत गुण प्रभावकारी होते हैं परन्तु आगे चलकर

पर्यावरण अपना प्रभाव डालता है। परिवार, स्कूल, पड़ोस, खेल कूद के साथी, धार्मिक, आर्थिक तथा राजनैतिक संस्थाएं व्यक्तित्व पर अत्यधिक प्रभाव डालती हैं। परन्तु व्यक्तित्व का विकास कभी भी स्थिर नहीं होता है। उसका वर्तमान स्थितियों-भौतिक, मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक से सम्पर्क बना रहता है और निरन्तर परिवर्तन होता रहता है।

वैयक्तिक कार्यकर्ता के लिए सेवार्थी के व्यक्तित्व की विशेषताओं को जानना आवश्यक होता है।

जीवन के किसी भी स्तर पर व्यक्ति न केवल प्रकृति तथा पोषण से विकसित होता है बल्कि वर्तमान तथा भविष्य से भी प्रभावित होता है तथा विकास की स्थिति में रहता है।

बचपन की अवस्था में सीखने की क्षमता अधिक होती है। परन्तु युवावस्था में कम हो जाती है, शरीर का बढ़ाव कम हो जाता है तथा प्रत्युत्तर में अन्तर आता जाता है। कुछ प्रत्युत्तर पुरस्कृत होने के कारण व्यक्तित्व का अंग बन जाते हैं। प्रतिक्रिया का एक रूप हो जाता है और प्रत्येक व्यक्ति का एक ढंग, तरीका व कार्य पद्धति विकसित हो जाती है। परन्तु इन विशेषताओं के दृढ़ीकरण होने पर भी जीवन के अन्तिम क्षणों तक परिवर्तन सम्भव होता है। यह परिवर्तन प्रत्यागमन या विघटन, उन्नति तथा विकास, रचनात्मक तथा ध्वन्सात्मक दोनों प्रकार का हो सकता है। यह तथ्य दिन प्रतिदिन के कार्यों से प्रकट होता है। हम चाहे बीमार हों या अच्छे, प्रसन्न हों या अप्रसन्न, खुश हों या दुखी दोनों की स्थितियों में न केवल पूर्व अनुभव का प्रभाव होता है बल्कि वर्तमान जो अनुभव करते हैं उसका भी प्रभाव पड़ता है। अतः प्रत्युत्तर में अन्तर आ जाना स्वाभाविक हो जाता है। पुराने प्रत्युत्तरों में सुधार होता है तथा उनका पुनर्गठन भी होता है। अतः यह सिद्ध हो जाता है कि व्यक्तित्व पर न केवल स्थितियां बल्कि वर्तमान अनुभव भी अपना महत्वपूर्ण प्रभाव डालते हैं। अतः कार्यकर्ता के लिए आवश्यक होता है कि वह सेवार्थी की वर्तमान जीवन पद्धति व स्थितियों से अवगत हो। उन वास्तविकताओं का ज्ञान प्राप्त करे जिनसे सेवार्थी परेशान हो रहा है। वह इसको भी समझ ले कि इन वास्तविकताओं में कितना परिवर्तन हो सकता है जिससे कि उपचार प्रक्रिया होने पर सांवेगिक असंतुलन उत्पन्न न हो जाय।

अतः वैयक्तिक कार्यकर्ता के लिए आवश्यक होता है कि वह सेवार्थी की वर्तमान जीवन पद्धति व स्थितियों से अवगत हो। उन वास्तविकताओं से अवगत हो जिनसे सेवार्थी परेशान हो रहा है।

व्यक्ति पूर्व अनुभव से प्रत्यावर्तित होता है तथा वर्तमान से प्रभावित होता है परन्तु भविष्य का भी काफी सीमा तक प्रभाव प्रभाव पड़ता है। हम क्या सोचते हें, हम क्या कर सकते हैं, हम किस प्रकार अनुभव करते हैं, हम क्या उद्देश्य निर्धारित कर रहे हैं, भविष्य की क्या आशाएं हैं, आकांक्षाएं क्या हैं, आदि का भी प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार वर्तमान की संरचना भविष्य के रूप पर निर्भर होती है।

वैयक्तिक कार्यकर्ता के लिए आवश्यक होता है कि वह जाने कि सेवार्थी की सहायता की जाती सकती है अथवा नहीं, कहां तक सहायता की जा सकती है, भविष्य में सेवार्थी की क्या आशाएं हैं तथा वह क्या चाहता है।

5.4.3 प्रस्थिति तथा भूमिका

व्यक्ति का वर्तमान व्यवहार तथा भविष्य में पविर्तित होने वाला व्यवहार उन आकांक्षाओं द्वारा निर्मित एवं निर्धारित होता है जिसको उसने तथा उसकी संस्कृति ने उसकी स्थिति में तथा उन सामाजिक भूमिकाओं में जिनको वह पूरी करता है, पिरोया है।

प्रत्येक व्यक्ति की स्थिति तथा भूमिका होती है। यह एक नहीं अनेक होती हैं। उसकी स्थिति पर लिंग, आयु, आर्थिक वर्ग आदि का प्रभाव पड़ता है। भूमिकाओं में वृद्धि संबंधों की वृद्धि के साथ-साथ होती है परन्तु कुछ भूमिकाएं सदैव प्राथमिक रहती हैं जैसे माता-पिता की भूमिका, पति या पत्नी की भूमिका आदि। व्यक्ति का व्यवहार भूमिका पूरा करने तथा प्रत्युत्तर में दूसरों की प्रतिक्रियाओं से भी सम्बन्धित होता है। उदाहरण के लिए पिता की भूमिका में व्यक्ति बच्चों के प्रति उत्तरदायित्व पूरा करता है परन्तु आशा भी करता है कि बच्चे भी उसके प्रति अनुकूल प्रत्युत्तर करें।

सांवेगिक व मानसिक विघटन होने की अवस्था के अतिरिक्त प्रत्येक व्यक्ति की भूमिकाएं तथा स्थितियां होती हैं इसको अहं स्वीकार करता है। भूमिका पूरी न होने पर व्यक्ति अपूर्णता व ग्लानि अनुभव करता है तथा सामाजिक स्तर गिरा हुआ समझने लगता है। उसमें भग्नाशा की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। संस्था में आने वाला व्यक्ति अपनी किसी प्रमुख भूमिका में असमायोजित होता है। अतः कार्यकर्ता के लिए आवश्यक है कि वह सेवार्थी की सभी भूमिकाओं से अवगत हो।

5.4.4 दबाव

व्यक्ति जो सेवार्थी के रूप में आता है सदैव दबाव की स्थिति में होता है।

समस्या की प्रकृति कुछ भी हो-पर्यावरण का दबाव या असफलता, आन्तरिक संघर्ष, सामाजिक भूमिकाओं से उत्पन्न भग्नाशा, उद्देश्य पूरा करने के मार्ग में अनेक बाधाएं आदि, सेवार्थी सदैव मानसिक दबाव की स्थिति में रहता है। सेवार्थी पर दबाव दो प्रकार का होता है-

(अ) सेवार्थी जिसको स्वयं समस्या मानता है तथा तनाव एवं दबाव अनुभव करता है|

(ब) असमर्थता जिससे तनाव बढ़ता है।

अहं की शक्ति समस्या समाधान करने में कमजोर हो जाती है तथा अस्थायी रूप से बाधित हो जाता है। चूंकि व्यक्ति एक शारीरिक मनो-सामाजिक संगठन है अतः जब किसी एक अंग पर प्रभाव पड़ता है तो सभी अंग प्रभावित होते हैं। अतः वैयक्तिक कार्यकर्ता को सेवार्थी की शारीरिक व मनोसामाजिक स्थिति का ज्ञान आवश्यक होता है।

वैयक्तिक समाज कार्य में सेवार्थी की अनुकूलन प्रविधियों की शक्तियों, क्षमताओं, प्रभावों आदि का महत्वपूर्ण स्थान होता है। सेवार्थी में अनुकूलन करने की कितनी शक्ति एवं क्षमता है, यह निश्चित करती है कि सेवार्थी सामाजिक पर्यावरण से समायोजन करने में कहाँ तक सफल होगा। तनावपूर्ण स्थिति को वह किस प्रकार सुलझाने का प्रयास करता है तथा अपने प्रत्यनों को किस प्रकार परिवर्तित करता है। यह निश्चित करता है कि उसको कठिनाई एवं समस्या को कितनी जल्दी दूर किया जा सकेगा। वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता यह जान लेने के पश्चात् दो प्रकार के प्रयत्न करता है। वह या तो व्यक्ति की आन्तरिक शक्तियों को सम्बल प्रदान करके अनुकूलन को सम्भव बनाता है या फिर सामाजिक स्थिति में ही परिवर्तन का प्रयास करता है। व्यक्ति तनावपूर्ण स्थिति से अनुकूलन तीन प्रकार से करता हैः-

(1) अभ्यस्त एवं पूर्व निश्चित तरीकों के उपयोग द्वारा।

(2) संघर्ष, समानता अथवा कल्पना की उड़ान द्वारा।

(3) उदासीनता, मानसिकता उन्मुखता, प्रत्याहार, अगतिशीलता अथवा अतिसक्रियता द्वारा।

व्यक्ति सर्वप्रथम अपनी समस्या का समाधान अपने पूर्व तरीकों एवं अभ्यस्त प्रविधियों द्वारा करने का प्रयत्न करता है। यदि इस प्रकार उसकी समस्या का समाधान नहीं होता है और कठिनाई से प्रगतिगमन करता है। इस स्थिति में वह या तो संघर्ष करता है या अपने को उस स्थिति के अनुकूलन बना लेता है अथवा उस स्थिति से दूर होने का प्रयत्न करता है। यदि ये भी तरीके असफल हो जाते हैं तो वह समस्या के प्रति उदासीन होकर मानसिक विकार के लक्षण उत्पन्न कर लेता है।

यदि सेवार्थी को समस्या के विषय में ज्ञात हो जाता है कि पूर्व निश्चित तरीकों के द्वारा समस्या को किसी न किसी सीमा तक अवश्य सुलझाया जा सकता है तो उसे तनावपूर्ण स्थिति का अधिक आभास नहीं हो पाता है। वह अपने अभ्यस्त तरीकों द्वारा स्थिति को कष्टकर होने से बचाता रहता है। वह अपने पूर्व निश्चित अनुकूलन के तरीकों में परिवर्तन की माँग को अधिक प्रत्यारोधों के साथ अस्वीकार करता है। उसकी यह धारणा होती है कि वह अपने संतुलन के जिन तरीकों द्वारा प्राप्त करने में सफल हुआ है उनमें परिवर्तन लाने की किसी प्रकार की आवश्यकता नहीं है। अतः वह अपने अभ्यस्त अनुकूलन के तरीकों के लिए सुरक्षात्मक प्रयत्न करता है। वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता यदि इनमें परिवर्तन लाना ही चाहता है तो उसे बहुत ही अधिक सहयोगिक सम्बन्ध का विकास करना होता है। जब अभ्यस्त अनुकूलन के तरीके समस्या-समाधान में अप्रभावी हो जाते हैं तो व्यक्ति संघर्ष, समस्या अथवा उड़ान का सहारा लेता है। परन्तु ये तरीके व्यक्ति को स्वतः बिना किसी पृष्ठभूमि के प्राप्त नहीं हो जाते हैं। इनका सम्बन्ध व्यक्ति के पूर्व इतिहास से रहता है। जिस प्रकार से वह पूर्व घटनाओं का सामना करता है वही तरीके उसे अधिक उपयुक्त प्रतीत होते हैं। इन तरीकों के विकास को समझने के लिए हमें व्यक्ति के विकास का ज्ञान प्राप्त करना होगा। वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता को यह जानना होगा कि किस प्रकार वह सन्तुलन व्यवस्था को बनाये रखने के लिए प्रतिगमित हुआ है। यद्यपि व्यक्ति के विकास को समझने के लिए अत्यन्त अन्तर्दृष्टि की आवश्यकता होती है।

5.5 सारांश

प्रस्तुत इकाई में व्यक्ति व अनुकूलन की अवधारणा का वर्णन किया गया है। व्यवहार के अर्थ तथा मानव व्यवहार के प्रमुख सिद्धान्तों का अध्ययन कर ज्ञान प्राप्त होता है। व्यवहार के प्रमुख उद्देश्यों में व्यवहार का प्रभाव, व्यक्तित्व, प्रस्थिति तथा भूमिका और दबाव का अध्ययन किया है।

5.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. अनुकूलन क्या है? समझायें|
2. मानव व्यवहार के प्रमुख सिद्धान्तों का वर्णन कीजिए।
3. व्यवहार क्या है? वर्णन कीजिए।
4. व्यवहार के उद्देश्यों को संक्षिप्त रूप से वर्णित कीजिए।

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

सिंह, सुरेन्द्र, मिश्र, पी॰ डी॰, समाज कार्य- इतिहास, दर्शन एवं प्रणालियाँ, रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2006.

सिंह, डी॰ के॰, भारत में समाज कल्याण प्रशासन: अवधारणा एवं विषय क्षेत्र, रायल बुक डिपो लखनऊ, वर्ष 2011.

सिंह, सुरेन्द्र, वर्मा, आर॰ बी॰ एस॰, भारत में समाज कार्य का क्षेत्र, रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.

मिश्रा, पी॰ डी॰, मिश्रा, बीना, व्यक्ति और समाज, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2007.

सिंह, डी॰ के॰, भारती, ए॰ के॰, सोशल वर्क कान्सेप्ट ऐंड मैथड्स, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.

सिंह, डी॰ के॰, पालीवाल, सौरभ, मिश्र, रोहित, मानव समाज, संगठन एवं विघटन के मूल तत्व, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2010.

मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक सामूहिक कार्य, उत्तर प्रदेश, हिन्दी संस्थान, वर्ष 1977.

मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य, उत्तर प्रदेश, हिन्दी संस्थान, वर्ष 1985.

इकाई-6

वैयक्तिक समाज कार्य के सिद्धान्त

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 वैयक्तिक समाज कार्य के सिद्धान्त

6.2.1 वैयक्तीकरण का सिद्धान्त

6.2.2 भावनाओं के उद्देश्यपूर्ण प्रकटन का सिद्धान्त

6.2.3 नियंत्रित सांवेगिक अन्तर्भावितता का सिद्धान्त

6.2.4 स्वीकृति का सिद्धान्त

6.2.5 अनिर्णायक मनोवृत्ति का सिद्धान्त

6.2.6 सेवार्थी आत्मनिश्चय का सिद्धान्त

6.2.7 गोपनीयता का सिद्धान्त

6.3 सारांश

6.4 अभ्यासार्थ प्रश्न

6.5 सन्दर्भ ग्रन्थ

6.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

1.वैयक्तिक समाज कार्य के सिद्धान्त को समझ सकेंगे।

2.वैयक्तिक समाज कार्य के सिद्धान्तों में प्रमुखता वैयक्तीकरण के सिद्धान्त तथा भावनाओं के उद्देश्यपूर्ण प्रकटन का वर्णन कर सकेंगे।

3.नियंत्रित सांवेगिक अन्तर्भावितता का सिद्धान्त तथा स्वीकृति के सिद्धान्त को जान सकेंगे।

4. अनिर्णायक मनोवृत्ति के सिद्धान्त एवं सेवार्थी आत्म निश्चय के सिद्धान्त तथा गोपनीयता के सिद्धान्त का वर्णन कर सकेंगे।

6.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में वैयक्तिक समाज कार्य के सिद्धान्त का वर्णन किया गया है। वैयक्तिक समाज कार्य का उद्देश्य व्यक्ति की सहायता करना है जिससे वह अच्छा समायोजन कर सके। वैयक्तिक समाज कार्य व्यक्ति की सहायता करता है, समस्या समाधान करता है तथा आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। कार्यकर्ता के लिए मानव सम्बंधों की प्रकृति का ज्ञान होना आवश्यक होता है, क्योंकि वह व्यक्तियों से सम्पर्क स्थापित करता है। वैयक्तिक समाज कार्य का उद्देश्य व्यक्ति की सहायता करना है जिससे वह अच्छा समायोजन कर सके। परन्तु ज्ञान की तब तक विशेष उपयोगिता नहीं होगी जब तक वह सम्बन्ध स्थापित करने की निपुणता में दक्ष नहीं होगा। सम्बंधों की घनिष्ठता सिद्धान्तों पर आधारित होती है।

6.2 वैयक्तिक समाज कार्य के सिद्धान्त

वैयक्तिक समाज कार्य एक कला है जिसमें मानव सम्बन्धों के ज्ञान तथा सम्बन्धों की निपुणता का व्यक्ति की क्षमताओं तथा समुदाय के साधनों को क्रियाशील बनाने के लिए उपयोग किया जाता है ताकि वह अन्य लोगों अथवा पर्यावरण के साथ व्यवस्था करने में समर्थ हो सके। इस परिभाषा के अनुसार वैयक्तिक समाज कार्य का उद्देश्य व्यक्ति की 'सहायता करना' है जिससे वह अच्छा समायोजन कर सके। वैयक्तिक समाज कार्य व्यक्ति की सहायता करता है, समस्या-समाधान करता है तथा आवश्यकता की पूर्ति करता है। कार्यकर्ता के लिए मानव सम्बन्धों की प्रकृति का ज्ञान होना आवश्यक होता है क्योंकि वह व्यक्तियों से सम्पर्क स्थापित करता है। 'सम्बन्ध' वह माध्यम होता है जिसके द्वारा कार्यकर्ता व सेवार्थी के बीच मानव प्रकृति के ज्ञान का उपयोग किया जाता है। परन्तु ज्ञान की तब तक विशेष उपयोगिता नहीं होगी जब तक वह सम्बन्ध स्थापित करने की निपुणता में दक्ष नहीं होगा।

''वैयक्तिक समाज कार्य एक कला है जिसमें मानव सम्बन्धों के ज्ञान तथा सम्बन्धों की निपुणता का व्यक्ति की क्षमताओं तथा समुदाय के साधनों को क्रियाशील बनाने के लिए उपयोग किया जाता है ताकि अन्य लोगों अथवा पर्यावरण के साथ व्यवस्था करने में समर्थ हो सके।''

इस परिभाषा के अनुसार वैयक्तिक समाज कार्य का उद्देश्य व्यक्ति की 'सहायता करना' है जिससे वह अच्छा समायोजन कर सके। वैयक्तिक समाज कार्य व्यक्ति की सहायता करता है, समस्या समाधान करता है तथा आवश्यकता की पूर्ति करता है। कार्यकर्ता के लिए मानव सम्बन्धों की प्रकृति का ज्ञान होना आवश्यक होता है क्योंकि वह व्यक्तियों से सम्पर्क स्थापित करता है। 'सम्बन्ध' वह माध्यम होता है जिसके द्वारा कार्यकर्ता व सेवार्थी के बीच मानव प्रकृति के ज्ञान का उपयोग किया जाता है। परन्तु ज्ञान की तब तक विशेष उपयोगिता नहीं होगी जब तक वह सम्बन्ध स्थापित करने की निपुणता में दक्ष नहीं होगा। सम्बन्धों की घनिष्ठता कुछ सिद्धान्तों पर आधारित है जिसका वर्णन अग्रलिखित इकाईयों में किया जा रहा है।

वैयक्तिक समाज कार्य के निम्न प्रमुख सिद्धान्त हैं:-

1. वैयक्तीकरण का सिद्धान्त
2. भावनाओं का उद्देश्यपूर्ण प्रकटन का सिद्धान्त
3. नियंत्रित सांवेगिक अन्तर्भावितता का सिद्धान्त
4. स्वीकृति का सिद्धान्त

5. अनिर्णायक मनोवृत्ति का सिद्धान्त
6. सेवार्थी आत्म निश्चय का सिद्धान्त
7. गोपनीयता का सिद्धान्त

6.2.1 वैयक्तीकरण का सिद्धान्त

व्यक्ति का वास्तविक अर्थ वैयक्तीकरण से ही स्पष्ट होता है। बोइथियस के अनुसार व्यक्ति तार्किक प्रकृति का वैयक्तिक सारतत्व है। मानव प्रकृति जाति में समान होती है लेकिन प्रत्येक व्यक्ति की वैयक्तिक पहचान होती है। प्रत्येक व्यक्ति अपने वंशानुक्रम, पर्यावरण, अन्तर्भूत ज्ञानात्मक क्षमताओं, योग्यताओं आदि में भिन्न होता है। प्रत्येक व्यक्ति को भिन्न-भिन्न अनुभव होते हैं तथा भिन्न-भिन्न आन्तरिक बाह्य उत्तेजक होते हैं। उसके संवेग तथा स्मृतियों, विचारों, भावनाओं तथा व्यवहार को प्रभावित करते हैं। प्रत्येक व्यक्ति की प्रकृति अपनी शक्तियों को विशिष्ट प्रकार से संगठित करके उन्हें निर्देशित करता है जिससे वे दूसरे व्यक्ति की प्रकृति से भिन्न हो जाते हैं।

सन् 1930 में बरजाइना राबिन्सन ने वैयक्तीकरण के सिद्धान्त को वैयक्तिक समाज कार्य के लिए महत्वपूर्ण बताया। मेरी रिचमण्ड ने भी प्रभावपूर्ण वैयक्तिक समाज कार्य के लिए वैयक्तीकरण पर जोर दिया। यह सिद्धान्त प्रत्येक व्यक्ति की विशिष्ट विशेषताओं को समझने पर बल देता है। यद्यपि शारीरिक रूप से सभी व्यक्ति समान होते हैं परन्तु उनकी शारीरिक, मानसिक, सांवेगिक आदि क्षमताओं में अन्तर होता है। जब तक इन विशेषताओं को पृथक-पृथक नहीं समझा जायेगा, तब तक सेवार्थी समस्या का उचित समाधान ढूँढ नहीं सकेगा और न उचित समायोजन स्थापित कर सकेगा। प्रत्येक व्यक्ति को यह अधिकार है कि उसको एक व्यक्ति के रूप में समझा जाय न कि मानव प्राणी के रूप में तथा अन्तरों को महत्व दिया जाय। इसी मूलाधार पर वैयक्तीकरण का सिद्धान्त आधारित है।

आधुनिक वैयक्तिक समाज कार्य सेवार्थी केन्द्रित है। यह व्यक्ति विशेष की समस्या पर निर्भर है। निदान तथा उपचार का कार्य पृथक-पृथक सेवार्थी के लिए पृथक-पृथक होता है। योजना अलग-अलग बनायी जाती है। व्यक्ति व्यक्ति से अलग अलग सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। प्रत्येक सेवार्थी एक व्यक्ति है, प्रत्येक समस्या एक विशिष्ट समस्या है तथा सामाजिक सेवा प्रत्येक सेवार्थी की परिस्थिति के अनुसार होनी चाहिए। समाज कार्य में यद्यपि सामान्य मानव प्रकृति की विशेषताओं का ज्ञान प्रदान किया जाता है साथ ही साथ सामान्य मानव व्यवहारों के तरीकों को बताया जाता है परन्तु यह वैयक्तिकता पर विशेष बल देता है। इस प्रकार के ज्ञान से वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता को विषयगत तथा वस्तुगत विचारों, भावनाओं, समस्याओं तथा कठिनाइयों को समझने में सहायता मिलती है।

इससे स्पष्ट होता है कि व्यक्ति-व्यक्ति में अन्तर होता है। प्रत्येक सेवार्थी भिन्न विशेषताएं रखता है। अतः उसकी आवश्यकताएं भी दूसरों से किसी न किसी रूप में भिन्न होती हैं। अतः वैयक्तिक कार्य सहायता में भी भिन्नता होना अनिवार्य है जिससे व्यक्ति विशेष की सहायता सम्भव हो सके और सेवार्थी अपनी योग्यताओं और स्रोतों को समस्या समाधान के लिए उपयोग में ला सके।

6.2.3 भावनाओं का उद्देश्यपूर्ण प्रकटन का सिद्धान्त

मनुष्य एक तार्किक प्राणी है। उसमें ज्ञान का भण्डार है तथा कार्य करने की इच्छा व अनिच्छा होती है। उसमें पशुवत विशेषताएं जैसे चालक जैसी मूल प्रवृत्तियाँ भी होती हैं। भावनाएं, संवेग, ज्ञानेन्द्रियां अपना-अपना कार्य

करती है। व्यक्ति की ये सभी विशेषताएं संयुक्त होकर कार्य करती है। संवेग व्यक्ति की प्रकृति का अभिन्न अंग है और यह विशेषता पूर्ण व्यक्तित्व विकास के लिए आवश्यक भी है।

मानव जीवन की सबसे बड़ी चुनौती संवेगों को भलीभांति व्यवस्थित रखने की है। कठिनाइयों के समय संवेग व्यक्ति पर आधिपत्य जमा लेते हैं जिसके कारण व्यक्ति नियंत्रण खो देता है। वह अतार्किक मांगों के द्वारा जीवनयापन करना चाहता है। इससे व्यक्तित्व का विघटन होता है और मानसिक विकृतियां उत्पन्न हो जाती हैं।

व्यक्ति की मनोवैज्ञानिक आवश्यकता के अन्तर्गत प्रेम, सुरक्षा, प्रस्थिति, भावनाओं का स्पष्टीकरण, उपलब्धि, आत्म निर्भरता, आवश्यकताएं सम्मिलित हैं। अनुभवों में भाग लेना, समूह की स्वीकृति प्राप्त करना, समूह के तरीकों को व्यवहार का अंग बनाना ये सभी मनोसामाजिक आवश्यकताएं हैं। यदि इन भावनाओं का उचित प्रगटन नहीं होता है तो निराशा उत्पन्न होती है। यद्यपि सभी निराशा की स्थितियाँ हानिकारक नहीं होती है क्योंकि परिपक्वता के लिए निराशा उत्पन्न होना आवश्यक होता है लेकिन निराशा से हानिकारक मनोसुरक्षात्मक उपाय प्रयोग होने लगते हैं परिणामस्वरूप असामान्य व्यावहारिक प्रतिक्रियाएं होने लगती है।

भावनाओं का उद्देश्यपूर्ण प्रकटन का तात्पर्य सेवार्थी को अपनी भावनाओं के स्पष्टीकरण में पूरी छूट देना है। प्रायः नकारात्मक भावनाओं का स्पष्टीकरण नहीं हो पाता है जिसके कारण समस्या को समझना कठिन होता है। वैयक्तिक कार्यकर्ता सेवार्थी की बातों को पूरे ध्यान से सुनता है। वह न तो भावनाओं को स्पष्ट करने में हतोत्साहित करता है और न खंडन करता है। वह जहां आवश्यक होता है वार्तालाप का रूख बदलने में सहायता करता है जिससे कि उपचारात्मक प्रक्रिया लाभप्रद सिद्ध हो सके। भावनाओं का स्पष्टीकरण न केवल स्वीकृति के लिए आवश्यक है बल्कि चिकित्सा, सम्बन्ध, सहयोग, संस्था के स्रोतों के लिए भी आवश्यक है।

6.2.3 नियंत्रित सांवेगिक अन्तर्भावितता का सिद्धान्त

प्रत्येक सम्प्रेषण की द्विमुखी प्रक्रिया है। जब एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से कुछ कहता है तो उससे भी प्रत्युत्तर चाहता है। यदि वह व्यक्ति कोई प्रत्युत्तर नहीं करता है तो सम्प्रेषण की अरुचि प्रकट होती है। फलतः संचार प्रक्रिया काम नहीं करती है। सामान्य रूप से सम्प्रेषण की विषयवस्तु को तीन श्रेणियों में वर्गीकृत कर सकते हैं: केवल विचार, केवल भावनाएं तथा विचार एवं भावनाएं दोनों। जब व्यक्ति स्टेशन पर जाकर पूछताछ खिड़की पर किसी गाड़ी के जाने का समय पूछता है इसका तात्पर्य वह केवल विचार सम्प्रेषित कर रहा है। वह केवल सूचना प्राप्त करना चाहता है तथा वास्तविक तथ्यों की आशा करता है। जब पति या पत्नी की मृत्यु पर किसी सम्बधी से दुख दर्द बताता है, इसका तात्पर्य वह भावनाओं को सम्प्रेषित कर रहा है।

वैयक्तिक समाज कार्य में सम्प्रेषण की विषयवस्तृ प्रायः विचार तथा भावनाओं का मिश्रण होता है। विषयवस्तु की प्रकृति कई कारकों पर निर्भर करती है। जैसे-सेवार्थी की समस्या, संस्था के कार्य, सेवार्थी की आवश्यकताएं तथा भावनाएं, साक्षात्कार से सेवार्थी के परिवर्तित होने वाले विचार एवं धारणाएं, वैयक्तिक कार्यकर्ता का उद्देश्य। अध्ययन, निदान तथा उपचार का रूप भी विषयवस्तु की प्रकृति को निश्चित करता है।

वैयक्तिक कार्यकर्ता को विचार तथा भावना के सम्प्रेषण के दोनों स्तरों पर निपुणता की आवश्यकता होती है। जब विषयवस्तु तथ्यों पर आधारित होता है उस समय सहायता को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए वैयक्तिक कार्यकर्ता को संस्था के तरीकों, नीतियों तथा समुदाय में उपलब्ध अन्य स्रोतों का ज्ञान होता चाहिए। जब भावना प्रधान समस्या होती है और वैयक्तिक कार्यकर्ता सहायता प्रदान करना चाहता है ऐसी स्थिति में उसे सेवार्थी की भावनाओं के प्रत्युत्तर में निपुण होना चाहिए। वैयक्तिक समाज कार्य की यह निपुणता सबसे महत्वपूर्ण निपुणता है।

6.2.4 स्वीकृति का सिद्धान्त

समाज कार्य में स्वीकृति शब्द का उपयोग अत्यधिक किया जाता है। प्रत्येक समाज कार्यकर्ता इस शब्द के महत्व से अवगत है तथा वैयक्तिक समाज कार्य में जहाँ पर कार्यकर्ता की सफलता सम्बन्ध की प्रकृति पर निर्भर है, स्वीकृति सिद्धान्त का विशेष महत्व है। परन्तु इस शब्द की स्पष्ट परिभाषा अभी तक नहीं हो पायी है। स्वीकृति शब्द के कई अर्थ हैं। जब किसी वस्तु के संदर्भ में उपयोग होता है तो इसका तात्पर्य प्राप्त करने से है या उपहार स्वीकार करने से है। जब बौद्धिक प्रत्यय के रूप में उपयोग किया जाता है तो इसका तात्पर्य वास्तविकता को जानने से है या अनुकूल प्रत्युत्तर करने से है। जब व्यक्ति के संदर्भ में उपयोग होता है तो इसका तात्पर्य व्यक्ति का आदर करते हुए उससे सम्बन्ध स्थापित करना है। समाज कार्य साहित्य में स्वीकृति शब्द की परिभाषा कहीं भी स्पष्ट रूप से नहीं दी गयी है। कहीं-कहीं आंशिक रूप से इसका स्पष्टीकरण मिलता है उसी को क्रमबद्ध रूप से यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

रेनोल्ड, वेरथा सी के अनुसार, जब हम सेवार्थी को जैसा है वैसा समझ लेते हैं तथा मानव साथी के रूप में उसका सम्मान करते हैं तो हम सेवार्थी को स्वीकृति प्रदान करते हैं।

क्रुस, हेरथा के शब्दों में, ''वैयक्तिक समाज कार्य व्यक्ति को जैसा है वैसा स्वीकार करता है, वह बिना पूर्वाग्रह के स्वीकृति देता है। यह मित्रतावश नहीं बल्कि व्यावसायिक उद्देश्य के कारण ऐसा करता है। वह सहानुभूति, स्वीकृति प्रेम आदि प्रदर्शित करता है।

वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता सेवार्थी को जैसा है वैसा ही जानने का प्रयास करता है, वहीं प्रत्यक्षीकृत करना चाहता है, वही रूप देखना चाहता है तथा उन्हीं गुणों को समझना चाहता है। इसी आधार पर वह सेवार्थी से सम्बन्ध भी स्थापित करता है। इसका तात्पर्य है कि सेवार्थी में वास्तविकता का चाहे जितना विघटन हो, चाहे जितना सेवार्थी के प्रत्यक्षीकरण से उसका प्रत्यक्षीकरण भिन्न हो, मूल्यों में कितना भी अन्तर क्यों न हो, हम उसे वैसा ही स्वीकार करते हैं जैसा वह अपने को प्रदर्शित करता है। इसका यह तात्पर्य नहीं है कि सेवार्थी में परिवर्तन की आशा नहीं रखते हैं बल्कि इसका तात्पर्य यह है कि सहायता की कला स्वीकृति तत्व पर आधारित है और वहीं से प्रारम्भ की जाय तो विशेष लाभकारी सिद्ध होगी। समाज कार्य का दृढ़ विश्वास है कि सेवार्थी के स्तर से ही कार्य प्रारम्भ होना चाहिए जिससे सफलता प्रत्येक स्तर पर मिलती रहे। इस अर्थ में स्वीकृति व्यावसायिक मनोवृत्ति या जीवन का एक गुण या एक सिद्धान्त है। स्वीकृति के निम्नलिखित अंग होते हैं:

1. सम्मान करना
2. प्रेम करना
3. चिकित्सात्मक समझ
4. प्रत्यक्षीकरण
5. सहायता
6. प्राप्त करना

स्वीकृति क्रिया तीन प्रकार की होती है:-

1. प्रत्यक्षीकरण
2. उपचारात्मक समझ
3. अभि-स्वीकृति

सेवार्थी की स्वीकृति का तात्पर्य निम्नलिखित बातों से है:-

1. मानव के रूप में उसकी एकता, क्षमता, योग्यता में विश्वास
2. व्यक्ति के रूप में जैसा है वैसा तथा सीमाओं सहित
3. मनोवृत्ति तथा व्यवहार असहयोगपूर्ण होने पर भी उसको स्वीकार करना
4. उसकी वास्तविक क्षमताओं को स्वीकार करना
5. सेवार्थी के रूप में उसे मानना तथा अपनी भावनाओं एवं रुचियों पर नियन्त्रण लगाना
6. सकारात्मक तथा नकारात्मक भावनाओं की स्वीकृति

6.2.6 अनिर्णायक मनोवृत्ति का सिद्धान्त

समाज कार्य की यह दृढ़ धारणा है कि व्यक्ति में आत्म निश्चय करने की अन्तर्भूत क्षमता होती है। इसी प्रत्यय के आधार पर वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता सेवार्थी को अपना मार्ग स्वयं निश्चित करने के लिए प्रोत्साहित करता है। सेवार्थी को अपनी रुचि के अनुसार वैयक्तिक समाज कार्य प्रक्रिया में भाग लेने की पूरी स्वतन्त्रता होती है। उसके अधिकारों तथा आवश्यकताओं को महत्व दिया जाता है। कार्यकर्ता सेवार्थी की आत्म निर्देशन क्षमता को तीव्र करता है तथा संस्था में उपलब्ध साधनों का ज्ञान कराता है। सेवार्थी का आत्म निश्चय करने का अधिकार उसकी सकारात्मक एवं रचनात्मक निर्णय शक्ति की सीमा पर निश्चित होता है। संस्था के कार्य भी इस अधिकार को प्रभावित करते हैं।

वैयक्तिक समाज कार्य सम्बन्ध का यह एक विशिष्ट गुण है। कार्यकर्ता अपनी प्रक्रिया में इसकी मनोवृत्ति को अपनाता है। इस मनोवृत्ति का आधार वैयक्तिक समाज कार्य का दर्शन है जो यह मानता है कि व्यक्ति का समस्या उत्पन्न करने में कोई दोष नहीं है या वह अपराधी नहीं है बल्कि परिस्थितियाँ इसके लिए उत्तरदायी हैं। यह व्यक्ति की मनोवृत्ति, स्तर तथा क्रिया-प्रतिक्रिया के कार्यों को महत्व देता है।

''निर्णय'' का तात्पर्य व्यक्ति को किसी कार्य के लिए उत्तरदायी या उसकी अज्ञानता को निश्चित करने से होता है। यह एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा निश्चित किया जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति उक्त कार्य के लिए स्वयं दोषी है या उसने यह अपराधपूर्ण कार्य नहीं किया है। उसी आधार पर इसे दोषी ठहराया जाता है।

वैयक्तिक समाज कार्य में भी निर्णय का यह अर्थ लिया जाता है। अर्थात् सेवार्थी पर दोषारोपण मौखिक या अन्य किसी प्रकार अपनी समस्या के लिए करना। समस्या के कारक चाहे पर्यावरणीय हों या व्यक्तित्व से सम्बन्धित हों। सेवार्थी की सहायता करने में यद्यपि उसकी असफलताओं तथा कमियों को जानना आवश्यक होता है। लेकिन वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता का निर्णय करने का कोई उत्तरदायित्व एवं कार्य नहीं होता है। निर्णय करने का अधिकार दूसरे अधिकारियों का होता है। समाज कार्य दर्शन, विश्वास, प्रेम, सहानुभूति तथा सहयोग सिखाता है। इसका दृढ़ विश्वास है कि व्यक्ति के विषय में कोई निर्णय लेना अतार्किक तथा अव्यावहारिक है। दोषी का तिरस्कार करना अथवा बहिष्कृत करना कोई बुद्धिमानी नहीं है। ये भावनाएँ सहायक प्रक्रिया में बाधा पहुँचाती हैं तथा सेवार्थी आत्मग्लानि अनुभव करता है। समाज कार्य दण्ड के स्थान पर सहायता में विश्वास करता है।

6.2.6 सेवार्थी आत्म निश्चय का सिद्धान्त

प्रत्येक सम्प्रेषण की द्विमुखी प्रक्रिया है। जब एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से कुछ कहता है तो उससे भी प्रत्युत्तर चाहता है। यदि वह व्यक्ति कोई प्रत्युत्तर नहीं करता है तो सम्प्रेषण की अरुचि प्रकट होती है। फलतः संचार प्रक्रिया काम नहीं करती है। सामान्य रूप से सम्प्रेषण की विषयवस्तु को तीन श्रेणियों में वर्गीकृत कर सकते हैं: केवल विचार, केवल भावनाएं तथा विचार एवं भावनाएं दोनों। जब व्यक्ति स्टेशन पर जाकर पूछताछ खिड़की पर किसी गाड़ी जाने का समय पूछता है इसका तात्पर्य वह केवल विचार सम्प्रेषित कर रहा है। वह केवल सूचना प्राप्त करना चाहता है तथा वास्तविक तथ्यों की आशा करता है। जब पति या पत्नी की मृत्यु पर किसी सम्बधी से दुख दर्द बताता है, इसका तात्पर्य वह भावनाओं को सम्प्रेषित कर रहा है।

वैयक्तिक समाज कार्य में सम्प्रेषण की विषयवस्तृ प्रायः विचार तथा भावनाओं का मिश्रण होता है। विषयवस्तु की प्रकृति कई कारकों पर निर्भर करती है। जैसे-सेवार्थी की समस्या, संस्था के कार्य, सेवार्थी की आवश्यकताएं तथा भावनाएं, साक्षात्कार से सेवार्थी के परिवर्तित होने वाले विचार एवं धारणाएं, वैयक्तिक कार्यकर्ता का उद्देश्य आदि। अध्ययन, निदान तथा उपचार का रूप भी विषयवस्तु की प्रकृति को निश्चित करता है।

वैयक्तिक कार्यकर्ता को विचार तथा भावना के सम्प्रेषण के दोनों स्तरों पर निपुणता की आवश्यकता होती है। जब विषयवस्तु तथ्यों पर आधारित होता है उस समय सहायता को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए वैयक्तिक कार्यकर्ता को संस्था के तरीकों, नीतियों तथा समुदाय में उपलब्ध अन्य स्रोतों का ज्ञान होता चाहिए। जब भावना प्रधान समस्या होती है और वैयक्तिक कार्यकर्ता सहायता प्रदान करना चाहता है ऐसी स्थिति में उसे सेवार्थी की भावनाओं के प्रत्युत्तर में निपुण होना चाहिए। वैयक्तिक समाज कार्य की यह निपुणता सबसे महत्वपूर्ण निपुणता है।

6.2.7 गोपनीयता का सिद्धान्त

समाज कार्य मानव जीवन के विभिन्न पहलुओं में विभिन्न तरीकों द्वारा उपयोग में लाया जाता है। जीवन के बहुत से पहलू ऐसे होते हैं जिसकी व्यक्ति बहुत ही गोपनीयता रखता है और जिससे घनिष्ठतम सम्बन्ध होते हैं उसे ही बताता है। अतः गोपनीयता सिद्धान्त को दो रूपों में देखा जा सकता है: व्यावसायिक आचार संहिता के रूप में तथा वैयक्तिक समाज कार्य सम्बन्ध के तत्व के रूप में।

गोपनीयता का तात्पर्य सेवार्थी की उन गोपनीय सूचनाओं को जिनको वह कार्यकर्ता से बताता है, गोपनीय रखने से हैं। यह सेवार्थी के मूल अधिकार से सम्बन्धित है। यह वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता का उत्तरदायित्व है तथा वैयक्तिक समाज कार्य का मूलाधार है।

सेवार्थी जब संस्था में आता है तो यह समझ कर आता है कि उसे वैयक्तिक सामाजिक कार्यकर्ता से अनेक गोपनीय बातें बतानी होगी परन्तु वह यह भी चाहता है कि अन्य लोग उन बातों को न जाने क्योंकि ऐसा होने से मानहानि होगी तथा वैयक्तिक भावनाओं को ठेस पहुँचेगी। इसीलिए पहले जब सेवार्थी को ज्ञात हो कि उसकी बतायी गयी बातें कार्यकर्ता द्वारा गोपनीय रखी जायेंगी तभी वह स्पष्ट करेगा। वह जब जान लेता है कि संस्था की सहायता प्राप्त करने के लिए इन सूचनाओं को बताना आवश्यक है, तभी बताता है और विश्वास करता है कि ये सूचनाएँ सहायक प्रक्रिया में लगे व्यक्तियों से परे लोगों को ज्ञात नहीं होगी। वह किसी भी प्रकार से अपनी ख्याति को कम नहीं करना चाहता है।

6.3 सारांश

प्रस्तुत इकाई में वैयक्तिक समाज कार्य के सिद्धान्तों का अध्ययन किया। वैयक्तीकरण के सिद्धान्त तथा भावनाओं के उद्देश्यपूर्ण प्रकटन सिद्धान्त के विषय में जाना। तत्पश्चात् नियंत्रित सांवेगिक अन्तर्भावित्ता के सिद्धान्त का अध्ययन किया। स्वीकृति के सिद्धान्त तथा अनिर्णायक मनोवृत्ति के सिद्धान्त के विषय में ज्ञान प्राप्त किया। इसके पश्चात् गोपनीयता के सिद्धान्त तथा आत्म निश्चय सिद्धान्त के विषय में जानकारी प्राप्त की।

6.4 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. वैयक्तिक समाज कार्य में सिद्धान्तों के उपयोग पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।
2. वैयक्तीकरण तथा भावनाओं के उद्देश्यपूर्ण प्रकटन के सिद्धान्तों का विस्तृत वर्णन कीजिए।
3. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए:-
    1. नियंत्रित सांवेगिक अन्तर्भावितता का सिद्धान्त
    2. स्वीकृति का सिद्धान्त
3. अनिर्णायक मनोवृत्ति का सिद्धान्त
4. सेवार्थी में आत्म निश्चय का सिद्धान्त
5. गोपनीयता का सिद्धान्त

6.5 सन्दर्भ ग्रन्थ

मिश्रा, पी॰ डी॰, मिश्रा, बीना, व्यक्ति और समाज, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2007

मिश्र, डा. प्रयागदीन, सामाजिक सामूहिक कार्य, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, 1992

मिश्र, पी. डी. एवं मिश्र रोहित, समूह समाज कार्य, न्यू रायल बुक कम्पनी, लखनऊ, 2012

सिंह, डी॰ के॰, भारती, ए॰ के॰, सोषल वर्क कान्सेप्ट ऐंड मैथड्स, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.

सिंह, डी॰ के॰, पालीवाल, सौरभ, मिश्र, रोहित, मानव समाज, संगठन एवं विघटन के मूल तत्व, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2010.

मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक सामूहिक कार्य, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, वर्ष 1977.

सिंह, सुरेन्द्र, मिश्र, पी॰ डी॰, समाज कार्य- इतिहास, दर्शन एवं प्रणालियाँ,

रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2006.

मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, वर्ष 1985.

सिंह, डी॰ के॰, भारत में समाज कल्याण प्रशासन: अवधारणा एवं विषय क्षेत्र, रायल बुक डिपो लखनऊ, वर्ष 2011.

सिंह, सुरेन्द्र, वर्मा, आर॰ बी॰ एस॰, भारत में समाज कार्य का क्षेत्र, रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.

इकाई-7

समूह के साथ समाज कार्य

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 समूह समाज कार्य

7.3 संयुक्त राज्य अमेरिका में समूह समाज कार्य

7.4 इंग्लैण्ड में समूह समाज कार्य

7.5 भारत में समूह समाज कार्य

7.6 सारांश

7.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

7.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

7.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

1. समूह समाज कार्य के अर्थ को समझ सकेंगे।
2. इसके पश्चात् संयुक्त राज्य अमेरिका में समूह समाज कार्य के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
3. तत्पश्चात् इंग्लैण्ड में समूह समाज कार्य के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे तथा अंत में भारत में समूह समाज कार्य के विषय में अध्ययन कर सकेंगे।

7.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में समूह समाज कार्य पर विचार किया गया है। सामूहिक समाज कार्य एक प्रणाली है। यह केवल काम करने का एक तरीका ही नहीं है बल्कि एक क्रमानुसार व्यवस्थित तथा नियोजित समूह के साथ काम करने का तरीका है। प्रणाली उद्देश्य प्राप्त करने का चेतन तरीका तथा अभिकल्पित साधन होती है। कार्यकर्ता समूह का वैयक्तिकरण करके उसकी आवश्यकताओं, इच्छाओं तथा अंर्तनिहीत क्षमताओं का ज्ञान प्राप्त करता है। वह उद्देश्यों के निर्धारण में समूह की सहायता करता है तथा कार्यक्रमों के चलाने व उनकी आवश्यकता के विषय मे ज्ञान प्रदान करता है। वह समूह को मंत्रणा भी देता है तथा कार्यों के सम्पादन के लिए उत्तेजित भी करता है। कार्यकर्ता समूह की सहायता सामूहिक प्रक्रिया के प्रत्येक स्तर पर आवश्यकतानुसार करता है।

7.2 समूह समाज कार्य

इसका तात्पर्य यह है कि सामूहिक कार्य के लिए विशेष ज्ञान की आवश्यकता होती है। कार्यकर्ता को जब तक समूह की विशेषताओं, दशाओं, मनोवृत्तियों, आदि का ज्ञान होगा तब तक वह कार्य नही कर सकता है। उसको

व्यकित तथा समूह दोनों के व्यवहार का ज्ञान का होना आवश्यक है। कार्यकर्ता में वैज्ञानिक ज्ञान होता है। उसे कार्य करण का सम्बन्ध पता होता है। उसमें समझ होती है जिससे वह भिन्न-भिन्न स्थितियों तथा समूहों के साथ कार्य करने में समर्थ होता है। उसको समूह की गतिशीलता का ज्ञान होता है।

ट्रेकर का मत है कि सामूहिक कार्य के अपने कुछ सिद्धान्त है जो दूसरी प्रणालियों से भिन्न है। नियोजित समूह निर्माण का सिद्धान्त, लक्ष्यों की स्पष्टता का सिद्धान्त, उद्देश्यपूर्ण कार्यकर्ता सेवार्थी सम्बन्ध, निरन्तर वैयक्तिकरण का सिद्धान्त, निर्देशित सामूहिक अन्तःक्रिया का सिद्धान्त, प्रजातांत्रिक सामूहिक आत्मनिश्चयकरण का सिद्धान्त, लोचदार कार्यात्मक संगठन का सिद्धान्त, निरन्तर प्रगतिशील कार्यक्रम का सिद्धान्त, स्रोतो का उपयोग का सिद्धान्त तथा निरन्तर मूल्यांकन का सिद्धान्त इसके अन्तर्गत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

सामूहिक कार्य की अपनी विशिष्ट निपुणतायें हैं, जिनको सामूहिक कार्यकर्ता अपने व्यवहार में लाता है। वह सामूहिक स्थिति को विश्लेषित करने में दक्ष होता है। वह समूह के साथ भाग लेने में निपुण होता है। अपनी भूमिका की व्याख्या तथा उसकी आवश्यकता को समयानुसार निश्चित करने में समर्थ होता है। उसमें इस बात की निपुणता होती है कि वह प्रत्येक नयी स्थिति का निष्पक्ष होकर अध्ययन करता है। वह समूह की सकारात्मक तथा नकारात्मक भावनाओं को समझकर ही कार्यक्रम सम्पन्न करता है। इसमें संस्था तथा समुदाय के स्रोतों को उपयोग में लाने की निपुणता होती है।

सामूहिक कार्य द्वारा समूह में संस्था के अन्तर्गत व्यक्तियों की सहायता की जाती है| ट्रेकर की परिभाषा को दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि सामूहिक कार्य में समूह तथा संस्था दोनों का होना महत्वपूर्ण है अर्थात् व्यक्ति की सहायता समूह के माध्यम से की जाती है। समूह की अपनी विशेषतायें होती है तथा उसके गठन का भी एक उद्देश्य होता है। यह समूह किसी संस्था के अन्तर्गत ही गठित किया जाता है। ये समूह समुदाय की इच्छाओं तथा आवश्यकताओं के अनुरूप होते है। संस्था से बाहर यदि उससे सम्बन्धित है तो समुदाय में बने समूहों के साथ भी इसका प्रयोग होता है।

सामूहिक कार्य एक कार्यकर्ता द्वारा सम्पन्न होता है जो समूह की कार्यक्रम तथा क्रियाओं में होने वाली अन्तःक्रिया को निर्देशित करता है। सामूहिक कार्य में कार्यकर्ता की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण होती है। वह सभी कार्यों की धुरी होती है। अतः जैसी उसमें योग्यता एवं क्षमता होती है, समूह उसी प्रकार की उपलब्धि प्राप्त करता है। वह अपनी भूमिका का सम्पादन समूह की स्वीकृति के आधार पर करता है। जिस सीमा तक समूह उसकी अपनी भूमिका पूरी करने की आज्ञा देता है वह वहीं तक अपने कार्य क्षेत्र की सीमा बढ़ता है। कार्यकर्ता समूह का वैयक्तिकरण करके उसकी आवश्यकताओं, इच्छाओं तथा अन्तर्निहित क्षमताओं का ज्ञान प्राप्त करता है। वह उद्देश्यों के निर्धारण में समूह की सहायता करता है तथा कार्यक्रमों के चलाने व उनकी आवश्यकता के विषय में ज्ञान प्रदान करता है। वह समूह को मंत्रणा भी देता है तथा कार्यों के सम्पादन के लिए प्रेरित भी करता है। कार्यकर्ता समूह की सहायता सामूहिक प्रक्रिया के प्रत्येक स्तर पर जहां आवश्यक होती है, करता है। सामुदायिक स्रोतों के समुचित उपयोग में भी सहायता करता है।

जब हम कहते हैं कि सामूहिक समाज कार्य एक प्रणाली है तो इसका अभिप्राय यह होता है कि यह केवल काम करने का एक तरीका ही नही हैं बल्कि एक क्रमानुसार, व्यवस्थित तथा नियोजित समूह के साथ काम करने का तरीका है। प्रणाली उद्देश्य प्राप्त करने का चेतन तरीका तथा अभिकल्पित साधन होती है। साधारण अर्थो में प्रणाली कोई भी कार्य करने का तरीका है परन्तु यहाँ पर हम सदैव ज्ञान बोध तथा सिद्धान्तों की एकीकृत व्यवस्था की खोज करते है।

प्रणाली और निपुणता में अन्तर है। प्रणाली का तात्पर्य ज्ञान और सिद्धान्तों के आधार पर उद्देष्यपूर्ण ढ़ग से अन्र्तदृष्टि तथा समझ का उपयोग है। निपुणता ज्ञान और बोध को एक निष्चित परिस्थिति में उपयोग करने की क्षमता है।

7.3 संयुक्त राज्य अमेरिका में समूह समाज कार्य

अमेरिका में सन् 1961 में टाउनशिप के लिए ओवरसियरों एवं सुपरवाइजरों की नियुक्ति इंग्लैण्ड के एलिजाबेथ निर्धन कानून के आधार पर ही की गई। सन् 1657 में पहला भिक्षा गृह अशक्त निर्धनों के लिए खोला गया। तत्पचात् सशक्त निर्धनों के लिए सन् 1658 में एक कार्यगृह की स्थापना की गई। सन् 1699 में मैसाचुसेट्स में आवारा, भिक्षुओं तथा अव्यवस्थित लोगों के सुरक्षागृहों में रहने तथा काम करने के लिए कानून बनाया गया। सन् 1823 में न्यूयार्क में जे.वी.एन. येट्स को निर्धन कानून की कार्य प्रणाली और संबंधित सूचना एकत्र करने का निर्देश दिया गया। रिपोर्ट के आधार पर अमेरिका के कई राज्यों में अनाथालयों और कार्यगृहों की स्थापना की गई। सन् 1824 में न्यूयार्क ने 'काउन्टी निर्धन कानून' पारित किया गया। सनृ 1873 में 'लन्दन दान संगठन' के कार्यों की सराहना की गई और सन् 1877 में न्यूयार्क में 'एस.एच.गीटीन' ने 'न्यूयार्क दान संगठन समिति' की स्थापना की। सन् 1894 में न्यूयार्क में हेनरी स्ट्रीट सेटेलमेंट' की स्थापना की गई। सेटेलमेन्ट का उद्देश्य व्यक्तियों के आत्म-संयम का विकास करना था। डा. जान ने अपने वर्षों के सेटेलमेन्ट हाउस के अनुभव के बाद सन् 1915 में सामाजिक चेतना पर बल देते हुए कहा कि ''लोगों की सहायता केवल इसलिए ही नहीं की जानी चाहिए कि वे स्वयं अपनी सहायता करने में समर्थ हों बल्कि इसलिए करनी चाहिए कि वे अपने लिए स्वतंत्रता प्राप्त कर सकें, जिसे केवल दूसरों की स्वतंत्रता के लिए कार्य करने से ही प्राप्त किया जा सकता है।''

सन् 1922 में राबर्ट वुड्स ने सेटेलमेन्ट शिक्षा सम्बन्धी उद्देश्यों को स्पष्ट किया। यही उद्देश्य वर्तमान समूह कार्य में व्यक्तित्व विकास हेतु आवश्यक समझे जाते हैं। राबर्ट वुड्स ने कहा कि ''सेटेलमेन्टका पूरा कार्यक्रम शिक्षात्मक होना चाहिए जिसमें प्रत्येक स्तर में स्वास्थ्य सुधार, उच्च जीवन स्तर की प्राप्ति, नैतिक तथा आध्यात्मिक संतुष्टि आदि सभी कार्य प्रारम्भिक तथा अंतिम स्थितियों में शिक्षात्मक रूप में देखे जाने चाहिए।''

संयुक्त राज्य अमेरिका में समूह समाज कार्य का विकास कई स्तरों में हुआ है। प्रारम्भ में यह केवल मनोरंजनात्मक ही था परन्तु धीरे-धीरे परिवर्तन होता गया और समूह कार्य का रूप सामने आता गया। समूह समाज कार्य में मनोरंजन तथा शिक्षात्मक कार्यक्रम को सम्मिलित किया गया तथा धीरे-धीरे इसका विस्तार सेटेलमेन्ट हाउस, शिविर, वाई.एम.सी.ए. इत्यादि तक होता गया। इन कार्यक्रमों का विस्तार समाज के सभी वर्गों में हुआ और सन् 1935 आते-आते समूह कार्यकर्ताओं में व्यावसायिक चेतना जाग्रत हुई क्योंकि इसी वर्ष समाज कार्य के राष्ट्रीय अधिवेशन में समूह कार्य को समाज कार्य की एक पृथक् प्रणाली के रूप में स्वीकार किया गया।

ग्रेस क्वाएल ने सन् 1937 मे कहा कि '' समूह समाज कार्य का उद्देश्य सामूहिक स्थितियों में व्यक्तियों की पारस्परिक क्रिया द्वारा व्यक्तियों का विकास करना तथा ऐसी सामूहिक स्थितियों को उत्पन्न करना जिससे समान उद्देश्यों के लिए एकीकृत एवं सहयोगिक क्रिया उत्पन्न हो सके।''

संयुक्त राज्य अमेरिका में बीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक दशकों में समूह समाज कार्य के कई प्रत्ययों का जन्म हुआ। जिनसे प्रजातांत्रिक प्रक्रिया का जन्म हुआ| जे. ड्यूीव ने समूह की समस्या समाधान में वैज्ञानिक विधि के उपयोग पर बल आदि प्रमुख थे। जो बाद में समूह समाज कार्य के सिद्धान्तों के निर्माण में आधार बने।

एम.ई.हार्टफोर्ड ने बताया कि सन् 1950 तक समूह समाज कार्य के तीन प्रमुख क्षेत्र थे जो कि निम्नलिखित हैः

1. व्यक्ति का मानव रूप में विकास तथा सामाजिक समायोजन करना,
2. ज्ञान और निपुणता में वृद्धि द्वारा व्यक्तियों की रूचि में बढ़ोत्तरी करना, तथा
3. समुदाय के प्रति उत्तरदायित्व की भावना का विकास करना।

परन्तु सिगमण्ड फ्रायड के मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त का अभ्युदय जब सन् 1940-50 के मध्य हुआ, तो समझा जाने लगा कि सांवेगिक संघर्ष, सामाजिक अकार्यात्मकता के कारण उत्पन्न होता है और इसी कारण व्यक्ति के अचेतन मस्तिष्क की बातों को महत्त्व दिया जाने लगा तथा द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान चिकित्सीय तथा मनोचिकित्सीय समूह समाज कार्य प्रकाश में आया। द्वितीय विश्व युद्ध समाप्त होते-होते समूह समाज कार्य को सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक कारकों ने प्रभावित किया और अमेरिका में विभिन्न विद्वानों ने इसके कई प्रारूपों का निर्माण किया।

7.4 इंग्लैण्ड में समूह समाज कार्य

इंग्लैण्ड में सहायता के कार्य मुख्यतः चर्च के द्वारा किए जाते थे। सन् 1349 में किंग एडवर्ड तृतीय द्वारा आदेश दिया गया कि पुष्ट शरीर वाला प्रत्येक व्यक्ति कोई न कोई कार्य अवश्य करे। सन् 1531 में हेनरी नियमावली ने भिक्षा माँगने हेतु पंजीकरण अनिवार्य कर दिया। यह पहली बार हुआ जब निर्धनों के प्रति उत्तरदायित्व तथा कर्तव्य को महसूस किया गया। सन् 1536 में निर्धनों की सहायता हेतु पैरिसों में निर्धनों के पंजीकरण हेतु एक योजना का निर्माण हुआ। पुष्ट शरीर वाले भिखारियों का काम करना आवश्यक किया गया तथा उन बच्चों, जिनकी आयु 5 से 14 वर्ष के मध्य में थी और वे काम नहीं करते थे, के माता-पिता को प्रशिक्षण दिया जाने लगा। सन् 1576 में सुधार गृह की स्थापना की गई, जिसमें युवकों को कार्य करने हेतु बाध्य किया जाता था। सन् 1601 में निर्धनों हेतु एक नया कानून बना जो '43 एलिजाबेथ' के नाम से जाना है। इस कानून में निर्धनों को तीन श्रेणियों में विभक्त किया गया। सन् 1662 में सेटेलमेन्ट कानून बनाया गया, जिसमें 'शान्ति के न्यायाधीशों' को यह अधिकार दिया गया वे आगुन्तकों के विषय में 40 दिन के भीतर जाँच करे तथा अनियमितता पाए जाने पर उनके निष्कासन की प्रार्थना करें। परन्तु सन् 1795 में इस कानून में कुछ परिवर्तन किए गए।

सन् 1696 में 'कार्यशाला कानून' बनाया गया, जिससे प्रौढ़ो तथा बच्चों के वस्त्रों की बुनाई, कताई-बुनाई, जाली तथा पालों के उत्पादन आदि हेतु शिक्षण व प्रशिक्षण आरम्भ किया गया। सन् 1767 में 6 वर्ष से कम आयु के बच्चों को हटाया गया तथा उन्हें पोषक परिवारों में रखने की व्यवस्था की गई। सन् 1795 में वृद्ध, बीमारों तथा अपाहिजों की सहायतार्थ 'स्पीनहम लैण्ड कानून' बनाया गया।

सन् 1832 में विभिन्न निर्धन कानूनों के प्रशासन एवं व्यावहारिक कार्यविधि जाँचने के लिए एक राजकीय आयोग बनाया गया। इस आयोग की सिफारिशों के आधार पर सन् 1834 में नवीन कानून पारित किया गया। तत्पश्चात् सन् 1874 में निर्धन कानून आयोग के स्थान पर 'निर्धन कानून बोर्ड' की स्थापना की गई, जिसका कार्य निर्धनता के कारणों तथा सामाजिक सुधार के प्रभावशील साधनों के लिए कार्यों का निरीक्षण करना था।

इंग्लैण्ड समूह कार्य के विकास में सबसे अधिक प्रभावशील भूमिका 'दान गठन समिति' ने निभाई है। समिति ने यह स्वीकार किया कि निर्धन व्यक्ति अपनी निर्धनता हेतु स्वयं उत्तरदायी है। इस समिति का गठन सन् 1868 में 'हेनरी सौली' ने किया था, जिसका पूर्व में नाम 'परोपकारी कल्याण संगठन एवं भिक्षावृत्ति उन्मूलन समिति' था।

इस क्रम में सन् 1873 में कैनन बारनेट ने कहा कि जो मानसिक भेद या घृणा निर्धन एवं सम्पन्न लोगों के बीच उत्पन्न हो गई है, उसे तब तक दूर नहीं किया जा सकता जब तक शिक्षित तथा संपन्न लोग निर्धनों के बीच नहीं जाएंगे तथा उनकी आवश्यकताओं को पूरा करने में सहायता नहीं करेंगे।

कैनन ने यह भी कहा कि ''व्यक्तियों की शक्ति को अधिक शक्तिशाली समूह में ही बनाया जा सकता है। जहाँ पर समान लक्ष्य, उद्देश्य के प्रति चेतना उत्पन्न करता है जहाँ मित्रता आराम देती है एवं संख्या सहयोग करने के लिए बाध्य करती है।''

सन् 1944 में 'रोशडेल' में पहला सहकारी भण्डार खोला गया जिसके मालिक स्वयं श्रमिक थे। 'राबर्ट ओवन' ने एक औद्योगिक समुदाय की स्थापना की जहाँ पर वह स्वच्छता तथा क्रीड़स्थलों से सुसज्जित स्वास्थ्यप्रद सुविधाओं की उपलब्धता मजदूरों तथा उनके परिवारों के लिए थी। इसके अतिरिक्त वहाँ पुस्तकालय एवं मनोरंजन की सुविधाएं भी थी।

सन् 1844 में जार्ज विलियम्स ने नौजवानों को ईसाई जीवन पद्धति पर चलने की प्रेरणा देते हुए 'युवा पुरूष ईसाई संघ' की स्थापना की गई। जिसमें बालकों के लिए खेलकूद, संगीत नृत्य एवं मनोरंजन की सुविधाएं थी।

इंग्लैण्ड में बीसवीं शताब्दी के पहले समूह समाज कार्य का उद्देश्य सामाजिक चेतना तथा सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना का विकास करना था। परन्तु सन् 1920 के पश्चात् इसका उपयोग व्यक्ति के व्यक्तित्व में सकारात्मक परिवर्तन तथा उसके विकास के लिए किया जाने लगा। द्वितीय विश्व युद्ध के समय इंग्लैण्ड के शिक्षा मंत्रालय द्वारा युवा सेवाओं के रूप में समूह समाज कार्य को मान्यता प्राप्त हुई। युवाओं के प्रशिक्षण में समूह समाज कार्य का ज्ञान कराया जाने लगा। परन्तु सन् 1960 तक समूह समाज कार्य हेतु शिक्षा अपर्याप्त थी, परन्तु बाद में विभिन्न समाज कार्य विद्यालयों में इसका तेजी से विस्तार हुआ।

7.5 भारत में समूह समाज कार्य

भारतीय समाज मुख्यतः व्यक्ति के व्यक्तिकरण की प्रक्रिया पर ही आधारित रहा है, जहाँ प्राचीनकाल से ही प्रत्येक व्यक्ति की सहायता का उत्तरदायित्व समुदाय के प्रत्येक व्यक्ति पर था, जिसके लिए धर्म की सहायता भी ली गई। राजा का कर्तव्य था कि वे अपने राज्य नागरिकों की सर्वोत्तम सेवा करे तथा धर्म की रक्षा करे। राजा इसके लिए मंदिरों तथा मठों की स्थापना करता था तथा मंदिरों और आश्रमों के माध्यम से ऋषियों के लिए आवास का निर्माण, गृहहीनों को मंदिरों इत्यादि में रहने की व्यवस्था, वृद्धों एवं बीमारों के लिए विभिन्न प्रकार के आश्रमों तथा चिकित्सालयों का निर्माण इत्यादि करवाता था। महात्मा बुद्ध ने बौद्ध धर्म की स्थापना की जिसमें संघों का निर्माण किया गया। संघों की स्थापना मे सामूहिकता को बल मिला क्योंकि संघ को दी जाने वाली कोई भी सम्पत्ति किसी भी व्यक्ति द्वारा व्यक्तिगत रूप से अधिकार में नहीं ली जा सकती थी। समय के साथ-साथ भारत में बड़े-बड़े साम्राज्यों का उदय हुआ, जिनमें प्रमुख रूप से मौर्य साम्राज्य, गुप्त साम्राज्य ने जनता की भलाई हेतु विभिन्न प्रकार के कार्य किए। सराँय बनवाना, कुएँ खुदवाना, चिकित्सालयों की स्थापना इत्यादि कार्य व्यापक पैमाने पर किए गए। इसी तरह मुगल काल में अकबर महान द्वारा जन-कल्याण के कार्य संपादित किए गए।

मुगलों के साम्राज्य के पतन के बाद जब ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना भारत में हुई तो एक ओर तो उसने भारतीयों पर विभिन्न प्रकार के दबाव बनाकर उनसे अपने मनमुताबिक कार्य करवाए वहीं दूसरी ओर भारतीयों में उनकी दमनकारी नीतियों के चलते अधिकारों एवं सामूहिक चेतना के प्रति जागरूकता भी उत्पन्न हुई क्योंकि अंग्रेजों के भारत आगमन पर ही भारतीय, पश्चिमी जगत के विकास से परिचित हुए। इसी सामूहिक चेतना के चलते सन् 1780 में बंगाल (वर्तमान में पश्चिमी बंगाल) में 'श्रीरामपुर मिशन' की स्थापना हुई। इस मिशन ने बाल-विवाह,

बालिकाओं की हत्या, सती-प्रथा को तथा विधवा विवाह को करने हेतु बहुत प्रयास किए। सन् 1828 में राजा राम मोहन राय ने ब्रह्म समाज' की स्थापना की, जिसने निर्धन एवं दुर्भिक्ष कल्याण, बालिकाओं की शिक्षा, विधवाओं की स्थिति में सुधार इत्यादि अनेक प्रकार के कार्य किए। जाति प्रथा तथा सती प्रथा के विरूद्ध राजा राम मोहन राय द्वारा बहुत सारे कार्य किए। इसी प्रकार सन् 1861 में न्यायाधीश रानाडे द्वारा 'विधवा विवाह संघ' की स्थापना अत्यन्त प्रासंगिक रही। सन् 1877 में पूना में 'प्रार्थना सभा' की स्थापना की गई, और भण्डाकर, चिन्तामणि चन्द्रावरकर, तथा नरेन्द्र नाथ ने भारत में समाज सुधार के क्षेत्र में कार्य करना प्रारंभ कर दिया।

सन् 1877 में स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा आर्य समाज की स्थापना की गई भारतीय समाज में 'आर्य समाज' समाज सुधार का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण आंदोलन था। सन् 1881 में मैडम ब्लावस्की तथा कर्नल आलकाट द्वारा 'थियोसोफिकल सोसाइटी' की स्थापना की। सन् 1882 में रमाबाई द्वारा 'आर्य महिला समाज', सन् 1887 में शशिपद बनर्जी द्वारा हिन्दू विधवाओं हेतु 'विधवा गृह' की स्थापना आदि समूह समाज कार्य के विकास हेतु मील का पत्थर सिद्ध हुए।

सन् 1905 में गोपाल कृष्ण गोखले द्वारा 'सर्वेन्ट्स आफ इण्डिया' की स्थापना की गई, जिसने लोगों में सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक कार्यों की जागरूकता हेतु समूह कार्य का प्रयोग किया। शिक्षा के प्रचार-प्रसार हेतु सन् 1906 में बी.आर. शिन्दे ने 'डिप्रेस्ड क्लास मिशन सोसाइटी' की स्थापना की। सन् 1908 में बा ॅम्बे संघ ने 'सेवा सदन' की स्थापना की, जिसका उद्देश्य चिकित्सा संबंधी सहायता व कार्यशालाएं चलाना और महिला कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करना था। धीरे-धीरे भारत में समूह समाज का विकास तेजी पकड़ता गया। आज वर्तमान में भारत में कई प्रतिष्ठित शिक्षण संस्थानों में समूह समाज कार्य की शिक्षा दी जा रही है।

7.6 सारांश

प्रस्तुत इकाई में समूह समाज कार्य के विषय में अध्ययन किया। इसके पश्चात् संयुक्त राज्य अमेरिका में समूह समाज कार्य को पढ़ा। तत्पश्चात् इंग्लैण्ड में समूह समाज कार्य के विषय में विचार किया तथा अंत में भारत में समूह समाज कार्य के बारे में ज्ञान प्राप्त किया।

7.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. समूह समाज कार्य को समझाइये।
2. संयुक्त राज्य अमेरिका में समूह समाज कार्य के विकास का वर्णन कीजिए।
3. इंग्लैण्ड में समूह समाज कार्य के विकास को विस्तृत रूप से समझाइये।
4. भारत में समूह समाज कार्य के विकास का विस्तृत वर्णन कीजिए।

7.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

सिंह, डी॰ के॰, भारती, ए॰ के॰, सोषल वर्क कान्सेप्ट ऐंड मैथड्स, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.

सिंह, डी॰ के॰, पालीवाल, सौरभ, मिश्र, रोहित, मानव समाज, संगठन एवं विघटन के मूल तत्व, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2010.

मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक सामूहिक कार्य, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, वर्ष 1977.

सिंह, सुरेन्द्र, मिश्र, पी॰ डी॰, समाज कार्य- इतिहास, दर्शन एवं प्रणालियाँ, रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2006.

मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, वर्ष 1985.

सिंह, डी॰ के॰, भारत में समाज कल्याण प्रशासन: अवधारणा एवं विषय क्षेत्र, रायल बुक डिपो लखनऊ, वर्ष 2011.

सिंह, सुरेन्द्र, वर्मा, आर॰ बी॰ एस॰, भारत में समाज कार्य का क्षेत्र, रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.

मिश्रा, पी॰ डी॰, मिश्रा, बीना, व्यक्ति और समाज, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2007.

इकाई -8

समूह की विशेषतायें

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 समूह की विशेषतायें

8.3 समूह समाज कार्य की विशेषताएं

8.4 समूह समाज कार्य के विषय में भ्रान्तियाँ

8.5 समूह समाज कार्य के अंग

8.6 समूह समाज कार्य का महत्व

8.7 सारांश

8.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

8.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

8.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के उपरांत आप

1. समूह की विशेषताओं को समझ सकेंगे।
2. तत्पश्चात् समूह समाज कार्य की विशेषताओं के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
3. इसके पश्चात् समूह समाज कार्य के विषय में भ्रान्तियों के बारे में वर्णन कर सकेंगे।
4. इसके पश्चात् समूह समाज कार्य के अंगों का उल्लेख कर सकेंगे तथा इकाई के अंत में समूह समाज कार्य के महत्व का अध्ययन कर सकेंगे।

8.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में समूह की विशेषताओं के विषय में वर्णन किया गया है। समूह की प्रमुख विशेषताओं के अंतर्गत एक से अधिक व्यक्तियों का संग्रह, पारस्परिक सम्बन्ध, सामान्य हित एवं उद्देश्य, एकता की भावना, सापेक्षिक स्थायित्व तथा समूह आदर्श नियमों का उल्लेख किया गया है। समूह समाज कार्य, समाज कार्य की एक प्रणाली है। जिसका आधार प्रजातांत्रिक प्रक्रिया है। इसमें समूह को विशेष लक्ष्य की प्राप्ति के बाध्य नहीं किया जाता है। समूह को पूरा अधिकार होता है कि वह अपने लक्ष्यों, कार्यक्रमों एवं प्रक्रियाओं को अपनी रूचि के अनुसार व्यवस्थित एवं संगठित करे। समूह समाज कार्य समूह के सदस्यों में आत्म निर्देशन की योग्यता का विकास करता

है। कार्यकर्ता समूह की सहायता उसी सीमा तक करता है। जहाँ तक समूह आवश्यक समझा जाता है। समूह का उपयोग सामूहिक जीवन को सुखमय बनाने के लिए किया जाता है। इस प्रणाली की अपनी विशिष्ट निपुणताएं, सिद्धान्त एवं प्रविधियां है।

8.2 समूह की विशेषतायें

सामाजिक समूह की विभिन्न समाजशास्त्रियों द्वारा दी गई परिभाषाओं के आधार पर निम्नलिखित विशेषताएँ स्पष्ट होती हैं –

एक से अधिक व्यक्तियों का संग्रह

समूह में सदैव एक से अधिक व्यक्ति होते हैं अर्थात् कम से कम दो व्यक्ति का होना आवश्यक है जो किसी भी समूह की प्राथमिक विशेषता कही जा सकती है। जैसे-परिवार समूह का निर्माण पति-पत्नी के द्वारा होता है।

पारस्परिक सम्बन्ध

मनुष्यों के किसी भी संग्रह मात्र को समूह नहीं माना जा सकता है। समूह के सदस्यों में परस्पर अन्तः सम्बन्ध होने चाहिए। वास्तव में ये सामाजिक सम्बन्ध ही समूह का आधार हैं। यही कारण है कि किसी मेले या भीड़ को सामाजिक समूह नहीं कहा जाता है।

सामान्य हित और उद्देश्य

समूह के सदस्य सामान्य हित और लक्ष्य के चलते एक साथ रहते हैं। वास्तव में व्यक्ति सामाजिक समूह का सदस्य समान हित एवं उद्देश्य होने पर ही बनता है। समूह में प्रत्येक व्यक्ति का कुछ न कुछ अपना स्वार्थ जुड़ा होता है परन्तु यह स्वार्थ समूह के सभी सदस्यों का समान रूप से होता है।

एकता की भावना

समाजिक समूह के सभी सदस्य एकता और परस्पर सहानुभूति की भावना से बंधे रहते हैं।

सापेक्षिक स्थायित्व

प्रत्येक समूह सापेक्षिक दृष्टि से विभिन्न व्यक्तियों के एकत्रीकरण की तुलना में अधिक स्थाई प्रकृति का होता है। जैसे किसी मेले या भीड़ की तुलना में परिवार, क्रीड़ा-समूह, पड़ोस, आदि अधिक स्थाई समूह हैं।

समूह आदर्श नियम

प्रत्येक प्रकार के समूह में अपने सदस्यों के व्यवहार हेतु निश्चित नियम कानून होते हैं। यह आवश्यक नहीं है कि यह नियम कानून लिखित रूप से हों। समूह अपने स्थायित्व हेतु सदस्यों से यह अपेक्षा रखता है कि वे समूह के नियम कानूनों का पालन ठीक से करें।

कार्य विभाजन

समूह के सभी सदस्यों के अलग-अलग कार्य होते हैं जिनके पूर्ण होने पर ही समूह के उद्देश्य प्राप्त होते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि समूह के सदस्य पारस्परिक सम्बन्धों से जुड़े रहते हैं इसका तात्पर्य यह नहीं है कि सभी सदस्य एक ही प्रकार का कार्य भी करते हैं।

समूह की सदस्यता

समाजिक समूह का सदस्य होना व्यक्ति की इच्छा पर निर्भर करता है। प्रत्येक व्यक्ति अपने विभिन्न हितों और उद्देश्यों के अनुसार समूह का सदस्य होना स्वीकार या अस्वीकार करता है। इस प्रकार कुछ समूह ऐसे होते हैं जिसकी सदस्यता व्यक्ति जब चाहे त्याग सकता है अथवा ग्रहण कर सकता है। परन्तु कुछ प्राथमिक समूहों जैसे परिवार, नातेदारी आदि की सदस्यता आसानी से नहीं छोड़ी या ग्रहण की जा सकती है।

सामाजिक पहचान

प्रत्येक सामाजिक समूह की अपनी एक पहचान होती है। जिसके फलस्वरूप लोग यह जानते हैं कि अमुक व्यक्ति अमुक समूह का सदस्य है। यह आवश्यक नहीं है कि किसी समूह के सदस्यों में भली-भांति पहचान हो। परन्तु समूह या बाहर के लोग किसी व्यक्ति को किसी समूह के सदस्य के रूप में सामाजिक पहचान रखते हैं।

हम की भावना

सामाजिक समूह की एक विशेषता हम भावना का होना है। समान लक्ष्य, स्वार्थ एवं दृष्टिकोण के कारण सदस्यों में परस्पर सहयोग पाया जाता है जो हम की भावना का विकास करते हैं।

8.3 समूह समाज कार्य की विशेषताएं

जब हम समाज कार्य की निम्नलिखित परिभाषाओं का अध्ययन करते हैं तो ज्ञात होता है कि:

1. समूह समाज कार्य, समाज कार्य की एक प्रणाली है। जिसका आधार प्रजातांत्रिक प्रक्रिया है। इसमें समूह को विशेष लक्ष्य की प्राप्ति के लिए बाध्य नहीं किया जाता है। समूह को पूरा अधिकार होता है कि वह अपने लक्ष्यों, कार्यक्रमों एवं क्रियाओं को अपनी रूचि के अनुसार व्यवस्थित एवं संगठित करे।
2. समूह समाज कार्य व्यक्तियों में प्रजातांत्रिक जीवन के आदर्शों एवं नेतृत्व की योग्यता का विकास करता है।
3. समूह समाज कार्य द्वारा समूह के सदस्य में रचनात्मक सम्बनध स्थापित करने का प्रयत्न किया जाता है। कार्यकर्ता एक विशेषज्ञ के रूप में कार्य करता है।
4. समूह समाज कार्य समूह के सदस्यों में आत्म निर्देशन की योग्यता का विकास करता है। कार्यकर्ता समूह की सहायता उसी सीमा तक करता है जहाँ तक समूह आवश्यक समझता है।
5. समूह का उपयोग सामूहिक जीवन को सुखमय बनाने के लिए किया जाता है।
6. इस प्रणाली की अपनी विशिष्ट निपुणताएं, सिद्धान्त एवं प्रविधियाँ है।
7. समूह समाज कार्य संस्था के माध्यम से कार्य करता है।
8. यह व्यक्तियों की समानता में विश्वास रखता है और प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक जीवन में बराबर का भाग देने और अपने व्यक्तित्व का विकास करने का अवसर देता है।
9. समूह के सदस्यों के लिए समूह कार्य एक नवीन अनुभव होता है।

8.4 समूह समाज कार्य के विषय में भ्रान्तियाँ

समाज कार्य एक नवीन व्यवसाय है, इस कारण अधिकांश लोग यहाँ तक कि शिक्षित लोग भी इसके अर्थ से पूर्णतः अवगत नहीं हैं। समूह कार्य विषय में भी अनेक अटकलें लगायी जाती हैं तथा अलग-अलग विचार प्रस्तुत किये जाते है। ट्रेकर ने निम्नलिखित भ्रान्तियों का उल्लेख किया हैं:

समूह कार्य एक अभिकरण के रूप में

कुछ लोगों की धारणा है कि समूह कार्य एक ऐसा सामाजिक अभिकरण है जिसके द्वारा कुछ निश्चित उद्देश्यों की पूर्ति की जाती है। परन्तु यह कथन किसी भी प्रकार से सत्य नहीं है क्योंकि समूह कार्य द्वारा अभिकरण के सभी अथवा कुछ कार्य पूरे किये जाते हैं।

समूह कार्य एक विशेष कार्यक्रम के रूप में

कुछ व्यक्ति सोचते हैं कि समूह कार्य एक विशेष कार्यक्रम है परन्तु यह स्वयं में एक प्रणाली है जिसके द्वारा विभिन्न क्रियाओं को सम्पन्न किया जाता है।

समूह कार्य एक विशेष प्रकार के समूह के रूप में

कुछ लोग बताते हैं कि समूह समाज कार्य ऐसा समूह है जिसमें विशेष क्रियाएं सम्पन्न की जाती हैं। परन्तु यह कोई विशेष समूह नहीं होता है। जहाँ जैसी आवश्यकता होती है, समूह का निर्माण कर लिया जाता है और उसके माध्यम से कार्य सम्पादित किये जाते हैं। कुछ लोग क्लब को समूह कार्य मानते हैं क्योंकि इसके द्वारा विभिन्न क्लबों या समूहों के कार्यों को सम्पन्न किया जाता है।

8.5 समूह समाज कार्य के अंग

समूह समाज कार्य एक प्रणाली है जिसके द्वारा कार्यकर्ता व्यक्ति को समूह के माध्यम से किसी संस्था में सेवा प्रदान करता है, जिससे उसके व्यक्तित्व का संतुलित विकास सम्भव है। इस प्रकार सम्पूर्ण समूह कार्य निम्नलिखित तीन अंगों पर आधारित है:

(i) समूह

(ii) कार्यकर्ता, एवं

(iii) संस्था(अभिकरण)

समूह

समूह मानव मात्र की आवश्यकता है। कार्यकर्ता व्यक्ति को समूह सदस्य के रूप मे जानता है तथा उसकी विशेषताओं को पहचानता है। समूह एक आवश्यक साधन तथा यन्त्र होता है, जिसको उपयोग में लाकर सदस्य अपने उद्देश्य की पूर्ति करते हैं। सामान्य गति से काम करने के लिए समूह सदस्यों में कुछ सीमा तक संधियों, उद्देश्यों, बौद्धिक स्तर आयु तथा रूचियों में समानता होनी आवश्यक होती है। इसी समानता पर यह निश्चय होता है कि सदस्य समूह में समान अवसर कहाँ तक पा सकेंगे और कहाँ तक उद्देश्यपूर्ण तथा प्रगाढ़ सम्बन्ध स्थापित हो सकेंगे। समूह तथा कार्यकर्ता सामाजिक, मनोरंजनात्मक तथा शिक्षात्मक क्रियाओं को सदस्यों के साथ सम्पन्न करते हैं, तथा इसके द्वारा वह निपुणताओं का विकास करते हैं। व्यक्ति, समूह के माध्यम से अनेक प्रकार के समूह

अनुभवों को प्राप्त करता है, जो उसके लिए आवश्यक होते हैं। समूह द्वारा वह मित्रों तथा संधियों का भाव उत्पन्न करता है, जिससे सदस्यों की महत्वपूर्ण आवश्यकता| इससे 'मित्रों के साथ रहने की', पूर्ति होती है। वे माता-पिता के नियन्त्रण से अलग होकर अन्य लोगों के साथ सामंजस्य करना सीखते हैं तथा निपुणता व विशेषीकरण प्राप्त करते हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि व्यक्ति के विकास के लिए समूह आवश्यक होता है। समूह ही वह एकमात्र साधन है जहाँ पर व्यक्ति का सामाजीकरण सम्भव होता है| समूह के अन्दर ही वह उन संबंधों की स्थापना करता है जो उसके विकास हेतु अत्यन्त आवश्यक होते हैं। समूह की आवश्यकता को उसे महत्वकाँक्षी सामाजिक प्राणी बनाती है।

कार्यकर्ता

समूह समाज कार्य में कार्यकर्ता उस समूह का सदस्य नहीं होता है, जिसके साथ वह कार्य करता है। कार्यकर्ता में कुछ निपुणताएं होती है, जो व्यक्तियों के संबंधों, व्यवहारों तथा भावनाओं आदि के ज्ञान पर आधारित होती है। उसमें समूह के साथ कार्य करने की अद्भुत क्षमता होती है तथा किसी भी प्रकार की सामूहिक स्थिति से निपटने की शक्ति एवं सहनशीलता होती है। वह अपने सामूहिक अनुभव द्वारा व्यक्ति (सेवार्थी) में परिवर्तन लाता है तथा उसका विकास करता है। इस हेतु कार्यकर्ता को निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना आवश्यक होता है:

1. सामुदायिक स्थिति एवं समूह का प्रकार
2. संस्था के कार्य तथा उद्देश्य,
3. संस्था के कार्यक्रम तथा सुविधाएं,
4. समूह की विशेषताएं,
5. सदस्यों के संबंध, आवश्यकताएं तथा योग्यताएं,
6. संस्था के संसाधन,
7. कार्यकर्ता की स्वयं की निपुणताएं तथा क्षमताएं,
8. समूह की कार्यकर्ता से सहायता प्राप्त करने की इच्छा,
9. समूह की स्वयं की विकास करने की इच्छा, एवं
10. समूह विशेष हेतु संचालित योजनाएं एवं नीतियाँ, आदि।

समूह कार्यकर्ता अपनी सेवाओं द्वारा निर्धारित सामाजिक लक्ष्यों को प्राप्त करने का प्रयास करता है। वह व्यक्ति के स्वतंत्र विकास तथा उन्नति के अवसर प्रदान करने हेतु समुचित वातावरण का निर्माण करता है तथा व्यक्ति के व्यक्तित्व निर्माण के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ उत्पन्न करता है। वह सामाजिक सम्बन्धों को आधार मानकर शिक्षात्मक तथा विकासात्मक क्रियाओं का आयोजन व्यक्ति की समस्याओं के समाधान के लिए करता है। कार्यकर्ता ही वह माध्यम होता है जिसके द्वारा सामूहिकता की भावना को बल मिलता है क्योंकि यदि व्यक्ति समूह के हित की अपेक्षा स्वहित पर अधिक ध्यान देने लगता है तो कार्यकर्ता ही उसे इस विपथन से बचाता है तथा सामूहिक हित के विषय में उसे ज्ञान करवाता है। कहना गलत नहीं होगा कि कार्यकर्ता समूह के विकास का अविभाज्य आधार है।

कार्यकर्ता को समूह कार्य करने वाली संस्था के विषय में निम्नलिखित तथ्यों से भलीभाँति परिचित होना आवश्यक है:

1. कार्यकर्ता को संस्था के उद्देश्यों तथा कार्यों का ज्ञान होना चाहिए,
2. अपनी रूचियों की उन कार्यों से तुलना करके कार्य करने को तैयार रहना चाहिए,
3. संस्था की सामान्य विशेषताओं से अवगत होना चाहिए तथा साथ ही साथ उसके कार्य क्षेत्र का भी ज्ञान होना चाहिए,
4. कार्यकर्ता को इस बात का ज्ञान होना चाहिए कि संस्था के पास समूह की सहायता के लिए क्या-क्या साधन तथा स्रोत हैं,
5. संस्था में सामूहिक सम्बन्ध स्थापन की दशाओं का ज्ञान होना चाहिए,
6. संस्था के कर्मचारियों से अपने सम्बन्ध के प्रकारों की जानकारी होनी चाहिए,
7. कार्यकर्ता को जानकारी होनी चाहिए कि ऐसी संस्थाएं तथा समूह कितने हैं, जिनमें किसी समस्याग्रस्त सदस्य की सहायता की जा सकती है, तथा
8. कार्यकर्ता को संस्था द्वारा समूह के मूल्यांकन की पद्धति का ज्ञान होना चाहिए।

संस्था

यह समूह समाज कार्य का तीसरा सर्वाधिक महत्वपूर्ण अंग है। संस्था की प्रकृति एवं कार्य, कार्यकर्ता की भूमिका को निश्चित करते हैं। समूह कार्यकर्ता अपनी निपुणताओं का उपयोग संस्था के प्रतिनिधि के रूप में करता है क्योंकि समुदाय संस्था के महत्व को समझता है तथा कार्य करने की स्वीकृति देता है। अतः कार्यकर्ता के लिए आवश्यक होता है कि वह संस्था के कार्यों से भलीभाँति परिचित हो। समूह के साथ संस्था निम्नलिखित कार्य करती है:

1. समूह में एक जुटना बनाए रखती है,
2. समूह विकास हेतु संसाधनों का प्रबंध करती है,
3. कार्यकर्ता हेतु कार्यक्रम संचालन के लिए आधार प्रदान करती है।
4. कार्यक्रम विकास में कार्यकर्ता की सहायता करती है, एवं
5. समुदाय के विषय में आवश्यक जानकारी एवं आँकड़े एकत्र करती है, आदि।

इस प्रकार समूह समाज कार्य में क्रिया विधियों के समुचित संचालन हेतु संस्था का होना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि कार्यकर्ता कार्यक्रम का निर्माण तथा संचालन संस्था के द्वारा ही करता है और संस्था ही वह साधन है जो कार्यकर्ता की सोच को आकार प्रदान करता है।

8.6 समूह समाज कार्य का महत्व

मनुष्य की भौतिक तथा मानवीय आवश्यकताएं समूह में ही रहकर पूरी हो सकती हैं। समूह समाज कार्य इन आवश्यकताओं की पूर्ति मे सहायता करता है। अतः समूह समाज कार्य एक आवश्यक सेवा है। इसके महत्व को निम्नलिखित प्रकार से आँका जा सकता है:

1. व्यक्ति समूह में ही जन्म लेता है, बढ़ता है तथा सामाजिक प्राणी बनता है। समूह से पृथक् उसका कोई अस्तित्व नहीं हैं। सामूहिक जीवन ही व्यक्ति का वास्तविक जीवन है। व्यक्ति का विकास सामूहिक अनुभव पर ही निर्भर करता है। भौतिकवादी युग के कारण सामूहिक जीवन अस्त-व्यस्त हो गया है। वर्तमान युग ही नहीं वरन् विकास के प्रत्येक चरण में मनुष्य ने स्वयं को एकाकी ही पाया है। वह इसी कारण से मानसिक संतोष की स्थिति में नहीं पहुँच पाया है। इसी कारण से समूह समाज कार्य की आवश्यकता को बल मिलता है।

2. विकास के परिणामस्वरूप कहीं भी आन्तरिक रूप से एकता देखने को नहीं मिलती है। सभी लोग अपने तक सीमित होकर रह गये हैं तथा पृथक्वाद की विचारधारा दिनोदिन बढ़ रही है। इस विचारधारा के कारण मानव अपने को कभी निरीह, तो कभी असहाय समझने लगता है। वह सदैव चिंता में रहता है, जिससे मानसिक विकारों का शिकार हो जाता है। समूह कार्य इस दिशा में प्रयत्न करता है कि व्यक्ति किसी भी अवस्था में एकाकी जीवन न व्यतीत करे।

3. प्रत्येक व्यक्ति की मूल इच्छा होती है कि उसका समाज में स्थान हो, लोग उसका आदर एवं सम्मान करें। समूह कार्य अपने कार्यक्रमों के माध्यम से प्रत्येक सदस्य को यह अनुभव करने का अवसर देता है कि उसका भी कोई महत्व हैं। समूह समाज कार्य उसकी इस इच्छा की संतुष्टि करता है।

4. समाज में कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है जो यह न चाहता हो कि उसके कार्यों, व्यवहारों तथा विचारों को समाज में मान्यता प्राप्त हो। लेकिन आज व्यक्ति का जीवन इतना संकटमय है कि स्वयं ही परेशान रहता है। उसका प्रयत्न सदैव को अनुकूल बनाने में लगा ही रहता है। समूह कार्य द्वारा प्रत्येक सदस्य को अपनी उपस्थिति एवं उपलब्धि की स्वीकृति प्राप्त होती है। कार्यकर्ता समूह की विभिन्न गतिविधियों में व्यक्ति की इच्छाओं तथा सुझावों को स्वीकृति प्रदान कर उनके अहं की संतुष्टि करता है।

5. समूह में प्रत्येक सदस्य अपनी भूमिका तभी पूरी कर सकता है, जब दूसरे सदस्य उसे अवसर प्रदान करें। इस प्रकार वह दूसरों के साथ रहना, काम करना तथा व्यवहार करना सीखता हैं, जिसका परिणाम होता है कि वह अपने जीवन का रास्ता समायोजनात्मक बना लेता हैं और धीरे-धीरे वह समायोजन करना सीख लेता है।

6. समूह कार्य व्यक्ति के समग्र होने की इच्छा की पूर्ति करता है। सभी व्यक्तियों की यह इच्छा होती है कि वह सम्पूर्ण का अंश बने तथा उसे समाज के एक आवश्यक अंग के रूप में मान्यता प्राप्त हो। समूह कार्यक्रमों के माध्यम से इस इच्छा की संतुष्टि होती हैं।

7. समूह अनुभव द्वारा सहयोग से कार्य करने तथा रहने के गुण का विकास होता है। वर्तमान समय में सहयोगिक क्रियाएं अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि मनुष्य की प्रत्येक आवश्यकता की पूर्ति दूसरों के सहयोग पर निर्भर है। समूह कार्य द्वारा उन्हें सहयोगिक क्रियाओं का अनुभव होता है। इसके लिए समूह कार्य उद्देश्यपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने में सहायता करता है। व्यक्ति समूह का सदस्य किसी विशेष उद्देश्य को लेकर बनता है। इन उद्देश्यों के आधार पर ही सम्बन्ध स्थापित करता है। इस प्रकार वह संबंधों का उपयोग उद्देश्यपूर्ण ढंग से करना सीखता है।

8. समूह कार्य द्वारा प्रजातांत्रिक मूल्यों का विकास होता है। सामूहिक अनुभव प्रत्येक सदस्य को समानता, स्वतंत्रता तथा सामाजिक न्याय प्रदान करता हैं।

9. समूह मानवीय क्षमताओं को दृढ़ करता है। यह व्यक्ति एवं समूह की क्षमताओं को सुदृढ़ बनाता है तथा उनमें वृद्धि करता है। सामूहिक अनुभव द्वारा व्यक्ति की छिपी क्षमताएं तथा योग्यताएं उभरकर प्रकट होती है, जिससे वह अपना भविष्य सुखमय बनाता है।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि आधुनिक समय में समूह समाज कार्य महत्वपूर्ण प्रणाली के रूप में सामाजिक जीवन को सुखमय बनाने के लिए उपयोग में लाया जा रहा है। साथ ही साथ यह भी ध्यान देने योग्य तथ्य है कि युग चाहे कोई भी रहा हो, समूह की आवश्यकता मनुष्य को सदा ही रही है, क्योंकि वह प्रारम्भ से ही जानता था कि वह एकाकी रूप से जीर्णतम पशु है परन्तु सामूहिक रूप से उससे अधिक शक्तिशाली अन्य कोई नहीं है। मनुष्य के सामूहिक प्रयासों ने ही वर्तमान में सर्वाधिक शक्तिशाली बना दिया है।

इस प्रकार हम देखते हैं समूह समाज कार्य का अभ्युदय व्यक्ति की सामूहिकता की आवश्यकता को पूरा करने के लिए हुआ है। समूह समाज कार्य स्वयं में अत्यन्त ही महत्वपूर्ण प्रणाली है जिसके माध्यम से कार्यकर्ता व्यक्ति को समूह की तथा समूह को व्यक्ति की आवश्यकता से परिचित करवाते हुए व्यक्ति को सम्मानपूर्वक जीने के गुणों का विकास करता है और समूह में प्रजातांत्रिक मूल्यों की वृद्धि करता है जिससे समूह का नेतृत्व तानाशाह न होने पाए।

8.7 सारांश

प्रस्तुत इकाई में सर्वप्रथम समूह की विशेषताओं के विषय में अध्ययन किया। समूह समाज कार्य की विशेषताओं के विषय में ज्ञान प्राप्त किया। तत्पश्चात् समूह समाज कार्य की भ्रान्तियों को समझा। समूह समाज कार्य के अंगों के बारे में अध्ययन किया तथा इकाई के अंत में समूह समाज कार्य के महत्व के विषय में जानकारी प्राप्त की।

8.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. समूह की विशेषताओं का वर्णन कीजिये।
2. समूह समाज कार्य की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
3. समूह समाज कार्य के विषय में फैली भ्रान्तियों को समझाइये।
4. समूह समाज कार्य के अंग का वर्णन करते हुए इसके महत्व को समझाइये।

8.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

सिंह, डी॰ के॰, भारती, ए॰ के॰, सोशल वर्क कान्सेप्ट ऐंड मैथड्स, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.

सिंह, डी॰ के॰, पालीवाल, सौरभ, मिश्र, रोहित, मानव समाज, संगठन एवं विघटन के मूल तत्व, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2010.

मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक सामूहिक कार्य, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, वर्ष 1977.

सिंह, सुरेन्द्र, मिश्र, पी॰ डी॰, समाज कार्य- इतिहास, दर्शन एवं प्रणालियाँ,

रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2006.

मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, वर्ष 1985.

सिंह, डी॰ के॰, भारत में समाज कल्याण प्रशासन: अवधारणा एवं विषय क्षेत्र, रायल बुक डिपो लखनऊ, वर्ष 2011.

सिंह, सुरेन्द्र, वर्मा, आर॰ बी॰ एस॰, भारत में समाज कार्य का क्षेत्र, रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.

मिश्रा, पी॰ डी॰, मिश्रा, बीना, व्यक्ति और समाज, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2007.

इकाई-9

सामूहिक समाज कार्य : अवधारणा एवं आवश्यकता

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2. सामूहिक समाज कार्य की अवधारणा

9.3 सामूहिक कार्य की भ्रान्तियाँ

9.4 सामूहिक कार्य की मूल मान्यताएँ

9.5 सामूहिक कार्य दर्शन

9.6 सामाजिक सामूहिक कार्य की आवश्यकता एवं महत्व

9.7 सारांश

9.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

9.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

9.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

1. सामूहिक कार्य की अवधारणा एवं अर्थ का अध्ययन कर सकेंगे।
2. सामूहिक कार्य की भ्रान्तियों के विषय में जान सकेंगे।
3. सामूहिक कार्य की मूल मान्यताओं का वर्णन कर सकेंगे।
4. सामूहिक कार्य दर्शन का वर्णन कर सकेंगे।
5. तत्पश्चात् आप सामाजिक सामूहिक कार्य की आवश्यकता एवं महत्व को समझ सकेंगे।

9.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में सामूहिक समाज कार्य की अवधारणा एवं आवश्यकता के विषय का वर्णन किया गया है। व्यक्तित्व के विकास के लिए व्यक्ति की सामूहिक जीवन सम्बंधी इच्छाओं एवं आवश्यकताओं की संतुष्टि आवश्यक होती है, दूसरी ओर समाजीकरण से समुचित लाभ प्राप्त करने के लिए सामूहिक जीवन में भाग लेने, अपनत्व की भावना का अनुभव करने, अन्य व्यक्तियों से परस्पर सम्बंध स्थापित करने, मतभेदों को निपटाने तथा अपने हितों तथा समूह के हितों को ध्यान में रखकर कार्यक्रम नियोजित और संचालित करने की योग्यता होना

जरूरी है। जब सामूहिक जीवन में कोई व्यवधान उत्पन्न हो जाता है, तो व्यक्ति का जीवन अस्त व्यस्त तथा व्यक्तित्व विघटित हो जाता है। सामूहिक कार्य इस प्रकार की समस्याओं के समाधान करने का प्रयत्न करता है। मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समूह में रहता है। उसकी भौतिक तथा मानवीय आवश्यकताएं समूह में ही रहकर पूरी हो सकती है। सामाजिक सामूहिक कार्य इन आवश्यकताओं की संतुष्टि में सहायता करता है।

9.2 सामूहिक समाज कार्य की अवधारणा

सामूहिक समाज कार्य समाज कार्य की एक प्रणाली है, जो सामूहिक क्रियाओं के द्वारा रचनात्मक सम्बन्ध स्थापित करने की योग्यता का विकास करती है। विभिन्न सामाजिक विज्ञानों के विकास ने यह सिद्ध कर दिया है कि व्यक्तित्व के विकास के लिए व्यक्ति की सामूहिक जीवन सम्बन्धी इच्छाओं एवं आवश्यकताओं की संतुष्टि आवश्यक होती है। जहाँ एक ओर सामूहिक सहभागिता व्यक्ति के लिए आवश्यक होती है, वहीं दूसरी ओर भागीकरण से समुचित लाभ प्राप्त करने के लिए सामूहिक जीवन में भाग लेने, अपनत्व की भावना का अनुभव करने, अन्य व्यक्तियों से परस्पर सम्बन्ध स्थापित करने, मतभेदों को निपटाने तथा अपने हितों तथा समूह के हितों को ध्यान में रखकर कार्यक्रम नियोजित और संचालित करने की योग्यता होना जरूरी होता है। सामूहिक कार्य द्वारा इन विशेषताओं एवं योग्यताओं का विकास किया जाता है। व्यक्ति के लिए सामूहिक जीवन उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि उसकी भौतिक आवश्यकताऐं महत्वपूर्ण है। जब सामूहिक जीवन में कोई व्यवधान उत्पन्न हो जाता है तो व्यक्ति का जीवन अस्त व्यस्त तथा व्यक्तित्व विघटित हो जाता है। सामूहिक कार्य इस प्रकार की समस्याओं के समाधान करने का प्रयत्न करता है।

9.3 सामूहिक कार्य की भ्रान्तियाँ

समाज कार्य एक नवीन व्यवसाय है| इसे अधिकांश लोग यहां तक कि शिक्षित लोग भी इसके अर्थ से पूर्णतया अवगत नहीं हैं। सामूहिक कार्य विषय में भी अनेक अटकलें लगायी जाती हैं तथा अलग-अलग विचार प्रस्तुत किये जाते है। ट्रेकर ने निम्नलिखित भ्रान्तियों का उल्लेख किया है।

सामूहिक कार्य एक अभिकरण के रूप में

कुछ लोगों की धारणा है कि सामूहिक कार्य से सामाजिक अभिकरण के सभी उद्देश्य होते हैं। परन्तु यह कथन किसी भी प्रकार से सत्य नही है क्योकि सामूहिक कार्य द्वारा अभिकरण के सभी अथवा कुछ कार्य पूरे किये जाते हैं।

सामूहिक कार्य एवं विशेष कार्यक्रम के रूप में:

कुछ व्यक्तियों की धारणा है कि सामूहिक कार्य एक विशेष कार्यक्रम स्वयं नही है बल्कि इसके द्वारा विभिन्न कार्यक्रम क्रियाओं को सम्पन्न किया जाता है। यदि स्वयं कार्यक्रम होता तो कोई एक ही कार्यक्रम चलाया जाय। परन्तु यहां पर अनेक कार्यक्रम सम्पन्न किये जाते हैं।

सामूहिक कार्य एक विशेष प्रकार के समूह के रूप में:

कुछ लोगों का विचार है कि सामाजिक सामूहिक कार्य एक ऐसा समूह है जिसमें विशेष क्रियायें सम्पन्न की जाती हैं। यह कोई विशेष समूह नही होता है। जहाँ जैसी आवश्यकता होती है, समूह का निर्णय कर लिया जाता है और उसके माध्यम से कार्य सम्पादित किये जाते हैं। कुछ लोग क्लब को सामूहिक कार्य मानते हैं, क्योंकि इसके द्वारा विभिन्न क्लबों व समूहों के कार्यों को सम्पन्न किया जाता है।

9.4 सामूहिक कार्य की मूल मान्यताएँ

सामाजिक सामूहिक कार्य की निम्नलिखित प्रमुख मान्यताएं हैं-

1.शिक्षात्मक तथा मनोरंजनात्मक क्रियायें व्यक्ति तथा समाज के लिए लाभदायक होती हैं। सामूहिक कार्यकर्ता इसी मान्यता के आधार पर व्यक्ति को समूह के माध्यम से शिक्षात्मक तथा मनोरंजनात्मक दोनों प्रकार की सेवायें तथा उसका अनुभव प्रदान करता है।

2.कार्यकर्ता में अपनी भूमिका निभाने की अन्तरदृष्टि होती है। वह सदैव समूह के अन्तर्गत दो बातों का ध्यान रखता है। एक तरफ वह कार्यक्रम, क्रियाओं तथा उनकी उन्नति देखता है तथा दूसरी ओर समूह में सामाजिक सम्बन्धों की भूमिका को ध्यान में रखता है। अतः वह अपने सम्बन्धों को भी साथ ही साथ समझता जाता है।

3. कार्यक्रम सदैव व्यक्तियों पर प्रभावात्मक होना चाहिए। यह मान्यता इस बात को निश्चित करती है कि कार्यकर्ता के सम्बन्ध व्यक्ति केन्द्रित हों, न कि क्रिया-केन्द्रित। कार्यकर्ता की दृष्टि से सफलता खेल के प्रकार में नहीं बल्कि सदस्यों के अनुभवों से सम्बन्धित होती है। कार्यक्रम सदैव अनुभव के अनुसार आयोजित किये जाने चाहिए।

4, सामूहिक कार्य के अन्तर्गत कार्यक्रम तथा क्रियायें कार्यस्थिति, पारिवारिक सम्बन्ध तथा सामुदायिक मनोवृत्ति पर आधारित हों। कार्यकर्ता को न केवल सांवेगिक, सामाजिक तथा शारीरिक तत्वों के कारकों का ज्ञान हो बल्कि उसे समूह के सदस्यों, कार्यस्थिति, दशा, पारिवारिक सम्बन्ध तथा सामुदायिक मनोवृत्तियों

से अवगत होना चाहिए।

5. सदस्यों के व्यवहार का ज्ञान आवश्यक होता है। यदि कार्यकर्ता व्यक्तियों को शिक्षात्मक तथा मनोरंजनात्मक क्रियाओं द्वारा पूर्ण सफलता एवं उद्देश्य से सहायता करना चाहता है तो उसे उनके व्यवहारों का ज्ञान अवश्य हो। बिना इस ज्ञान के वह सफल नहीं हो सकता है।

6.कार्यकर्ता व्यवसायिक रूप से कार्य करने में सक्षम हो। इसका तात्पर्य यह है कि कार्यकर्ता में आवश्यक योग्यता, निपुणता, ज्ञान तथा कार्य करने की आन्तरिक इच्छा हो और वह व्यावहारिक रूप से अपने उद्देश्यों को कार्यान्वित करने में निपुण हो।

7. समाजकार्य व्यक्तियों की आवश्यकता की संतुष्टि पर बल देता है। जब व्यक्ति की आवश्यकताओं का समाधान नहीं होता है तो उसका सामाजिक संतुलन बिगड़ जाता है। इस स्थिति में समाज कार्य व्यक्तियों की वैयक्तिक रूप से या समूह के माध्यम से सहायता करता है।

9.5 सामूहिक कार्य दर्शन

व्यक्ति अकेला नहीं रहता है। वह परिवार जाति तथा द्वितीयक समूहों में रहकर ही उन्नति एवं विकास कर सकता है। उसका उचित विकास तभी हो सकता है जब वह सम्पूर्ण का एक अंग के रूप में रहता है तथा कार्य करता है। उसके सभी शारीरिक तथा मानसिक कार्य तभी सही, सामान्य व स्वस्थ विकसित होकर व्यवहार करते हैं जब वे पर्याप्त सामाजिक भावनाओं के साथ जुड़े रहते हैं व सहयोग के लिए संगठित व एकत्रित होते हैं। मानव जीवन की सभी समस्यायें सहयोग की क्षमता तथा उसकी तैयारी की मांग करती हैं। यही सामाजिक भावनाओं के दृष्टिगोचर चिन्ह हैं।

प्रत्येक व्यक्ति को एक दूसरे की आवश्यकता होती है क्योंकि समूह में वह अधिक शक्तिशाली हो जाता है। साधारणतया मनुष्य एक निर्बल प्राणी है। जन्म से वह दूसरों पर निर्भर होता है। वह अपनी शारीरिक, मनावैज्ञानिक, बौद्धिक तथा आत्मिक शक्तियों का विकास समूह के ही माध्यम से करता है।

सामूहिक अनुभव की आवश्यकता मौलिक एवं सर्वमान्य है। ग्रेस क्वायल के अनुसार सामूहिक अनुभव 5 प्रकार से महत्वपूर्ण हैं-

(अ) परिपक्वता प्रक्रिया में जिस प्रकार से परिवार का महत्वपूर्ण योगदान होता है। उसी प्रकार से लघु समूहों की भूमिका अतुलनीय होती है। बालकों का नर्सरी स्कूल, पूर्ण विद्यालय शिक्षा, खेल समूह तथा इसी प्रकार के अन्य समूहों से जो अनुभव प्राप्त होता है उसी के आधार पर उसका व्यक्तित्व निर्मित होता है।

(ब) दूसरे सम्बन्धों के लिए पूरक: सामूहिक अनुभव न केवल व्यक्तित्व का विकास करते हैं बल्कि वे सम्बन्धों को और अधिक प्रगाढ़ बनाने व उनका सकारात्मक योगदान करने में महत्वपूर्ण होते हैं। सामूहिक अनुभव से प्रौढ़ भी लाभ प्राप्त करते हैं तथा सम्बन्धों का उचित प्रयोग करना सीखते हैं।

(स) सक्रिय नागरिकता की तैयारी: जब व्यक्ति सामूहिक क्रियाओं में भाग लेता है तो वह अपने अधिकारों व कर्तव्यों का ज्ञान प्राप्त करता है। समूह में नागरिकता की शिक्षा देने की बड़ी क्षमता होती है। वह स्थानीय तथा राष्ट्रीय समस्याओं से अवगत होता है तथा उन समस्याओं को दूर करने की प्रक्रिया में भाग लेता है।

(द) सामाजिक विघटन के लिए उपचार: समूह का उपयोग बाल अपराधियों तथा अपराधियों के साथ इसीलिए किया जाता है क्योंकि इसके माध्यम से वे नये तरीके से रहना सीखते हैं और नकारात्मक प्रवृत्तियों का ह्रास होता है।

(फ) अभ्यन्तर मनोवैज्ञानिक असमायोजन का उपचार: यह मानसिक रोगियों के साथ महत्वपूर्ण कार्य करता है।

सामूहिक कार्य की धारणा है कि सामाजिक संस्था के माध्यम से व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास और मनोवृत्तियों में परिवर्तन दूसरे लोगों के अनुभवों द्वारा किया जा सकता है। व्यक्तियों के लिए सामाजिक संस्थायें एक यंत्र का कार्य करती हैं। इसके द्वारा ही वे अपनी मूलभूत आवश्यकताओं को संतुष्ट करते हैं तथा विकास की ओर बढ़ते हैं। संस्थायें समूहों की कुछ सामान्य तथा कुछ विशिष्ट आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए संगठित की जाती हैं तथा उनका प्रतिनिधित्व करती हैं।

जिन समूहो में सामूहिक कार्यकर्ता अपनी सेवाओं का सदुपयोग करता है, उनके सदस्यों में न केवल एक गुण का विकास होता है वरन् सम्पूर्ण प्रतिभा का विकास होता है। व्यक्ति न केवल समूहों में विकास करते हैं बल्कि समूहों द्वारा ही विकास सम्भव होता है।

समूह द्वारा व्यक्तित्व का विकास, अभिरूचियों में परिवर्तन तथा आदतों का संग्रहण होता है। इसलिए यदि समूह का निर्माण सुनियोजित ढंग से किया जाता है तो उद्देश्य की पूर्ति सुगमता से हो सकती है।

पारस्परिक स्वीकृति के बिना सामाजिक जीवन का कोई महत्व नहीं है। स्वीकृति अस्वीकृति की घटना समूह में उस समय घटित होती है, जब समूह में अन्तःक्रिया होती है तथा विचारों, अभिरूचियों व इच्छाओं की अभिव्यक्ति होती है।

सामूहिक कार्य का विश्वास है कि जनतांत्रिक व्यवहार सीखा हुआ व्यवहार है। उसका विश्वास है कि प्रजातंत्र दो बातों पर निर्भर है: (1) व्यक्तियों को प्रजातंत्र समझने का अवसर मिले (2) उन्हें जनतांत्रिक ढंग से रहने का अवसर प्राप्त हो।

9.6 सामाजिक सामूहिक कार्य की आवश्यकता एवं महत्व

मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समूह में रहता है। उसकी भौतिक तथा मानवीय आवश्यकतायें समूह में ही रहकर पूरी हो सकती हैं। सामाजिक सामूहिक कार्य इन आवश्यकताओं की संतुष्टि में सहायता करता है। अतः सामूहिक कार्य एक आवश्यक सेवा है। उसकी आवश्यकता को निम्न प्रकार से आंका जा सकता है।

1. सामूहिक कार्य द्वारा मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। व्यक्ति समूह में ही जन्म लेता है, बढ़ता है तथा सामाजिक प्राणी बनता है। समूह से पृथक् उसका कोई अस्तित्व नहीं है। सामूहिक जीवन ही व्यक्ति का वास्तविक जीवन है। व्यक्ति का विकास सामूहिक अनुभव पर ही निर्भर करता है। विभिन्न अध्ययनों से पता चला है कि समुचित सामूहिक जीवन के अभाव में व्यक्ति व्यक्ति नहीं बनता है। वर्तमान समय में भौतिकवादी युग के कारण सामूहिक जीवन का अस्तित्व अजीबोगरीब हो गया है। व्यक्ति रहता तो लाखों के बीच है लेकिन अपने का उसका आवश्यक अंग नहीं समझ पा रहा है। धीरे-धीरे वह अपने को मशीन समझने लगा है। यह विचार स्वयं उसके तथा समाज के लिए हानिकारक है। वह प्रेम, सौहार्द, मित्रता आदि का अभाव देखता है। अतः ऐसी स्थिति में सामूहिक कार्य महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

2. सामूहिक कार्य व्यक्ति के पृथक्कीकरण एवं एकान्तता की प्रकृति को कम करता है। नगरीकरण के परिणामस्वरूप कहीं भी आन्तरिक रूप से एकता देखने को नहीं मिलती है। सभी लोग अपने तक ही सीमित होकर रह गये हैं तथा पृथकवाद की विचारधारा दिनोंदिन बढ़ रही है। इस विचारधारा के कारण मानव अपने को कभी निरीह, तो कभी असहाय समझने लगता है। वह सदैव चिंतातुर रहता है, जिससे मानसिक रोगों का शिकार हो जाता है। सामूहिक कार्य इस दिशा में प्रयत्नशील हैं कि व्यक्ति किसी भी अवस्था में एकांत जीवन न व्यतीत करे, जो स्वयं दबावमूलक बन जाय।

3. सामूहिक कार्य व्यक्ति की महत्ता की इच्छा संतुष्ट करता है। प्रत्येक व्यक्ति की मौलिक इच्छा होती है कि उसका समाज में स्थान हो, लोग उसका आदर एवं सम्मान करें। सामूहिक कार्य अपने कार्यक्रमों के माध्यम से प्रत्येक सदस्य को यह अनुभव का अवसर देता है कि उसका भी कहीं कोई महत्व है।

4. सामूहिक कार्य स्वीकृत किये जाने की इच्छा को संतुष्ट करता है। समाज में ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है, जो यह न चाहता हो कि उसके कार्यों, व्यवहारों तथा विचारों को मान्यता प्राप्त हो। लेकिन आज व्यक्ति का जीवन इतना संकटमय है कि वह स्वयं ही परेशान रहता है। उसका सदैव प्रयत्न अपने को अनुकूल बनाने में ही लगा रहता है। सामूहिक कार्य द्वारा प्रत्येक सदस्य को अपनी उपलब्धि की स्वीकृति प्राप्त होती है।

5. सामूहिक कार्य व्यक्ति को आत्म-निर्भर बनाता है। सामूहिक कार्य के माध्यम से लघु उद्योगों तथा हस्तशिल्प का प्रशिक्षण दिया जाता है, जिससे सदस्यों में आर्थिक क्षमता बढ़ती है।

6. सामूहिक अनुभव द्वारा व्यक्ति सामंजस्य स्थापित करना सीखता है। समूह में प्रत्येक सदस्य को अपनी-अपनी भूमिका पूरी करनी होती है। वह अपनी भूमिका तभी पूरी कर सकता है, जब दूसरे सदस्य उसे अवसर प्रदान करें। इस प्रकार वह दूसरों के साथ रहना, काम करना तथा व्यवहार करना सीखता है, जिसका परिणाम यह होता है कि वह अपने जीवन का रास्ता समायोजनात्मक बना लेता है।

7. सामूहिक कार्य निर्भरता को स्वीकार करने की क्षमता उत्पन्न करता है। शारीरिक रूप से बाधित अशक्त तथा वृद्धों का समूह जब सामूहिक क्रिया करता है तो उनमें एक ओर आशा का संचार होता है तथा दूसरी ओर अपनी निर्भरता को स्वीकार करने की क्षमता आती है।

8. सामूहिक कार्य समग्र होने की इच्छा की पूर्ति करता है। सभी व्यक्तियों की यह इच्छा होती है कि वह सम्पूर्ण का अंश बने तथा एक आवश्यक अंश के रूप में मान्यता प्राप्त हो। सामूहिक कार्यक्रमों के माध्यम से इस इच्छा की संतुष्टि सम्भव होती है।

9. सामूहिक अनुभव द्वारा सहयोग से कार्य करने तथा रहने के गुण का विकास होता है। वर्तमान समय में सहयोगिक क्रियायें अत्यन्त आवश्यक हैं, क्योंकि उसकी प्रत्येक आवश्यकता की पूर्ति दूसरों के सहयोग पर निर्भर है। सामूहिक कार्य द्वारा उन्हें सहयोगिक क्रियाओं का अनुभव होता है।

10. सामूहिक कार्य उद्देश्यपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने में सहायता करता है। व्यक्ति समूह का सदस्य किसी विशेष उद्देश्य को लेकर बनता है। इन उद्देश्यों के आधार पर ही सम्बन्ध स्थापित करता है। इस प्रकार वह सम्बन्धों का उपयोग उद्देश्यपूर्ण ढंग से करना सीख लेता है।

11. सामूहिक कार्य द्वारा प्रजातांत्रिक मूल्यों का विकास होता है। सामूहिक अनुभव प्रत्येक सदस्य को समानता, स्वतन्त्रता तथा सामाजिक न्याय प्रदान करता है।

12. सामूहिक कार्य मनोसामाजिक समस्याओं को दूर करता है। सामूहिक कार्य न केवल मनोरंजन प्रदान करता है, सामूहिक क्रियाओं के माध्यम से मानसिक बोझ भी हल्का होता है तथा मन को राहत मिलती है।

13. मानवीय क्षमताओं को दृढ़ करता है। सामूहिक अनुभव द्वारा व्यक्ति की छिपी क्षमतायें तथा योग्यतायें उभरकर प्रगट होती हैं, जिससे वह अपने भविष्य को जीवन सुखमय बनाता है।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि आधुनिक समय में सामाजिक सामूहिक कार्य महत्वपूर्ण प्रणाली के रूप में सामाजिक जीवन को सुखमय बनाने के लिए उपयोग में लायी जा रही है।

13.7 सारांश

प्रस्तुत इकाई में सामूहिक कार्य की अवधारणा को समझा। उसके पश्चात् सामूहिक कार्य की भ्रान्तियों के विषय में पढ़ा और ज्ञान प्राप्त किया। तत्पश्चात् सामूहिक कार्य की मूल मान्यताओं का अध्ययन किया। जो सामूहिक कार्य में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। फिर सामूहिक कार्य दर्शन के विषय में ज्ञान प्राप्त किया तथा अंत में सामाजिक सामूहिक कार्य की आवश्यकता तथा महत्व का अध्ययन किया।

9.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. सामूहिक समाज कार्य की अवधारणा का वर्णन कीजिए।
2. सामूहिक समाज कार्य की भ्रान्तियों को समझाते हुए इनका वर्णन कीजिए।
3. सामूहिक समाज कार्य की मूल मान्यताओं एवं सामूहिक समाज कार्य दर्शन का विस्तृत रूप से समझाते हुए विस्तृत रूप से वर्णित करता हुआ।
4. सामाजिक सामूहिक कार्य की आवश्यकता एवं महत्व को संक्षिप्त रूप से समझाइये।

9.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

सिंह, डी॰ के॰, भारती, ए॰ के॰, सोशल वर्क कान्सेप्ट ऐंड मैथड्स, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.

सिंह, डी॰ के॰, पालीवाल, सौरभ, मिश्र, रोहित, मानव समाज, संगठन एवं विघटन के मूल तत्व, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2010.

मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक सामूहिक कार्य, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, वर्ष 1977.

सिंह, सुरेन्द्र, मिश्र, पी॰ डी॰, समाज कार्य- इतिहास, दर्शन एवं प्रणालियाँ,

रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2006.

मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, वर्ष 1985.

सिंह, डी॰ के॰, भारत में समाज कल्याण प्रशासन: अवधारणा एवं विषय क्षेत्र, रायल बुक डिपो लखनऊ, वर्ष 2011.

सिंह, सुरेन्द्र, वर्मा, आर॰ बी॰ एस॰, भारत में समाज कार्य का क्षेत्र, रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.

मिश्रा, पी॰ डी॰, मिश्रा, बीना, व्यक्ति और समाज, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2007.

इकाई-10

सामूहिक कार्य : अर्थ एवं परिभाषा

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 सामूहिक कार्य का अर्थ

10.3 सामूहिक कार्य की परिभाषा

10.4 परिभाषाओं का विश्लेषण

10.5 सारांश

10.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

10.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

10.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप

1. सामूहिक कार्य के अर्थ एवं अवधारणा का वर्णन कर सकेंगे।
2. तत्पश्चात् विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गई सामूहिक कार्य की परिभाषाओं के विषय में जान पायेंगे। सामूहिक कार्य की परिभाषाओं में मुख्य रूप से न्यूज टेट्टर, क्वायल ग्रेस, विल्सन एण्ड राइलैण्ड, हैमिल्टन तथा कर्ले आडम आदि प्रमुख विद्वानों का नाम उल्लेखनीय है।

10.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में सामूहिक कार्य के अर्थ एवं परिभाषाओं का वर्णन किया गया है। सामूहिक समाज कार्य, उद्देश्यों की पूर्ति अन्य प्रणालियां समाज द्वारा दी जाती है। अतः सामूहिक समाज कार्य के अर्थ, सिद्धान्त, दर्शन, निपुणताओं तथा कार्यविधियों का ज्ञान होना आवश्यक है। सामूहिक समाज कार्य का उद्देश्य सामूहिक स्थितियों में व्यक्ति की अंतःक्रियाओं को उत्पन्न करना जिससे समान उद्देश्यों के लिए एकीकृत, सहयोगिक सामूहिक क्रिया हो सके। इसके अलावा सामाजिक सामूहिक कार्य समाज कार्य की एक ऐसी प्रणाली है जो व्यक्तियों की सामाजिक कार्यात्मकता बढ़ाने में सहायता प्रदान करती है, उद्देश्यपूर्ण सामूहिक अनुभव द्वारा व्यक्तिगत, सामूहिक और सामुदायिक समस्याओं की ओर प्रभावकारी ढंग से सुलझाने में सहायता प्रदान करती है। सामाजिक सामूहिक कार्य एक मनो-सामाजिक प्रक्रिया है, जो नेतृत्व की योग्यता और सहकारिता के विकास से उतनी ही सम्बन्धित है, जितनी सामाजिक उद्देश्य के लिए सामूहिक अभिरूचियों के निर्माण से है।

10.2 सामूहिक समाज कार्य का अर्थ

सामूहिक समाज कार्य समाज कार्य की एक प्रणाली है, जो सामूहिक क्रियाओं के द्वारा रचनात्मक सम्बन्ध स्थापित करने की योग्यता का विकास करता है। विभिन्न समाज विज्ञानों के विकास ने यह सिद्ध कर दिया है कि व्यक्तित्व के विकास के लिए व्यक्ति की सामूहिक जीवन सम्बन्धी इच्छाओं एवं आवष्यकताओं की संतुष्टि आवश्यक होती है। जहाँ एक ओर सामूहिक सहभागिता व्यक्ति के लिए आवश्यक होती है, वहीं दूसरी ओर सहभागीकरण से समुचित लाभ प्राप्त करने के लिए सामूहिक जीवन में भाग लेने, अपनत्व की भावना का अनुभव करने, अन्य व्यक्तियों से परस्पर सम्बन्ध स्थापित करने, मतभेदों को निपटाने तथा अपने हितों तथा समूह के हितों को ध्यान में रखकर कार्यक्रम नियोजित और संचालित करने की योग्यता होना जरूरी होता है। सामूहिक समाज कार्य द्वारा इन विषेषताओं एवं योग्यताओं का विकास किया जाता है।

सामूहिक जीवन का आधार सामाजिक सम्बन्ध है। मान्टैग्यू ने यह विचार स्पष्ट किया है कि सामाजिक सम्बन्धों का तरीका जैविकीय निरन्तरता पर आधारित है। जिस प्रकार से जीव की उत्पत्ति होती है उसी प्रकार से सामाजिक अभिलाषा भी उत्पन्न होती है। जीव के प्रकोष्ठ (cell)एक दूसरे से उत्पन्न होते हैं, उनके लिए और किसी प्रकार से उत्पन्न होना सम्भव नहीं है। प्रत्येक प्रकोष्ठ अपनी कार्य प्रक्रिया के ठीक प्रकार से होने के लिए दूसरे प्रकोष्ठों की अन्तःक्रिया पर निर्भर होती है अर्थात् प्रत्येक अवयव सम्पूर्ण में कार्य करता है। सामाजिक अभिलाषा भी उसका अंग है। यह मनुष्य का मूल प्रवृत्तियात्मक गुण है, जिसे उसने जैविकीय वृद्धि प्रक्रिया से तथा उसकी दृढ़ता से प्राप्त किया है।

व्यक्ति के लिए सामूहिक जीवन उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि उसकी भौतिक आवश्कताऐं महत्वपूर्ण हैं। जब सामूहिक जीवन में कोई व्यवधान उत्पन्न हो जाता है तो व्यक्ति का जीवन अस्त व्यस्त तथा व्यक्तित्व विघटित हो जाता है। सामूहिक कार्य इस प्रकार की समस्याओं के समाधान करने का प्रयत्न करता है।

सामूहिक समाज कार्य एक प्रणाली है तो इसका अभिप्राय केवल यह एक काम करने का तरीका ही नहीं है बल्कि इसका अभिप्राय एक क्रमानुसार व्यवस्थित तथा नियोजित, समूह के साथ काम करने का तरीका है। प्रणाली, उद्देश्य प्राप्त करने का चेतन तरीका तथा अभिकल्पित साधन होती है। साधारण अर्थों में प्रणाली कोई भी कार्य करने का तरीका है परन्तु यहाँ पर हम सदैव ज्ञान की संगठित व्यवस्था, ग्रहण शक्ति, सूझ तथा सिद्धान्तों की खोज करते हैं।

प्रणाली और निपुणता में अन्तर है। प्रणाली का तात्पर्य ज्ञान और सिद्धान्तों के आधार पर उद्देश्यपूर्ण ढंग से अन्तरदृष्टि तथा समझ का उपयोग है। निपुणता, ज्ञान और समझ को निश्चित परिस्थिति में उपयोग करने की क्षमता है। प्रक्रिया करने का उपयोग प्रणाली है, निपुणता इसके उपयोग की क्षमता है।

सामूहिक समाज कार्य, समाज कार्य की एक प्रणाली है, जिसके द्वारा समाज कार्य के उद्देश्यों की पूर्ति अन्य प्रणालियों के समान ही की जाती है। अतः हमें सामूहिक समाज कार्य के अर्थ, सिद्धान्त, दर्शन, निपुणताओं तथा कार्यविधियों का ज्ञान होना आवश्यक है।

10.3 सामूहिक कार्य की परिभाषा

सामाजिक सामूहिक कार्य समूह के माध्यम से व्यक्ति की सहायता करता है। समूह द्वारा ही व्यक्ति में शारीरिक, बौद्धिक तथा सांस्कृतिक विशेषताओं को उत्पन्न कर समायोजन के योग्य बनाया जाता है। सामाजिक

सामूहिक कार्य को व्यस्थित ढंग से समझने के लिए हम यहां पर कुछ महत्वपूर्ण परिभाषाओं का उल्लेख कर रहे हैं।

न्यूज़ टेट्टर (1935)

स्वैच्छिक संघ द्वारा व्यक्ति के विकास तथा सामाजिक समायोजन पर बल देते हुये तथा एक साधन के रूप में इस संघ का उपयोग सामाजिक इच्छित उद्देश्यों को आगे बढ़ाने के लिए शिक्षा प्रक्रिया के रूप में सामूहिक कार्य को परिभाषित किया जा सकता है।

क्वायल ग्रेस (1939)

सामाजिक सामूहिक कार्य का उद्देश्य सामूहिक स्थितियों में व्यक्तियों की अन्तःक्रियाओं द्वारा व्यक्तियों का विकास करना तथा ऐसी सामूहिक स्थितियों को उत्पन्न करना जिससे समान उद्देश्यों के लिए एकीकृत, सहयोगिक सामूहिक क्रिया हो सके।

विल्सन एण्ड राइलैण्ड (1949)

सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य एक प्रक्रिया और एक प्रणाली है, जिसके द्वारा सामूहिक जीवन एक कार्यकर्ता द्वारा प्रभावित होता है जो समूह की परस्पर सम्बन्धी प्रक्रिया को उद्देश्य प्राप्ति के लिए सचेत रूप से निर्देशित करता है जिससे प्रजातांत्रिक लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके।

हैमिल्टन (1949)

सामाजिक सामूहिक कार्य एक मनो-सामाजिक प्रक्रिया है, जो नेतृत्व को योग्यता और सहकारिता के विकास से उतनी ही सम्बन्धित है, जितनी सामाजिक उद्देश्य के लिए सामूहिक अभिरूचियों के निर्माण है।

कर्ले, आडम (1950)

सामूहिक कार्य के पक्ष के रूप में, सामूहिक सेवा कार्य का उद्देश्य, समूह के अपने सदस्यों के व्यक्तित्व परिधि का विस्तार करना और उनके मानवीय सम्पर्कों को बढ़ाना है। यह एक ऐसी प्रणाली है, जिसके माध्यम से व्यक्ति के अन्दर ऐसी क्षमताओं का निर्मोचन किया जाता है जो उसके अन्य व्यक्तियों के साथ सम्पर्क बढ़ने की ओर निर्देशित होती है।

ग्रेस क्वायल (1954)

सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य को वैयक्तिक सेवा कार्य, सामुदायिक संगठन प्रशासन और अनुसंधान कार्य की भांति समाज कार्य अभ्यास के एक मौलिक पक्ष के रूप में माना जाता है। इनकी भिन्न विशेषताएं इस बात में हैं कि सामूहिक कार्य का प्रयोग, सामूहिक अनुभव के अन्तर्गत सामाजिक सम्बन्धों में, व्यक्ति के विकास एवं संवृद्धि के एक साधन के रूप में किया जाता है और सामूहिक कार्यकर्ता का सम्बन्ध प्रजातांत्रिक समाज उन्नति के लिए सामाजिक उत्तरदायित्व एक सक्रिय नागरिकता के विकास से होता है।

ट्रेकर (1955)

सामाजिक सामूहिक कार्य एक प्रणाली है जिसके द्वारा व्यक्तियों की सामाजिक संस्थाओं के अन्तर्गत समूहों में एक कार्यकर्ता द्वारा सहायता की जाती है। यह कार्यकर्ता कार्यक्रम सम्बन्धी क्रियाओं में व्यक्तियों के परस्पर सम्बन्ध प्रक्रिया का मार्ग दर्शन करता है जिससे वे एक दूसरे से सम्बन्ध स्थापित कर सकें और वैयक्तिक, सामूहिक एवं सामुदायिक विकास की दृष्टि से अपनी आवश्यकताओं एवं क्षमताओं के अनुसार विकास के सुअवसरों को अनुभव कर सकें।

कोनोप्का (1963),

"सामाजिक सामूहिक कार्य समाज कार्य की एक ऐसी प्रणाली है जो व्यक्तियों की सामाजिक कार्यात्मकता बढ़ाने में सहायता प्रदान करती है, उद्देश्यपूर्ण सामूहिक अनुभव द्वारा व्यक्तिगत, सामूहिक और सामुदायिक समस्याओं की ओर प्रभावकारी ढंग से सुलझाने में सहायता प्रदान करती है।"

विंटर (1965),

"सामाजिक सामूहिक कार्य लघु तथा आमने सामने के समूहों में तथा उनके द्वारा व्यक्तियों की सेवा करने का सामूहिक कार्य एक तरीका है जिसके सेवार्थी भागीकृत लोगों में इच्छित परिवर्तन आ सके।"

जब हम सामूहिक कार्य की उपरोक्त परिभाषाओं का अध्ययन करते हैं तब ज्ञात होता है कि -

1. सामूहिक समाज कार्य समाज कार्य की एक प्रजातांत्रिक प्रणाली है। समूह को किसी विशेष लक्ष्य की प्राप्ति के लिए बाध्य नही किया जाता है वरन् समूह को पूरा अधिकार होता है कि वह अपने लक्ष्यों, कार्यक्रमों एवं क्रिया कलापों को अपनी रूचि के अनुसार व्यवस्थित एवं संगठित करे।
2. सामूहिक समाज कार्य व्यक्तियों मे प्रजातांत्रिक जीवन के आदर्शों एवं नेतृत्व की योग्यता का विकास करता है।
3. सामूहिक समाज कार्य द्वारा समूह के सदस्यों में रचनात्मक सम्बन्ध विकसित करने का प्रयत्न किया जाता है। कार्यकर्ता एक विशेषज्ञ के रूप में कार्य करता है।
4. सामूहिक समाज कार्य समूह के सदस्यों में आत्म निर्देशन की योग्यता का विकास करता है। कार्यकर्ता समूह की सहायता उसी सीमा तक करता है जहाँ तक समूह आवश्क समझता है।
5. समूह का उपयोग सामूहिक जीवन को सुखमय बनाने के लिए किया जाता है।
6. सामूहिक समाज कार्य प्रणाली की अपनी विशिष्ट निपुणतायें सिद्धान्त एवं प्रविधियाँ हैं।
7. सामूहिक समाज कार्य एक संस्था के माध्यम से कार्य करता है।
8. सामूहिक समाज कार्य व्यक्तियों की समानता में विश्वास रखता है और प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक जीवन में बराबर का भाग लेने और अपने व्यक्तित्व का विकास करने का अवसर देता है।
9. सामूहिक समाज कार्य समूह सदस्यों के लिए एक नवीन अनुभव होता है।
10. सामूहिक समाज कार्य के माध्यम से व्यक्तियों के एक दूसरे के साथ काम करने, रहने, समस्याओं को समझने तथा वास्तविकता को ज्ञात करने का अवसर मिलता है।

उपरोक्त विशेषताओं के आधार पर हम सामूहिक समाज कार्य को निम्नलिखित शब्दों में परिभाषित कर सकते हैं:

"सामूहिक समाज कार्य एक प्रणाली है जिसमें कार्यकर्ता अभिकरण के माध्यम से समूह की उन्नति एवं आत्म विकास के लिए उन्हीं के माध्यम से कार्यक्रमों का निर्धारण करता है और अन्तर्सम्बन्धों को इस उन्नति एवं विकास का आधार मानता है।"

10.4 परिभाषाओं का विश्लेषण

न्यूज टेट्टर ने अपनी परिभाषा में सामूहिक कार्य को एक शिक्षात्मक प्रक्रिया बताया है। उन्होंने कहा कि स्वैच्छिक संघ ही इस दिशा में काम करते हैं जो व्यक्ति के सामाजिक समायोजन तथा विकास को ध्यान में रखकर कार्य करते हैं। परन्तु सामूहिक कार्य केवल शिक्षात्मक कार्य ही नहीं है बल्कि इसके द्वारा सेवा प्रदान की जाती है। यह कार्य केवल स्वैच्छिक संगठनों द्वारा ही नहीं होता है बल्कि दोनों प्रकार के संगठन स्वैच्छिक तथा सार्वजनिक सामूहिक कार्य प्रणाली का उपयोग करते हैं।

ग्रेस क्वायल ने सन् 1937 में कहा कि सामूहिक कार्य व्यक्तियों का विकास करता है। इस विकास का माध्यम व्यक्ति स्वयं सामूहिक स्थितियों में होता है। जब उनमें आपस में अन्तः क्रिया होती है तो व्यक्तित्व को नयी दिशा प्राप्त होती है। इसका दूसरा कार्य ऐसी सामूहिक स्थितियों को उत्पन्न करता है जहां पर एकीकृत एवं सहयोगिक भावना इस सीमा तक कार्य करे जिससे समान उद्देश्यों की पूर्ति हो सके। क्वायल ने समस्या समाधान की बात इसमें नहीं कही हैं।

विल्सन तथा राइलैण्ड ने सामूहिक कार्य को एक प्रक्रिया तथा प्रणाली बताया है। इसका कार्य व्यक्ति के सामूहिक जीवन को प्रभावित करना है। सामाजिक कार्यकर्ता समूहों के साथ इस प्रकार कार्य करता है जिससे कार्यक्रमों के माध्यम से वे अपना लक्ष्य प्राप्त कर सकें। वह चेतनरूप से अन्तःक्रिया प्रक्रिया को उद्देश्य पूर्ति के लिए निर्देशित करता है। सामूहिक कार्य द्वारा प्रजातांत्रिक लक्ष्यों की प्राप्ति होती है।

हैमिल्टन के विचार अपने समय में सभी विद्धानों के विचारों से भिन्न हैं। उनका विचार है कि सामूहिक कार्य एक मनोसामाजिक प्रक्रिया है अर्थात् इसके द्वारा व्यक्ति को मानसिक रूप से तथा सामाजिक रूप से दोनों प्रकार से प्रभावित किया जाता है। वह सामाजिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सामूहिक अभिरूचियों के विकास का प्रयत्न करता है। साथ ही साथ उनके नेतृत्व एवं सहकारिता की भावना के विकास पर भी बल देता है।

आडम का मत है कि सामूहिक कार्य के दो पक्ष हैं। सामूहिक कार्य का प्रथम लक्ष्य समूह के सदस्यों में व्यक्तित्व का विकास करना है। ऐसे कार्यक्रम आयोजित करना है जिससे आपसी सम्बन्ध प्रगाढ़ हों तथा वृद्धि एवं विकास के अवसर सुलभ हों। इसका दूसरा कार्य प्रणाली के रूप में है जो अपने कार्यक्रमों के माध्यम से समूह सदस्यों में ऐसी क्षमताएं विकसित करता है जिससे वे दूसरों से अधिक सम्पर्क करने का प्रयत्न करते हैं।

क्वायल ने दूसरी परिभाषा में सामाजिक सामूहिक कार्य को विशेष रूप से स्पष्ट किया है जिससे एक ओर सामाजिक सम्बन्धों में प्रगाढ़ता आये तथा रचनात्मक सम्बन्धों का विकास हो, वहीं दूसरी ओर इस अनुभव द्वारा व्यक्ति का विकास तथा उसकी समृद्धि हो। सामूहिक कार्यकर्ता का कार्य सामाजिक उत्तरदायित्व को पूरा करने की क्षमता तथा ऐसा नागरिक बनाना होता है जिससे प्रजातंत्र की जड़े मजबूत होती हैं।

सामूहिक समाज कार्य की सबसे उपयुक्त परिभाषा ट्रेकर ने दी है। उनके अनुसार:

अ) सामूहिक समाज कार्य एक प्रणाली है:

इसका तात्पर्य यह है कि सामूहिक समाज कार्य के लिए विशेष ज्ञान की आवश्यकता होती है। कार्यकर्ता को जब तक समूह की विशेषताओं, दशाओं, मनोवृत्तियों आदि का ज्ञान नहीं होगा तब तक यह कार्य नहीं कर सकता है। उसको व्यक्ति के व्यवहार का ज्ञान तथा समूह के व्यवहार का ज्ञान दोनों का होना आवश्यक है। कार्यकर्ता में वैज्ञानिक ज्ञान होता है। उसे कार्य-कारण का सम्बन्ध ज्ञात होता है। उसमें समझ होती है जिससे वह भिन्न-भिन्न स्थितियों तथा समूहों के साथ कार्य करने में समर्थ होता है। उसको समूह की गत्यात्यन का ज्ञान होता

है। ट्रेकर का मत है कि सामूहिक कार्य के अपने कुछ सिद्धान्त हें जो दूसरों प्रणालियों से भिन्न है। नियोजित समूह निर्माण का सिद्धान्त, विशिष्ट उद्देश्यों का सिद्धान्त, उद्देश्यपूर्ण कार्यकर्ता सेवार्थी सम्बन्ध, निरन्तर वैयक्तीकरण, निर्देशित सामूहिक अन्तःक्रिया, प्रजातांत्रिक सामूहिक आत्मनिश्चयीकरण, लोचदार कार्यात्मक संगठन, निरन्तर प्रगतिशील कार्यक्रम, स्रोतों का उपयोग तथा निरन्तर मूल्यांकन का सिद्धान्त इसके महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

सामूहिक कार्य की अपनी विशिष्ट निपुणतायें है, जिनको सामूहिक कार्यकर्ता अपने व्यवहार में लाता है। कार्यकर्ता में उद्देश्य सम्बन्ध स्थापित करने की निपुणता होती है। वह सामूहिक स्थिति को विश्लेषित करने में दक्ष होता है। वह समूह के साथ भाग लेने में निपुण होता है। अपनी भूमिका की व्याख्या तथा उसकी आवश्यकता को समयानुसार निश्चित करने में समर्थ होता है। उसमें इस बात की निपुणता होती है कि वह प्रत्येक नयी स्थिति का निष्पक्ष होकर अध्ययन करता है। समूह की सकारात्मक तथा नकारात्मक भावनाओं को समझकर ही कार्यक्रम को आगे बढ़ाता है। वह समूह की संधियों एवं आवश्यकताओं के अनुसार ही कार्यक्रम सम्पन्न करता है। इसमें संस्था तथा समुदाय के स्रोतों को उपयोग में लाने की निपुणता होती है।

ब) सामूहिक समाज कार्य द्वारा समूह में संस्था के अन्तर्गत व्यक्तियों की सहायता की जाती है:

ट्रेकर की परिभाषा की दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि सामूहिक समाज कार्य में समूह तथा संस्था दोनों का होना महत्वपूर्ण है। अर्थात् व्यक्ति की सहायता समूह के माध्यम से की जाती है। समूह की अपनी विशेषतायें होती हैं तथा उसके गठन का भी एक उद्देश्य होता है। यह समूह किसी संस्था के अन्तर्गत ही गठित किया जाता है। ये समूह समुदाय की इच्छाओं तथा आवश्यकताओं के अनुरूप होते हैं। संस्था से बाहर यदि उससे सम्बन्धित है तो समुदाय में बने समूहों के साथ भी इसका प्रयोग होता है।

स) सामूहिक कार्य एक कार्यकर्ता द्वारा सम्पन्न होता है जो समूह की कार्यक्रम क्रियायों में होने वाली अंतरक्रिया को निर्देशित करता है।

सामूहिक समाज कार्य में कार्यकर्ता की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण होती है। वह सभी कार्यों की धूरी होती है। अतः उसमें योग्यता एवं क्षमता होती है, समूह उसी प्रकार की उपलब्धि प्राप्त करता है। वह अपनी भूमिका का सम्पादन समूह की स्वीकृति के आधार पर करता है। जिस सीमा तक समूह उसकी अपनी भूमिका पूरी करने की आज्ञा देता है वह वहीं तक अपनी कार्य क्षेत्र की सीमा बढ़ाता है। कार्यकर्ता समूह का वैयक्तीकरण करके उसकी आवश्यकताओं, इच्छाओं तथा अन्तर्निहित क्षमताओं का ज्ञान प्राप्त करता है। वह सहायता उद्देश्यों के निर्धारण में समूह की करता है तथा कार्यक्रमों के चलाने व उनकी आवश्यकता के विषय में ज्ञान प्रदान करता है। वह समूह को मंत्रणा भी देता है तथा कार्यों के सम्पादन के लिए प्रेरित भी करता है। कार्यकर्ता समूह की सहायता सामूहिक प्रक्रिया के प्रत्येक स्तर पर जहां आवश्यक होती है, करता है। सामुदायिक स्रोतों के समुचित उपयोग में भी सहायता करता है।

द) सामूहिक समाज कार्य का उद्देश्य आपसी सम्बन्धों में वृद्धि तथा अपनी क्षमताओं के अनुसार विकास करना है।

सामूहिक कार्य के अन्तर्गत कार्यकर्ता इस प्रकार से कार्यक्रमों का आयोजन करता है जिसके द्वारा समूह के सदस्यों में दूसरे लोगों के साथ सम्बन्ध स्थापित करने की क्षमता बढ़ती है। वे अपनी आवश्यकताओं एवं क्षमताओं के अनुसार विकास के अवसरों का अनुभव करते हैं। समूह सदस्यों में भागीकरण की क्षमता आती है। सम्पर्कों की विधि सीखते हैं तथा निर्णय की क्षमता आती है। उत्तरदायित्व ग्रहण करना सीखते हैं। उनमें स्वयं सम्प्रेरक शक्ति काम करने लगती है, अपनत्व की भावना का विकास होता है। इन सभी गुणों से वह अन्य व्यक्तियों के साथ समायोजित करने में सफल होता है एवं वृद्धि के अवसरों से लाभ उठाता है।

र) सामूहिक कार्य सहायता का उद्देश्य वैयक्तिक, सामूहिक और सामुदायिक विकास है।

सामूहिक कार्यकर्ता कार्यक्रमों का उपयोग व्यक्तियों के व्यवहार के परिवर्तन के लिए करता है। चाहे वह समस्या हो अथवा विकास का प्रश्न हो, दोनों ही स्थितियों में व्यवहार की बाधा बनता है। अतः यदि दोनों प्रकार से सफलता प्राप्त करनी है तो व्यवहार में परिवर्तन लाना होगा। इस परिवर्तन से व्यक्ति समूह में परिवर्तन आता है जिससे प्रजातांत्रिक लक्ष्यों की पूर्ति होती है।

10.5 सारांश

प्रस्तुत इकाई में सामूहिक समाज कार्य के अर्थ को समझा। सामूहिक समाज कार्य की अनेक विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाओं के विषय में विस्तृत अध्ययन किया। सामूहिक समाज कार्य की परिभाषाओं का तुलनात्मक विश्लेषण करके ज्ञान प्राप्त किया।

10.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. सामूहिक कार्य का अर्थ समझाइये।
2. सामूहिक कार्य की परिभाषाओं का वर्णन कीजिए।
3. सामूहिक समाज कार्य की परिभाषाओं के विश्लेषण को समझाते हुए इसका वर्णन कीजिए।

10.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

सिंह, डी॰ के॰, भारती, ए॰ के॰, सोशल वर्क कान्सेप्ट ऐंड मैथड्स, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.

सिंह, डी॰ के॰, पालीवाल, सौरभ, मिश्र, रोहित, मानव समाज, संगठन एवं विघटन के मूल तत्व, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2010.

मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक सामूहिक कार्य, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, वर्ष 1977.

सिंह, सुरेन्द्र, मिश्र, पी॰ डी॰, समाज कार्य- इतिहास, दर्शन एवं प्रणालियाँ,

रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2006.

मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, वर्ष 1985.

सिंह, डी॰ के॰, भारत में समाज कल्याण प्रशासन: अवधारणा एवं विषय क्षेत्र, रायल बुक डिपो लखनऊ, वर्ष 2011.

सिंह, सुरेन्द्र, वर्मा, आर॰ बी॰ एस॰, भारत में समाज कार्य का क्षेत्र, रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.

मिश्रा, पी॰ डी॰, मिश्रा, बीना, व्यक्ति और समाज, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2007.

इकाई -11

सामूहिक कार्य : उद्देश्य एवं विशेषतायें

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 सामूहिक कार्य के उद्देश्य

11.2.1 सामाजिक सामूहिक कार्य के व्यावसायिक उद्देश्य

11.2.2 सामूहिक समाज कार्य के उद्देश्य

11.2.3 उद्देश्यों का महत्व

11.3 सामूहिक समाज कार्य की विषेषताएँ

11.4 सारांश

11.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

11.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

11.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरांत सामूहिक कार्य के उद्देश्यों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे। जीवनपयोगी आवश्यकताओं की पूर्ति, सामंजस्य स्थापित करने की शक्ति का विकास करना, आत्म-विश्वास एवं आत्मनिर्भरता को विकसित करना, प्रजातांत्रिक नेतृत्व का विकास इत्यादि को समझ सकेंगे। इसके पश्चात् सामूहिक कार्य की विशेषताओं के विषय में अध्ययन करेंगे। सामूहिक समाज कार्य सहायता के उद्देश्य, वैयक्तिक, सामूहिक और सामाजिक विकास में सहायक होते हैं।

11.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में सामूहिक समाज कार्य के उद्देश्यों तथा विशेषताओं पर चर्चा की गई है। सामूहिक समाज कार्य का मूल रूप से उद्देश्य मानव व्यक्तित्व का यथासम्भव अधिकतम विकास करना है जो जनतांत्रिक आदर्शों के प्रति समर्पित तथा अनुरक्त हो। यह सामूहिक अनुभव द्वारा सामाजिक प्रकार्यात्मकता में वृद्धि करता है। सामूहिक समाज कार्यकर्ता व्यक्तियों में सामंजस्य को बढ़ाने और सामूहिक उत्तरदायित्व एवं चेतना का विकास करने में सहायता देता है। ट्रेकर के अनुसार सामूहिक कार्य नियोजित समूह निर्माण, उद्देश्यपूर्ण कार्यकर्ता- सेवार्थी सम्बन्ध, निरन्तर वैयक्तीकरण, निर्देशित सामूहिक अंतःक्रिया, प्रजातांत्रिक सामूहिक आत्मनिश्चयीकरण, लचीला कार्यात्मक

संगठन, निरंतर प्रगतिशील कार्यक्रम, संसाधन का उपयोग तथा निरंतर मूल्यांकन के सिद्धान्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

11.2 सामूहिक कार्य के उद्देश्य

सामहिक कार्यकर्ता के लिए समूह कार्य के उद्देश्यों तथा उसके आधारों का ज्ञान कार्य सम्पन्नता के लिए आवश्यक होता है। उद्देश्य कम्पास के समान होते हैं जो कार्यकर्ता को करने की दिशा का बोध कराते हैं। उद्देश्य यह स्पष्ट करते हैं कि कार्यकर्ता क्या प्रयास करने जा रहा है तथा किस दिशा में प्रयास की गति है। उद्देश्य ऐसे कथन या नियम है जो बताते हैं कि सामूहिक कार्य में हम क्या करने का प्रयत्न कर रहे हैं। उद्देश्यों की स्पष्टता व्यवस्थित प्रक्रिया का आधार होती है। ये प्रेरक शक्ति का कार्य करते हैं जिसके सहयोग से सामूहिक समाज कार्य प्रक्रिया एक निश्चित दिशा की ओर शनैः-शनैः चलती रहती है।

11.2.1 सामाजिक सामूहिक कार्य के व्यावसायिक उद्देश्य

सन् 1935 में सामाजिक सामूहिक कार्य का विकास व्यावसायिक रूप में हुआ। इसी वर्ष पहली बार सामूहिक कार्य के उद्देश्यों पर समाज कार्य की राष्ट्रीय कान्फ्रेंस ने प्रकाश डाला। इसके अनुसार सामूहिक कार्य ऐच्छिक संघों द्वारा व्यक्ति के विकास एवं सामाजिक सामंजस्य को प्रोत्साहन देने तथा इन संघों के माध्यम से इच्छित सामाजिक उद्देश्यों को प्राप्त करने की एक शिक्षात्मक प्रक्रिया है।

कोयले के अनुसार, ''सामूहिक कार्यकर्ता समूहों को इस प्रकार से कार्य करने के लिए उत्साहित करता है जिससे सामूहिक अन्तःक्रिया तथा कार्यक्रम क्रियायें व्यक्ति और वांछनीय सामाजिक लक्ष्यों की उपलब्धि की वृद्धि में योगदान देती हैं।''

ट्रेकर के मतानुसार, ''मूलतः सामूहिक समाज कार्य का उद्देश्य मानव व्यक्तित्व का सम्भव उच्चतम विकास करना है जो जनतांत्रिक आदर्शों के प्रति समर्पित तथा अनुरक्त हो।''

विंटर के अनुसार, ''सामूहिक समाज कार्य समूहों में तथा छोटे समूहों को आमने-सामने के द्वारा लोगों की सहायता करने का एक तरीका है जिससे सेवार्थी भागीकृत लोगों में वांछित परिवर्तन आ सके।''

कोनोप्का ने ''समूह समाज कार्य, समाज कार्य की एक ऐसी प्रणाली है जो व्यक्तियों की उद्देश्यपूर्ण सामूहिक अनुभव द्वारा सामाजिक कार्यात्मकता बढ़ाने में सहायता प्रदान करती है तथा वैयक्तिक, सामूहिक और सामुदायिक समस्याओं को और प्रभावकारी ढंग से सुलझाने में सहायता करती है।''

कोनोप्का ने सामूहिक कार्य के निम्नलिखित उद्देश्यों का उल्लेख किया है:-

1. वैयक्तिकरण

सामूहिक कार्य द्वारा व्यक्ति की सहायता अपने को स्वतन्त्र होने के लिए दी जाती है जिससे वह अपने साथियों के साथ स्वतन्त्र रूप से अन्तःक्रिया कर सके।

2. सम्बद्धता की भावना का विकास

मनुष्य सबसे अधिक नष्ट एकान्तवासी होने की स्थिति में होता है। आत्महत्यायें प्रायः अकेलेपन की समस्या के कारण ही होती है। यह समस्या भीड़ से नहीं सुलझती है। इसके लिए प्रगाढ़ सम्बन्धों का होना आवश्यक होता है। सामूहिक कार्य के द्वारा इस समस्या का निराकरण किया जाता है।

3. भागीकरण की क्षमता का मूलतः विकास किया जाता है

भागीकरण प्रजातांत्रिक प्रत्ययों में से एक प्रमुख प्रत्यय है। प्रजातंत्र में यद्यपि सभी लोग एकमत नहीं होते हैं लेकिन भाग सभी लेते हैं। क्योंकि प्रजातंत्र का अस्तित्व ही भागीकरण पर आधारित है। सामूहिक कार्यकर्ता समूह सदस्यों की भावनाओं से अवगत होकर ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न करता है जिससे सभी सदस्य समान रूप से भाग लेते हैं।

4. सामूहिक चर्चाओं के माध्यम से तथा तार्किक विचारों के आधार पर निर्णयों में भाग लेने की क्षमता में वृद्धि करना

साधारणतः या समाज में बहुत ही कम निर्णय तार्किक आधार पर लिये जाते हैं। किसी एक व्यक्ति का प्रभाव होता है। लेकिन समूह कार्य इसमें विश्वास नहीं रखता है। वह प्रजातांत्रिक ढंगों का उपयोग करता है तथा प्रत्येक सदस्य को सामूहिक क्रियाओं के सम्बन्ध में निर्णय लेने की प्रक्रिया में भाग लेने के लिए उत्साहित करता है।

5. लोगों में अन्तरों के प्रति आदर की भावना में वृद्धि करना

अन्तरों का कारण सामूहिक एकरूपता की कमी होती है जिससे कार्यक्रम सुगमता से नहीं चल पाते हैं। अतः कार्यकर्ता का उद्देश्य इन अन्तरों के रहते हुए भी ऐसी स्थिति उत्पन्न करना होता है जहाँ पर एक दूसरे के अन्तरों का महत्व हो और सदस्य प्रतिद्वन्द्वी न होकर सहयोगी की भूमिका निभायें।

सौहार्दपूर्ण अपनायी जाने वाली सामाजिक जलवायु का विकास करना

इस प्रकार की सामाजिक स्थिति का होना अत्यन्त आवश्यक है। क्योंकि सामूहिक कार्य एवं क्रिया कलाप तभी हो सकता है जब सभी लोग आपस में घनिष्ठता अनुभव करें। सामूहिक कार्य में रचनात्मक सामूहिक जलवायु का निर्णय किया जाता है।

स्पेक्ट

स्पेक्ट के अनुसार सामूहिक कार्य के 4 प्रमुख उद्देश्य होते हैं:-

1. सामूहिक कार्य व्यक्तियों को आंतरिक व्यक्तित्व में परिवर्तन लाने के लिए प्रेरित करता है अथवा समायोजन के लिए उत्साहित करता है। इससे वे अपनी विभिन्न भूमिकाओं जैसे माता-पिता, बालक, कार्यकर्ता, मित्र आदि को, मनोचिकित्सकीय समूहों का यही उद्देश्य होता है, पूरा करने की क्षमता में वृद्धि करते हैं।

2. सामूहिक कार्य व्यक्तियों को नयी भूमिकायें ग्रहण करने के लिए प्रोत्साहित करता है। सामूहिक अनुभव द्वारा सदस्यों को नयी-नयी कार्यविधियों का ज्ञान कराया जाता है जिससे वे नयी चुनौतियों का सामना आसानी से कर लेते हैं।

3. सामूहिक कार्य समूह सदस्यों के अंतर्संबंधों में घनिष्ठता लाता है तथा वृद्धि करता है जिससे भौतिक तथा सांवेगिक आवश्यकताओं की संतुष्टि होती है। यहाँ पर कार्यकर्ता का मुख्य उद्देश्य परिपक्वता में वृद्धि अथवा मनोवैज्ञानिक वृद्धि करना है। यहाँ पर सामाजिकता सीखने की कला पर विशेष बल दिया जाता है।

4. सामूहिक कार्य का उद्देश्य दोनों व्यवस्थाओं में संचार प्रक्रिया में सुधार अथवा पारस्परिक आदान-प्रदान की स्थिति को सुदृढ़ करना है। उदाहरण के लिए स्कूलों में अभिभावक अध्यापक संघ जिसका निर्माण बाल अपराधी प्रवृत्ति को रोकने के लिए किया जाता है, ऐसे संघों में आपसी विचारों में सुस्पष्टता तथा सम्बन्धों में प्रगाढ़ता लाने का प्रयास किया जाता है। इन समूहों में सामाजिक चेतनता का विकास किया जाता है।

11.2.2 सामूहिक समाज कार्य के उद्देश्य

सामूहिक समाज कार्य समूह द्वारा व्यक्तियों में आत्मविश्वास, आत्मनिर्भरता एवं आत्मनिर्देशन का विकास करना है। सामूहिक समाज कार्यकर्ता व्यक्तियों में सामंजस्य को बढ़ाने और सामूहिक उत्तरदायित्व एवं चेतना का विकास करने में सहायता देता है। सामूहिक समाज कार्य द्वारा व्यक्तियों में इस प्रकार की चेतना तथा क्षमता का विकास किया जाता है जिससे वे समूह और समुदाय के क्रियाकलापों में जिनके वे अंग हैं, बुद्धिमतापूर्वक भाग ले सकते हैं। उन्हें अपनी इच्छाओं, आकांक्षाओं, भावनाओं, रूचियों, पसंद, नापसंद आदि की अभिव्यक्ति का अवसर मिलता है।

ग्रेस क्वायल ने सामूहिक समाज कार्य के निम्न उद्देश्य बताये हैं-

1. व्यक्तियों को उनकी आवश्यकताओं और क्षमताओं के अनुसार विकास के अवसर प्रदान करना।

2. व्यक्ति को अन्य व्यक्तियों, समूहों और समुदाय से समायोजन प्राप्त करने में सहायता देना।

3. समाज के विकास हेतु व्यक्तियों को प्रेरित करना।

4. व्यक्तियों को अपने अधिकारों, सीमाओं और योग्यताओं के साथ-साथ अन्य व्यक्तियों के अधिकारों, योग्यताओं एवं अन्तरों को पहचानने में सहायता देना।

मेहता ने सामूहिक समाज कार्य के निम्न उद्देश्य बताये हैं-

1. परिपक्वता प्राप्त करने के लिए व्यक्तियों की सहायता करना।

2. पूरक सांवेगिक तथा सामाजिक खुराक प्रदान करना।

3. नागरिकता तथा जनतांत्रिक सहभागिता को बढ़ावा देना।

4. असमायोजन तथा वैयक्तिक एवं सामाजिक विघटन का उपचार करना।

विल्सन तथा राइलैण्ड ने कहा है कि अधिकांश सामाजिक संस्थाएँ जो समूहों के लिए कार्य करती हैं, दो उद्देश्य होते हैं:-

1. समूह के माध्यम से व्यक्तियों के सांवेगिक संतुलन को बनाना तथा शारीरिक रूप से स्वस्थ्य रखना।

2. समूह की उन उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायता करना जो आर्थिक, राजनैतिक एवं सामाजिक जनतंत्र के लिए आवश्यक हैं।

ट्रेटर ने भी इसी प्रकार के उद्देश्यों का वर्णन किया है। उनके अनुसार सामूहिक समाज कार्य का मूल रूप से उद्देश्य मानव व्यक्तित्व का यथासम्भव अधिकतम विकास करना है जो जनतांत्रिक आदर्शों के प्रति समर्पित तथा अनुरक्त हो।

फिलिप्स ने सामूहिक समाज कार्य के उद्देश्यों की चर्चा करते हुए कहा है कि इसका प्रमुख उद्देश्य सदस्यों का समाजीकरण करना है।

कोनोप्का का विचार है कि सामूहिक समाज कार्य सामूहिक अनुभव द्वारा सामाजिक प्रकार्यात्मकता में वृद्धि करता है।

उपरोक्त विचारों के अध्ययन के पश्चात् हमारे मत में सामूहिक समाज कार्य के निम्नलिखित उद्देश्य हैं:-

1. जीवनपयोगी आवश्यकताओं की पूर्ति करना

सामूहिक समाज कार्य का प्रारंभ समस्याओं का समाधान करने से हुआ है। परन्तु कालान्तर में यह अनुभव किया गया कि आर्थिक आवश्यकताओं का समाधान सभी समस्याओं का समाधान नहीं है। स्वीकृति, प्रेम, सहभागिता, सामूहिक अनुभव, सुरक्षा आदि अनेक ऐसी आवश्यकतायें हैं जिनको पूरा किया जाना भी आवश्यक है। इसी आधार पर अनेक संस्थाओं का विकास हुआ है और उन्होंने जीवनपयोगी आवश्यकताओं को पूरा करने का कार्य प्रारंभ किया। आज सामूहिक समाज कार्यकर्ता समूह में व्यक्तियों को एकत्रित करके उनके एकाकीपन की समस्या का समाधान करता है, सहभागिता को प्रोत्साहन देता है तथा सुरक्षा की भावना का विकास करता है।

2. सदस्यों का महत्व प्रदान करना

भौतिकवादी युग के कारण आज व्यक्ति का कोई महत्व न होकर धन, मशीनों तथा यंत्रों का बोलबाला हो गया है। परिणामतः व्यक्ति में निराशा तथा हीनता के लक्षण स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ने लगे हैं। प्रत्येक व्यक्ति यह चाहता है कि उसका कुछ महत्व हो तथा समाज में सम्मान हो। यह समस्या युवावस्था में उतनी गंभीर नहीं होती है जितनी वृद्धावस्था में। किन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं है कि केवल वृद्धावस्था में ही सम्मान प्रदान किये जाने की आवश्यकता होती है। यदि हम मानव विकास के स्तरों का सूक्ष्म अवलोकन करें तो ऐसा कोई भी स्तर नहीं है जहाँ व्यक्ति सम्मान प्राप्त करने की इच्छा न रखता हो। बाल अपराध का मुख्य कारण बच्चे को महत्ता एवं स्वीकृति न प्रदान करना है। सामूहिक समाज कार्यकर्ता समूह के सभी व्यक्तियों को समान अवसर प्रदान करता है तथा उन्हें उचित सम्मान एवं स्वीकृति देता है।

3. सामंजस्य स्थापित करने की शक्ति का विकास करना

व्यक्ति की सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता सामंजस्य प्राप्त करने की होती है। व्यक्ति इससे जीवन रक्षा के अवसर प्राप्त करता है तथा पर्यावरण को समझकर अपनी आवश्यकताओं को समायोजित करता है। इसके अतिरिक्त व्यक्ति जब तक जीवित रहता है तब तक अनेक समस्यायें उसे घेरे रहती हैं और उसे समायोजन स्थापित करने के लिए बाध्य करती रहती हैं। सामूहिक समाज कार्यकर्ता सामूहिक अनुभवों के द्वारा व्यक्ति में सामंजस्य स्थापित करने की कुशलता विकसित करता है। व्यक्ति जब समायोजन स्थापित करने में असमर्थ होता है, इसका कारण उसकी या उसके पर्यावरण में पाई जाने वाली कमियाँ होती हैं| व्यक्ति शासन करने, अधिकार जमाने, अनावश्यक हस्तक्षेप करने, वास्तविक स्थिति को अस्वीकार करने, उत्तरदायित्व को पूरा न करने, दूसरों का सहयोग स्वीकार न करने आदि के कारण सामंजस्य स्थापित करने में असमर्थ होता है। सामूहिक समाज कार्यकर्ता के माध्यम से उन कमियों को दूर करके सामान्य गुणों को विकसित करता है।

4. आत्म-विश्वास एवं आत्मनिर्भरता को विकसित करना

जब तक व्यक्ति में आत्म-विश्वास नहीं होता है तब तक वह न कोई अपने आप निर्णय ले सकता है और न ही कोई जोखिम का कार्य करता है। आत्मनिर्भरता का होना व्यक्ति के विकास के लिए आवश्यक होता है। सामूहिक समाज कार्यकर्ता व्यक्ति में इन गुणों का विकास करने के लिए प्रत्येक सदस्य को अलग-अलग कार्य करने तथा उत्तरदायित्व ग्रहण करने का अवसर देता है। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी क्षमताओं, शक्तियों एवं निपुणताओं को प्रकट करने का पूरा अवसर देता है जिसके फलस्वरूप उनमें स्वतः आत्मविश्वास एवं आत्मनिर्भरता विकसित हो जाती है।

5. प्रजातांत्रिक नेतृत्व का विकास करना

सामूहिक समाज कार्यकर्ता का उद्देश्य जहाँ एक ओर व्यक्तियों में प्रजातांत्रिक मूल्यों का विकास करना है वहीं दूसरी ओर प्रजातांत्रिक नेतृत्व का विकास भी करता है। सामूहिक समाज कार्यकर्ता समूह के प्रत्येक सदस्य को नेतृत्व प्रदान करने के अवसर देता है। यद्यपि नेता राय दे सकता है परन्तु अन्तिम निर्णय समूह पर निर्भर होता है। नेता सभी सदस्यों को समान अवसर एवं उन्नति की समान सुविधायें प्रदान करता है।

6.सामाजिक सम्बन्धों का सुदृढ़ बनाना तथा मनो-सामाजिक समस्याओं का समाधान करना

व्यक्ति समाज में पैदा होता है और सामाजिक सम्बन्धों में ही अपना जीवन बिताता है इसीलिए मेकाइवर तथा पेज़ ने समाज को सामाजिक सम्बन्धों का जाल कहा है। सम्बन्धों के आधार पर ही समाज के कार्य सम्पन्न होते हैं। परन्तु कभी-कभी व्यक्ति इन सम्बन्धों को निभाने में असमर्थ होता है जिसके परिणामस्वरूप मानसिक तनाव एवं अन्य मानसिक विकास उत्पन्न हो जाते हैं तथा कभी-कभी व्यक्ति मानसिक रोगों का शिकार भी हो जाता है। सामूहिक समाज कार्यकर्ता व्यक्तियों के साथ मैत्रीपूर्ण व्यवहार के द्वारा तनाव को कम करता है। कार्यकर्ता का उद्देश्य न केवल तनाव को कम करना होता है बल्कि सामान्य व्यक्तियों को सामूहिक अनुभव के द्वारा यह ज्ञात करना भी होता है कि उसकी कठिनाइयाँ उसकी असफलताओं के कारण ही नहीं हैं बल्कि अन्य व्यक्ति भी इसी प्रकार के अनेक कठिनाईयों से पीड़ित है। ऐसा होने पर उनमें संतोष उत्पन्न होता है और समाधान की शक्ति आती है एवं सम्बन्ध स्थापित करने की क्षमता का विकास होता है। उनमें नवीनता का संचार होता है तथा वे स्वयं अपनी समस्या का समाधान करने का प्रयास करते हैं।

7.एकान्तता की समस्या का समाधान करना

इसका तात्पर्य यह नहीं है कि मनुष्य एकान्त में रहना पसन्द नहीं करता। परन्तु वह इस प्रकार रहना तभी पसंद करता है जब उसमें यह विश्वास हो कि वह सभी के द्वारा स्वीकृत है। परन्तु अधिकांश व्यक्ति एकान्त पसन्द नहीं करते, यहाँ तक कि पशु-पक्षी भी समूह में रहते हैं। आज की परिस्थिति में जहाँ नगरीकरण इतना बढ़ रहा है, एकाकी जीवन एक समस्या बन गया है। कभी-कभी मनुष्य की बुरी आदतें भी बन जाती है। सामूहिक कार्यकर्ता समूह के माध्यम से इस समस्या का समाधन करता है।

8.स्वीकृति प्रदान करना

प्रत्येक व्यक्ति की यह इच्छा होती है कि उसे समूह एवं समाज में स्वीकृत किया जाय, उसे उचित स्थान मिले और कार्य करने के लिए उचित अवसर देकर समाज उसे स्वीकार करे। जब समाज और समूह किसी व्यक्ति को स्वीकृति प्रदान नहीं करते तो वह अपना मानसिक संतुलन खो देता है जिससे वह समाज विरोधी गतिविधियों का शिकार हो जाता है। ऐसी स्थिति में वह समाज की मान-मर्यादा, कानून इत्यादि की परवाह किए बिना अपनी इच्छा पूर्ति के लिए अवैध और अनुचित ढंग अपनाता है। वह अनेक प्रकार के मानसिक रोगों का शिकार हो जाता है। डा. नाथन ऐकमैन तथा मेरी जोहोडा ने मनोविश्लेषण तथा अध्ययन के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला कि ऐसे रोगियों में आत्म सम्मान की कमी होती है और वे एकान्तता से पीड़ित होते हैं। वे स्वयं अपने को स्वीकृत करते और दूसरों से रूष्ट होते हैं।

सामूहिक कार्य में व्यक्ति को उचित स्थान प्रदान किया जाता है। समूह में सम्बन्ध स्थापित होते हैं और समूह के सदस्य परस्पर एक दूसरे को इसका आवश्यक अंग समझते हैं। इसीलिए उन रोगियों को समूह से अधिक लाभ होता है जो मानसिक समस्याओं से ग्रस्त होते हैं।

9.आत्म विश्वास का विकास करना

व्यक्ति में आत्मविश्वास का होना परम आवश्यक है। इसके बिना न तो वह स्वयं कोई कार्य कर सकता है और न जोखिम उठाने के लिए तैयार हो सकता है। सामूहिक कार्य द्वारा व्यक्तियों में इस गुण का विकास किया जाता है। जब समूह के प्रत्येक सदस्य को अलग-अलग कार्य प्रदान किया जाता है तो उसे पूर्ण करने की क्षमता उसमें स्वतः विकसित होने लगती है और आत्मविश्वास पैदा होने लगता है। यह केवल अनुभव के द्वारा होता है।

10.निर्भरता को स्वीकार करना

व्यक्ति में कभी-कभी विशेष परिस्थितियों के कारण स्थायी निर्भरता आ जाती है। वह समाज पर निर्भर रहकर ही अपना जीवनयापन करता है। अपंग हो जाना, अंधा हो जाना इत्यादि ऐसी परिस्थितियाँ है। इन परिस्थितियों में व्यक्ति बहुत अधिक परेशान हो जाता है, जिससे वह अपनी जिन्दगी को अभिशाप समझने लगता है। सामूहिक कार्य के माध्यम से कार्यकर्ता उसमें ऐसी शक्तियों को उत्पन्न करता है, जिससे वह कमी को स्वीकार करने में सफल होता है। वह समूह में व्यक्तियों को स्थान देकर उनमें ऐसी भावनाओं का विकास करता है जिससे वे शेष जिन्दगी को सुखमय बना सकें। सामूहिक अनुभव द्वारा व्यक्ति में नवीन चेतना का विकास होता है और जिन्दगी में नई आशाएं बंधती हैं।

11.समग्र का भाग होने की इच्छा की पूर्ति करना

व्यक्ति की सदैव यह इच्छा रहती है कि वह समाज का एक आवश्यक अंग बन सके और उसकी क्रियाओं में सक्रिय रूप से भाग ले सके। सामूहिक कार्य-अनुभव द्वारा वह इस समग्र भाग का पहले हिस्सा बनता है जिसका कि वह ये रूप है और धीरे-धीरे उसकी महत्ता प्राप्त करने की इच्छा की पूर्ति होती है।

12.सामाजिक संबंधों को दृढ़ एवं मधुर बनाना

समाज संबंधों का जाल है। प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे से बंधा हुआ है। इसी सम्बन्ध के आधार पर समाज के कार्यों का संचालन होता है। परन्तु कभी-कभी सम्बन्ध इतने बिगड़ जाते हैं कि बहुत अप्रिय घटनाएं तक घटित हो जाती हैं, आन्दोलन होते हैं और क्रान्ति तक हो जाती है। सामूहिक कार्य के द्वारा व्यक्तियों के असन्तोष के कारण का पता लगाकर उनके बीच उत्पन्न होने वाली कठिनाइयों को दूर कर सम्बन्ध दृढ़ एवं मधुर बनाये जाते हैं।

13.मनोसामाजिक समस्याओं को दूर करना

सामूहिक कार्य का प्रयोग मानसिक रोगियों के साथ भी किया जाता है। समूह में केवल वे ही सदस्य भाग लेते हैं जो मनोसामाजिक समस्याओं से ग्रसित होते हैं, लोगों में मिल नहीं सकते तथा विमुख रहते हैं। सामाजिक कार्यकर्ता उनमें मैत्रीपूर्ण सद्भावना का विकास करता है। परस्पर निर्भर क्रियाओं में रोगी अपने को सुरक्षित महसूम करता है। जब वह यह देखता है कि उससे भी अधिक लोग पीड़ित हैं तो उसे कुछ संतोष मिलता है। वह यह अनुभव करता है कि उसकी कठिनाइयां उसकी असफलताओं के कारण ही नहीं हैं। रोगी में ऐसी भावना उत्पन्न हो जाने पर उसमें समूह से सम्बन्ध स्थापित करने की इच्छा जागृत होती है तथा चिंतायें कम होती हैं। उसमें तत्परता का विकास होता है और समस्याओं का बोझ हल्का हो जाता है।

14.मनोरंजन प्रदान करना

सामूहिक कार्य का शुभारम्भ मनोरंजन कार्यों से ही हुआ। लोग एक समूह के रूप में क्लब में एकत्र हुए और मनोरंजन के लिए इन्होंने विभिन्न कार्यों का आयोजन किया। सामूहिक कार्य द्वारा आज बच्चों, युवकों एवं वृद्धों को मनोरंजन भी प्रदान किया जाता है जो स्वस्थ विकास एवं उन्नति के लिए परमाश्वयक है।

15.व्यक्तित्व का विकास करना

व्यक्तित्व पर पर्यावरण एवं वंशानुक्रमण दोनों का प्रभाव पड़ता है। जीवन के प्रारम्भिक समय में वंशानुक्रमण का प्रभाव अधिक पड़ता है परन्तु बाद में पर्यावरण ही व्यक्तित्व के विकास में अपना प्रभाव डालता है। सामूहिक कार्य का मूल उद्देश्य व्यक्ति के लिए अवसर प्रदान करना होता है जिससे उसके व्यक्तित्व का सर्वोत्तम सम्भव विकास हो सके।

11.2.3 उद्देश्यों का महत्व

उद्देश्यों की स्पष्टता निम्न कारणों से महत्वपूर्ण होती हैं:-

1. उद्देश्य कार्यकर्ता को सही दिशा प्रदान करते हैं तथा निश्चित मार्ग को अनुमोदित करते हैं।

2. उद्देश्यों के निश्चित होने पर साधनों के उपयोग में सुविधा होती है।

3. उद्देश्यों के निश्चित होने से कार्यकर्ता संस्था की सेवाओं तथा कार्यक्रमों का आवश्यकतानुसार उपयोग करता है।

4. उद्देश्यों के स्पष्ट होने से कार्यकर्ता को यह ज्ञात हो जाता है कि किसके साथ कार्य करना है तथा सामूहिक कार्य के किस प्रारूप का उपयोग करना है।

5. उद्देश्यों से स्पष्ट होने पर ही संस्थायें निश्चित करती है कि कार्य का प्रारम्भ कैसे और किसके साथ किया जाए।

6. उद्देश्यों की स्पष्टता से नेतृत्व की आवश्यकता का ज्ञान होता है तथा पता चलता है कि किस प्रकार के नेतृत्व की आवश्यकता है।

7. उद्देश्यों की सहायता से ही कार्यकर्ता अपनी निपुणताओं तथा कार्यपद्धति में परिवर्तन एवं परिवर्धन करता है।

8. उद्देश्य के स्पष्ट होने से संस्था के लिए आवश्यक यंत्रों, साधनों तथा कोष को निश्चित करने में सहायता मिलती है तथा बजट के निर्धारण में आसानी रहती है।

9. उद्देश्यों के निश्चित होने पर कार्यक्रमों की प्राथमिकता निश्चित करने में आसानी रहती है।

10. उद्देश्यों की स्पष्टता से सम्बन्धों की एक दिशा निश्चित होती है तथा सम्बन्धों का रूप निश्चित होता है।

11. उद्देश्यों की स्पष्टता पर ही जन भागीकरण सम्भव होता है।

12. मूल्यांकन की प्रक्रिया उद्देश्यों को आधार मानकर ही चलती है। कार्यकर्ता, समूह तथा संस्था तीनों ही अपने कार्यों, कार्यक्रमों तथा कार्य-विधियों का मूल्यांकन अपने-अपने उद्देश्यों के आधार पर ही करते हैं।

11.3 सामूहिक समाज कार्य की विशेषताएँ

सामूहिक समाज कार्य की सबसे उपयुक्त एवं पूर्ण परिभाषा ट्रेकर ने दी है। उनके अनुसार सामूहिक समाज कार्य की निम्न विषेषताएँ हैं:

1.सामूहिक समाज कार्य एक प्रणाली है

इसका तात्पर्य यह है कि सामूहिक समाज कार्य के लिए विषेष ज्ञान की आवश्कता होती है। कार्यकर्ता को जब तक समूह की विषेषताओं, दशाओं, मनोवृत्तियों आदि का ज्ञान नहीं होगा तब तक वह कार्य नहीं कर सकता है। उसको व्यक्ति तथा समूह दोनों के व्यवहार का ज्ञान होना आवश्यक है। उसमें विशेष समझ होती है जिससे वह विभिन्न स्थितियों में समूहों के साथ कार्य करने में समर्थ होता है। उसको समूह की गत्यात्मकता का ज्ञान होता है। ट्रेकर का मत है कि सामूहिक कार्य के अपने कुछ सिद्धान्त हैं जो दूसरी प्रणालियों से भिन्न हैं। नियोजित समूह निर्माण, उद्देश्यपूर्ण कार्यकर्ता-सेवार्थी सम्बन्ध, निरन्तर वैयक्तीकरण, निर्देशित सामूहिक अन्तःक्रिया, प्रजातांत्रिक

सामूहिक आत्मनिश्यीकरण, लचीला कार्यात्मक संगठन, निरन्तर प्रगतिशील कार्यक्रम, संसाधनों का उपयोग तथा निरन्तर मूल्यांकन के सिद्धान्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

सामूहिक समाज कार्य की अपनी विशिष्ट निपुणातयें हैं जिनको सामूहिक कार्यकर्ता अपने व्यवहार में लाता है। कार्यकर्ता के उद्देश्यपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने की निपुणता होती है। वह सामूहिक स्थिति का विष्लेषण करने में दक्ष होता है। वह समूह के साथ भाग लेने में निपुण होता है। अपनी भूमिका की व्याख्या तथा उसकी आवश्यकता को समयानुसार निश्चित करने में समर्थ होता है। वह प्रत्येक नयी स्थिति का निष्पक्ष रहकर विषयात्मक रूप से अध्ययन करता है तथा समूह की सकारात्मक तथा नकारात्मक भावनाओं को समझकर ही कार्यक्रम को आगे बढ़ाता है। वह समूह की रूचियों तथा आवश्यकताओं के अनुसार ही कार्यक्रम आयोजित करता है। उसमें संस्था तथा समुदाय के संसाधनों को उपयोग में लाने की निपुणता होती है।

2.सामूहिक समाज कार्य द्वारा समूह में संस्था के अन्तर्गत व्यक्तियों की सहायता की जाती है

ट्रेकर की परिभाषा की दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि सामूहिक समाज कार्य में सामूहिक तथा अभिकरण दोनों महत्वपूर्ण हैं। अर्थात् व्यक्ति की सहायता समूह के माध्यम से अभिकरण के तत्वावधान में की जाती है। समूह की अपनी विशेषता होती है तथा उसके गठन का भी एक उद्देश्य होता है। यह समूह किसी संस्था के अतंर्गत ही गठित किया जाता है। ये समूह समुदाय की इच्छाओं तथा आवश्यकताओं के अनुरूप होते हैं।

3.सामूहिक समाज कार्य एक कार्यकर्ता द्वारा किया जाता है जो समूह की कार्यक्रम क्रियाओं में होने वाली अन्तर्क्रिया को निर्देशित करता है

सामूहिक कार्य में कार्यकर्ता की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण होती है। वह सभी कार्यों की धूरी होता है। अतः जैसी उसमें योग्यता एवं क्षमता होती है, समूह उसी प्रकार की उपलब्धि करता है। वह समूह की स्वीकृति के आधार पर अपनी भूमिका का सम्पादन करता है। जिस सीमा तक समूह उसको अपनी भूमिका पूरी करने की आज्ञा देता है वह वहीं तक अपनी कार्यक्षेत्र की सीमा को बढ़ाता है। कार्यकर्ता समूह के सदस्यों का वैयक्तीकरण करते हुए उनकी आवश्यकताओं, इच्छाओं तथा अन्तर्निहित क्षमताओं का ज्ञान प्राप्त करता है। वह उद्देश्यों के निर्धारण में समूह की सहायता करता है तथा कार्यक्रमों को चलाने एवं उनकी आवश्यकता के विषय में ज्ञान प्राप्त करता है। वह समूह को मंत्रणा भी देता है तथा कार्य सम्पादन के लिए प्रोत्साहित भी करता है। कार्यकर्ता समूह की सहायता प्रक्रिया के प्रत्येक स्तर पर जहाँ कहीं यह आवश्यक होता है, करता है। वह सामुदायिक संसाधनों के समुचित उपयोग में भी समूह की सहायता करता है।

4. सामूहिक समाज कार्य का उद्देश्य आपसी सम्बन्धों में वृद्धि तथा अपनी क्षमताओं के अनुसार विकास करना है

सामूहिक समाज कार्य के अन्तर्गत कार्यकर्ता इस प्रकार के कार्यक्रमों का आयोजन करता है, जिसके द्वारा समूह के सदस्यों में दूसरे लोगों के साथ सम्बन्ध स्थापित करने की क्षमता बढ़ती है। वे अपनी आवश्यकताओं एवं क्षमताओं के अनुसार विकास के अवसरों का अनुभव करते हैं। समूह सदस्यों में सहभागिता की क्षमता आती है, सम्पर्कों को करने की विधि सीखते हैं, निर्णय की क्षमता बढ़ती है तथा उत्तरदायित्व ग्रहण करना सीखते हैं। उनमें स्व-सम्प्रेरक शक्ति काम करने लगती है तथा अपनत्व की भावना विकसित होती है। इन सभी गुणों से वे अन्य व्यक्तियों के साथ समायोजित करने में सफल होते हैं एवं वृद्धि के अवसरों से लाभ उठाते हैं।

5.सामूहिक समाज कार्य सहायता का उद्देश्य वैयक्तिक, सामूहिक और सामुदायिक विकास करना है

सामूहिक समाज कार्यकर्ता व्यक्तियों के व्यवहार के परिवर्तन के लिए कार्यक्रमों का उपयोग करता है। चाहे वह समस्या हो अथवा विकास का प्रश्न हो, दोनों ही स्थितियों में व्यवहार ही बाधा बनाता है। अतः यदि दोनों प्रकार से सफलता प्राप्त करती है तब व्यवहार में परिवर्तन लाना होगा। इस परिवर्तन से व्यक्ति एवं समूह में परिवर्तन आता है जिससे प्रजातांत्रिक लक्ष्यों की पूर्ति होती है।

11.4 सारांश

प्रस्तुत इकाई में सामूहिक समाज कार्य के उद्देश्यों का अध्ययन किया। जीवनपयोगी आवश्यकताओं की पूर्ति तथा सामंजस्य स्थापित करने की शक्ति का विकास के विषय में जानकारी प्राप्त की। सामाजिक सम्बन्धों को मजबूत बनाने तथा मनोसामाजिक समस्याओं का समाधान करने की क्षमता के विषय में अध्ययन किया। तत्पश्चात् सामूहिक समाज कार्य की विशेषताओं, निपुणताओं तथा आवश्यकताओं के बारे में जानकारी प्राप्त किया।

11. 5 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. सामूहिक कार्य के उद्देश्यों का वर्णन कीजिए।
2. सामाजिक सामूहिक कार्य के व्यावसायिक उद्देश्यों का वर्णन करते हुए सामूहिक समाज कार्य के उद्देश्यों का विस्तृत वर्णन कीजिए।
3. सामूहिक समाज कार्य की विशेषताओं का वर्णन करते हुए सामूहिक समाज कार्य के उद्देश्यों के महत्व को समझाइये।
4. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए:-
    1. व्यावसायिक उद्देश्य
    2. समूह समाज कार्य के उद्देश्य
    3. सामूहिक कार्य के उद्देश्य

11.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

सिंह, सुरेन्द्र, मिश्र, पी॰ डी॰, समाज कार्य- इतिहास, दर्शन एवं प्रणालियाँ, रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2006.

सिंह, डी॰ के॰, भारत में समाज कल्याण प्रशासन: अवधारणा एवं विषय क्षेत्र, रायल बुक डिपो लखनऊ, वर्ष 2011.

सिंह, सुरेन्द्र, वर्मा, आर॰ बी॰ एस॰, भारत में समाज कार्य का क्षेत्र, रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.

मिश्रा, पी॰ डी॰, मिश्रा, बीना, व्यक्ति और समाज, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2007.

सिंह, डी॰ के॰, भारती, ए॰ के॰, सोशल वर्क कान्सेप्ट ऐंड मैथड्स, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.

सिंह, डी॰ के॰, पालीवाल, सौरभ, मिश्र, रोहित, मानव समाज, संगठन एवं विघटन के मूल तत्व, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2010.

मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक सामूहिक कार्य, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, वर्ष 1977.

मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, वर्ष 1985.

इकाई -12

सामूहिक समाज कार्य में कार्यक्रम

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 कार्यक्रम का अर्थ

12.2.1 सामूहिक कार्य में कार्यक्रम एक प्रक्रिया के रूप में

12.3 कार्यक्रम के प्रमुख अंगभूत

12.4 कार्यक्रम माध्यमों का उपयोग

12.5 समूह के लिए कार्यक्रम का महत्व

12.6 प्रभावात्मक कार्यक्रम की शर्तें

12.7 कार्यक्रम की प्रकृति तथा उद्देश्य

12.8 कार्यक्रम के तत्व

12.9 कार्यक्रम के सिद्धान्त

12.10 कार्यक्रम का महत्व

12.11 प्रभावपूर्ण कार्यक्रम की आवश्यक परिस्थितियाँ

12.12 समूह कार्य में कार्यक्रम माध्यम

12.13 सारांश

12.14 अभ्यासार्थ प्रश्न

12.15 सन्दर्भ ग्रन्थ

12.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

1. कार्यक्रम के अर्थ को समझ सकेंगे।
2. कार्यक्रम के प्रमुख अंगभूतों तथा कार्यक्रम माध्यमों के उपयोग के विषय में वर्णन कर सकेंगे।
3. समूह में कार्यक्रम के महत्व का वर्णन तथा कार्यक्रम की शर्तों के विषय में भी अध्ययन कर सकेंगे।
4. कार्यक्रम की प्रकृति तथा उद्देश्यों के विषय में भी ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
5. कार्यक्रम के तत्व तथा कार्यक्रम के सिद्धान्त का उल्लेख कर सकेंगे।

6. कार्यक्रम के महत्व और प्रभावपूर्ण कार्यक्रम की आवश्यक परिस्थितियों के विषय में जान सकेंगे तथा समूह कार्य में कार्यक्रम माध्यम का वर्णन कर सकेंगे।

12.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में सामूहिक समाज कार्य में कार्यक्रम विषय पर विचार प्रस्तुत किया गया है। कार्यक्रम के अंतर्गत वह सब कुछ आता है जिसे समूह के सदस्य करते हैं। कार्यक्रम के अंतर्गत शिल्प, अभिनय तथा खेल आदि आते हैं। अन्य शब्दों में समूह समाज कार्य के अंतर्गत कार्यक्रम का अर्थ कोई वस्तु तथा प्रत्येक वस्तु हो गया है जो समूह अपनी अभिरूचियों की संतुष्टि के लिए करता है। कार्यक्रम के द्वारा व्यक्तियों में 'टीम भावना' को विशेष तौर पर विकसित किया जाता है। इसके लिए कार्यकर्ता समूह की रूचियों के अनुसार कार्यक्रमों का निर्माण करता है तथा सदस्यों को विभिन्न भूमिकाओं के निर्वहन का अवसर प्रदान करता है। कार्यक्रम के द्वारा समूह किसी विशेष क्षेत्र में क्रियाएं सम्पन्न करता है। मनोरंजन, ड्रामों, नृत्य, संगीत, वाद-विवाद, वार्तालाप, खेलकूद, कला, शिल्प आदि कार्यक्रम के माध्यम हैं।

12.2 कार्यक्रम का अर्थ

कार्यक्रम का उद्देश्य समूह की क्रियाओं और गतिविधियों को इस प्रकार से नियोजित करके सम्पन्न करना है जिससे समूह एवं समूह के सदस्यों को अधिकतम लाभ प्राप्त हो सके। इस अर्थ में कार्यक्रम स्वयं एक प्रक्रिया है। कार्यक्रम में विषयवस्तु तथा कर्म, लोगों से विचार व्यक्त करने का माध्यम तथा कार्यान्वयन का तरीका सम्मिलित होता है। कार्यक्रम विषयवस्तु में जीवन के सामान्य अनुभवों का निरूपण होता है, जो व्यक्ति-विशेष के लिए विकास की दृष्टि से अर्थपूर्ण होते हैं। उदाहरण के लिए सामूहिक कार्य के कार्यक्रम विषयवस्तु में अधिकांशतः मनोरंजन से सम्बन्धित क्रियायें होती हैं। यह क्षेत्र महत्वपूर्ण है, क्योंकि खाली समय का उपयोग सामाजिक महत्व का है। समुदाय के मामलों में जनभागीकरण सामूहिक कार्य का महत्वपूर्ण क्षेत्र है। कुछ संस्थायें गृह तथा पारिवारिक जीवन क्षेत्र को अधिक महत्व देती हैं, क्योंकि इनमें आर्थिक तथा सामाजिक सम्बन्धों की अनेक समस्यायें होती हैं।

ट्रेकर कहते हैं कि ''साधारण भाषा में समूह समाज कार्य के अन्तर्गत कार्यक्रम का अर्थ कोई वस्तु तथा प्रत्येक वस्तु हो गया है जो समूह अपनी अभिरूचियों की संतुष्टि के लिए करता है।''

क्लीन ने कार्यक्रम को परिभाषित करते हुए कहा कि ''इसके अन्तर्गत वह सब आता है जिसे समूह के सदस्य करते हैं। कार्यक्रम के अन्तर्गत शिल्प, अभिनय तथा खेल आदि आते हैं|''

मिडलमैन का मत है कि ''कार्यक्रम शब्द उन क्रियाओं में प्रयोग किया जाता है जो वार्तालाप के स्थान करने पर अधिक महत्व देती है।''

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि ''कार्यक्रम एक समूह द्वारा की जाने वाली वे क्रियाएं हैं जो समूह की व्यक्तिगत अभिरूचियों पर आधारित तथा निर्धारित होती हैं जिनके द्वारा समूह में समूह की भावना का विकास होता है और समूह अपनी समस्याओं का समाधान खोजता है।''

कार्यक्रम के द्वारा व्यक्तियों में ''टीम भावना'' को विशेष तौर पर विकसित किया जाता है। इसके लिए कार्यकर्ता समूह की रूचियों के अनुसार कार्यक्रमों का निर्माण करता है तथा सदस्यों को विभिन्न भूमिकाओं के निर्वहन का अवसर प्रदान करता है।

12.2.1 सामूहिक कार्य में कार्यक्रम एक प्रक्रिया के रूप में

ट्रैकर ने निम्न प्रकार से कार्यक्रम को प्रक्रिया के रूप में दर्शाया है:-

कार्यक्रम में व्यक्तीकरण के माध्यम वे विशिष्ट साधन होते हैं जिनके द्वारा समूह किसी विशेष क्षेत्र में क्रियायें सम्पन्न करता है। मनोरंजन, ड्रामों, नृत्य, संगीत, वाद-विवाद, वार्तालाप, खेलकूद, कला, शिल्प आदि कार्यक्रम के माध्यम हैं। कार्यकर्ता सबसे पहले कार्यक्रम चलाने के लिए समूह को कार्यात्मक संगठन बनाने के लिए सहायता करता है। वह समूह को विषयवस्तु का क्षेत्र तथा प्रगटन का माध्यम चुनने में सहायता करता है। परन्तु इससे पहले वह समूह की रुचियों की खोज करता है। वह समूह की सहायता इस प्रकार से करता है जिससे वह अपने ही स्रोतों का उपयोग अधिकाधिक कर सके। कार्यकर्ता का सम्बन्ध मुख्यतः तीन बातों से होता है:-

(1) क्या कार्यक्रम है (विषयवस्तु),

(2) कार्यक्रम किस प्रकार चलेगा, और

(3) इस माध्यम से कार्यक्रम क्यों चलाया जायेगा।

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि कार्यक्रम के 3 आवश्यक अंग हैं।

12.3 कार्यक्रम के प्रमुख अंगभूत

कार्यक्रम की व्याख्या में कार्यक्रम के निम्नलिखित तीन अंगभूतों का उल्लेख आवश्यक है|

1.विषयवस्तु एवं क्षेत्र

विषयवस्तु का तात्पर्य है कि कार्यक्रम के अन्तर्गत हम किन-किन क्रियाओं का समावेश करते हैं, समूह क्या अनुभव प्राप्त कर रहा है और उसका विकास किस दिशा में हो रहा है। कार्यक्रम की विषयवस्तु, मनोरंजन, शिक्षा, मनोवैज्ञानिक सहायता, शारीरिक विकास इत्यादि हो सकती है। साधारणतया इसका अर्थ उस क्षेत्र से समझा जाता है जिसको कि कार्यक्रम पूरा कर रहा है। कार्यक्रम की विषयवस्तु के आधार पर कभी-कभी समूहों का संगठन होता है। परन्तु ऐसी स्थिति उस समय आती है जब अभिकरण समूह की रुचियों एवं आवश्यकताओं को अनुभव करके विषयवस्तु का चुनाव करता है। कार्यकर्ता विषयवस्तु को निर्धारित करने के पश्चात् ही क्रियाओं को सम्पन्न करने के माध्यमों का चुनाव करता है।

2.माध्यम

कार्यकर्ता जब क्षेत्र तथा विषय-वस्तु का चुनाव कर लेता है तब कार्यक्रम के कार्यान्वयन के लिए माध्यम निर्धारित करता है। वह साधनों एवं तरीकों को उपयोग में लाकर समूह द्वारा क्रियाओं को सम्पन्न कराता है या समूह इन साधनों व तरीकों का उपयोग करके अपनी निर्धारित क्रियाएँ करता है। अतः माध्यम का मतलब उन साधनों से है जिनका उपयोग समूह अपने अनुभव के लिए करता है। कार्यक्रम में बहुत से माध्यम प्रयोग किये जाते हैं, जैसे- नाच, गाना, कहानी, ड्रामा, खेल, कला इत्यादि। ये क्रियाएँ समूह को अपनी भावनाओं एवं आवश्यकताओं को समझने तथा व्यक्त करने का अवसर देती हैं। इन माध्यमों के द्वारा न केवल रचनात्मक अनुभव प्राप्त होता है बल्कि

समूह की आवश्यकताओं को समझने में सहायता मिलती है। उदाहरण के लिए ड्रामों में यदि स्वास्थ्य की समस्याओं को दूर करने के उपायों के लिए अभिनय किया गया है तब समूह के सदस्य न केवल स्वास्थ्य के विषय में ज्ञान प्राप्त करते हैं बल्कि उनको सामुदायिक स्वास्थ्य-स्तर की भी जानकारी हो जाती है।

3.कार्यक्रम के सम्पादन की प्रणाली

सामूहिक समाज कार्य में कार्यक्रम के सम्पादन का तात्पर्य समूह की सम्पूर्ण प्रक्रिया से है। कार्यकर्ता सबसे पहले समूह की आवश्यकताओं एवं इच्छाओं की खोज करता है तथा समूह को कार्यात्मक संगठन के रूप में संगठित करता है, जिससे वह उत्तरदायित्वपूर्ण निर्णय ले सकने में समर्थ हो। वह कार्यक्रम की विषयवस्तु का चुनाव करता है और माध्यम निर्धारित करता है। कार्यक्रम के तथ्यों का निरूपण करता है तथा समस्या का निदान करता है। अन्त में, उपचार की प्रक्रिया आती है। उपचार होने के बाद समूह को स्थगित कर दिया जाता है।

12.4 कार्यक्रम माध्यमों का उपयोग

कार्यकर्ता को समूह की रचना, उद्देश्य तथा स्तर के आधार पर कार्यक्रमों को निर्धारित करना होता है। बालकों में मौखिक योग्यताओं का विकास कम होता है अतः खेल तथा शिल्प क्रियाओं का आयोजन कार्यक्रम के अंग के रूप में किया जाता है। किशोरों तथा युवाओं के साथ अनेक प्रकार की सामाजिक क्रियायें तथा सामूहिक क्रियायें प्रभावपूर्ण होती हैं। सामाजिक विकास तथा अन्तरविवेक के बहुत से सन्देश गांवों में लोकरीतियों के माध्यम से किये जाते हैं। ये सभी कार्यक्रम क्रियायें अर्थपूर्ण अन्तःक्रिया के लिए अवसर प्रदान करते हैं। प्रायः निम्न प्रकार की कार्यक्रम क्रियायें समस्या समाधान अथवा उपचार के लिए उपयोग में लायी जाती हैः

1. खेल: इसके अन्तर्गत शारीरिक, बौद्धिक, स्मृति सम्बन्धी आदि सभी खेल आते हैं। बच्चों के सम्बन्ध में खिलौनों, बालू तथा पानी आदि खेल भी सम्मिलित हैं।

2. ड्रामा, हास्यनाटक, कठपुतली का नाच तथा भूमिका निर्वाह: समूह सदस्यों को विभिन्न प्रकार की क्रियाओं को सम्पन्न करने के लिए उत्साहित किया जाता है जो उनकी कठिनाइयों तथा समस्याओं के लिए महत्वपूर्ण होती हैं। व्यक्ति अपने तथा दूसरों के व्यवहार के विषय में अन्तदृष्टि का विकास इनके माध्यम से करते हैं।

3. संगीत, कला तथा शिल्प: संगीत के माध्यम से मनुष्य में संवेगों की अभिव्यक्ति होती है। संगीत चाहे वैयक्तिक स्तर पर आयोजित हो अथवा सामूहिक, दोनों ही स्थितियों में हृदय एवं मन दोनों को राहत देता है। कलात्मक कार्यों से जहां एक मानसिक सन्तोष मिलता है, ध्यान केन्द्रित होता है। वहीं दूसरी ओर आत्म प्रगटन का अवसर लकड़ी, मिट्टी, कागज पर कलाकृतियों द्वारा होता है। उसमें रचनात्मक शक्ति का विकास होता है तथा व्यक्तित्व में सन्तुलन होता है।

4. वार्तालाप: वार्तालाप का प्रारम्भ समूह के निर्माण के समय से ही हो जाता है। कार्यकर्ता वार्तालाप के माध्यम से ही समूह सदस्यों की विशेषताओं से अवगत होता है तथा वैयक्तिक इतिहास प्राप्त करता है। इन क्रियाओं में भाषण, सेमिनार, विचार-विमर्श, संवेदनशील खेल आदि सम्मिलित हैं।

5. गति सम्बन्धी: इस प्रकार की क्रियाओं का उपयोग मौखिक संचार प्रक्रिया के प्रतिरोध स्वरूप होती है। इसके अन्तर्गत छुआ छुई, अमौखिक संचार, नृत्य, हास्य, व्यंग्य तथा शारीरिक अभ्यास।

6. कार्य: समूह सदस्यों को किसी परियोजना को पूरा करने के लिए निर्देश दिये जाते हैं तथा सहयोगिक क्रियाओं के आधार पर कार्यक्रम सम्पन्न होता है।

कार्यकर्ता इन कार्यक्रम माध्यमों से ही समूह की समस्याओं का समाधान करता है तथा समूह सदस्य अपनी क्षमताओं, योग्यताओं और कौशलों का विकास करते हैं। उन्हें अपने पर नियन्त्रण रखने की योग्यता आती है, इच्छा संतुष्टि के अवसर प्राप्त होते हैं, दिवा स्वपनों तथा कल्पना तरंगों से छुटकारा मिलता हैं, संवेगों की अभिव्यक्ति होती हैं, वास्तविकता को समझने का अवसर प्राप्त होता है, उचित एवं सामान्य दृष्टिकोण विकसित होता हैं, तथा नेतृत्व का विकास होता है। उन्हें समूहों में काम करने तथा जीवन यापन की कला आती है।

12.5 समूह के लिए कार्यक्रम का महत्व

समूह के लिए कार्यक्रम अत्यन्त उपयोगी है, क्योंकि कार्यक्रमों के माध्यम से ही विभिन्न क्रियाओं को सम्पन्न किया जाता है, जिसके कारण समूह किसी न किसी क्रिया को सम्पन्न करके मनोरंजन प्राप्त करते हैं। इसके द्वारा संवेगों की अभिव्यक्ति होती है, परिणामस्वरूप शारीरिक एवं मानसिक विकास सम्भव होता है। पारस्परिक अन्तःक्रिया के कारण सदस्य एक-दूसरे के निकट आते हैं और एक-दूसरे के विषय में जानकारी प्राप्त करते हैं| साथ ही साथ समान आवश्यकताओं का पता चलता है। कार्यक्रम-क्रियायें समूह को प्रेम, सौहार्द्र, भिन्नतायें तथा उग्रतायें आदि मनोभावों को व्यक्त करने का अवसर देता है। इससे उनमें परस्पर महत्व की इच्छा पूरी होती है। कार्यक्रम के नियोजन से समूह को निर्णय लेने तथा उत्तरदायित्व को स्वीकार करने का अवसर प्राप्त होता है।

12.6 प्रभावात्मक कार्यक्रम की शर्तें

सामूहिक कार्य-प्रक्रिया उस समय भलीभांति सम्पन्न होती है जब संस्थाकर्ता तथा समूह ऐसे वातावरण का निर्माण करते हैं जिसमें समूह-सदस्य अपनापन अनुभव करते हैं एवं व्यक्ति विकास के अवसर स्पष्ट दिखलायी देते हैं। एक-दूसरे का उत्साहवर्धन होता है, लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए आवश्यक सहायता प्राप्त होती हैं, योजना बनाने, कार्यान्वयन करने तथा कार्यक्रम चलाने महत्वपूर्ण होते हैं लेकिन उससे अधिक कार्यक्रम किस प्रकार चलाया जा रहा है, महत्वपूर्ण होता है। अतः कार्यक्रम प्रभावपूर्ण होने के लिए निम्नलिखित शर्तों को पूरा करना चाहिये:-

1. कार्यक्रम उन व्यक्तियों की रुचियों पर आधारित होना चाहिये जिन्होंने समूह का निर्माण किया है।
2. कार्यक्रम के अन्तर्गत समूह-सदस्यों की आयु, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि तथा आर्थिक अंतरों का ध्यान अवश्य रखना चाहिये।
3. कार्यक्रम में व्यक्तियों को इन अनुभवों तथा अवसरों की प्राप्ति अवश्य होनी चाहिए जिनके कारण समूह के सदस्य बने हैं और उनके प्रति आन्तरिक मूल्य उनमें हैं।
4. कार्यक्रम को लचीला होना चाहिये तथा विभिन्न प्रकार की रुचियों एवं आवश्यकताओं को पूरा करने की क्षमता होनी चाहिये। साथ ही साथ भाग लेने वाले सदस्यों को अधिकाधिक आवश्यकताओं की पूर्ति के अवसर मिलने चाहिए।
5. कार्यक्रम को सदैव सरल से जटिल की ओर अग्रसर होना चाहिए।

12.7 कार्यक्रम की प्रकृति तथा उद्देश्य

कार्यक्रम की प्रकृति प्रायोगिक होती है अर्थात् कार्यकर्ता कार्यक्रमों का क्रियान्वयन प्रयोग के तौर पर करता है। इसकी सफलता का पता सदस्यों के व्यवहार मूल्यांकन द्वारा चलता है। कार्यक्रम में जीवन के सामान्य अनुभवों का निरूपण होता है, जो व्यक्ति विशेष के लिए विकास की दृष्टि से अर्थपूर्ण होते हैं। समूह कार्य के कार्यक्रम में अधिकांशतः मनोरंजन से सम्बन्धित क्रियायें होती हैं। समुदाय के मामलों में सहभागिता समूह कार्य का महत्वपूर्ण क्षेत्र है। सहभागिता के द्वारा ही समूह में 'हम की भावना' का विकास होता है। व्यक्ति अपने खाली समय का सदुपयोग सामूहिक कार्यक्रम द्वारा कर सकता है। इससे वह नित नए प्रयोग सीखता है, साथ ही साथ समाज के प्रति उसकी जानकारी भी बढ़ती है और उत्तरदायित्व का विकास भी होता है।

समूह कार्य में कार्यक्रम की सफलता कार्यकर्ता की दक्षता तथा कार्यक्रम निर्माण में इसकी कुशलता पर निर्भर करती है। कार्यक्रम में मानव जीवन के सामान्य अनुभवों पर आधारित विभिन्न क्रियाएं होती हैं जो व्यक्ति के विकास हेतु अत्यन्त महत्वपूर्ण होती हैं। व्यक्ति के विकास के लिए कार्यक्रम के निम्नलिखित उद्देश्य हैं:

1. हम की भावना का विकास करना,
2. सदस्यों में उत्तरदायित्व निभाने की योग्यता का विकास करना,
3. व्यक्ति का व्यक्तीकरण करना,
4. प्रत्येक सदस्य की सहभागिता सुनिश्चित करना,
5. सदस्य को जीवन के सामान्य अनुभवों से सीख लेते हेतु प्रेरित करना, एवं
6. समाज के प्रति सदस्य की जानकारी के स्तर में वृद्धि करना।

12.8 कार्यक्रम के तत्व

कार्यक्रम प्रक्रिया के तीन आवश्यक तत्व हैं:

1. सदस्य
2. समूह कार्यकर्ता, तथा
3. कार्यक्रम की विषय-वस्तु

1. सदस्य

किसी भी समूह के कार्यक्रम की विषय-वस्तु लगभग समान होती है। परन्तु जहाँ पर सदस्य भिन्न-भिन्न संस्कृतियों के होते हैं वहाँ इसमें परिवर्तन किया जाता है। कार्यक्रम की विषयवस्तु तथा इसका उपयोग समूह की सामाजिक शक्तियों द्वारा प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होता है। इन शक्तियों के प्रभाव के आधार पर समूह का आकार, संरचना तथा अन्य क्रियाएं, जिनके द्वारा वह उद्देश्य को प्राप्त करता है, निश्चिय की जाती है। एक महत्वपूर्ण बात यह है कि जिन समाजों में असुरक्षा, सामाजिक उथल-पुथल तथा संघर्ष बना रहता है, उनके समूहों की संरचना स्थिर नहीं रह पाती है तथा कार्यक्रम की विषयवस्तु के निर्माण का उत्तरदायित्व कुछ ही सदस्य ग्रहण करते हैं। इन्हीं सदस्यों पर कार्यक्रम की सफलता एवं भविष्य का विकास निर्भर करता है।

2. समूह कार्यकर्ता

समूह कार्यकर्ता समूह एक अच्छे वैज्ञानिक कलाकार की भाँति उन विषयों से पूर्ण परिचित होता है जिनके अन्तर्गत वह कार्य करता है। वह कार्यक्रम की विषय-वस्तु में अन्तर्निहित क्षमताओं, संस्था के कार्यों तथा उद्देश्य, सदस्यों की विकासात्मक आवश्यकताओं तथा रूचियों, समूह के मूल्यों तथा प्रतिमानों और समुदाय का सम्पूर्ण ज्ञान रखता है। सदस्यों की अपनी रूचियाँ एवं आवश्यकताएँ होती हैं, उनकी विशेष क्षमताएँ होती हैं, आपसी संबंध होते हैं तथा कार्यकर्ता से भी संबंध होते हैं, उनके प्रतिमान एवं मूल्य समुदाय तथा पारिवारिक जीवन से संबंधित होते हैं तथा वे उनके जीवन पर गहरा प्रभाव भी डालते हैं। कार्यकर्ता में व्यावसायिक ज्ञान, निपुणता, विशेष योग्यता, उसका सदस्यों से सम्बन्ध, संस्था के प्रतिमानों तथा मूल्यों का प्रतिनिधित्व आदि छोटे-छोटे मौलिक तत्व उपस्थित रहते हैं। कार्यक्रम में समूह सदस्यों की आवश्यकताओं एवं रूचियों को पूरा करने की क्षमता होती है। ये रूचियाँ, समूहों, समुदायों तथा सम्पूर्ण समाज के मूल्यों तथा प्रतिमानों का प्रतिनिधित्व करती हैं। कार्यक्रम-नियोजन में इन तीनों तत्वों की परस्पर अन्तःक्रिया की आवश्यकता होती है। इन तत्वों के उचित सामंजस्य के कारण सदस्यों की आवश्कताएँ अधिक संतोषपूर्ण ढंग से पूरी होती हैं एवं समूह की निरंतरता बनी रहती है।

3. कार्यक्रम की विषय वस्तु

वास्तव में कार्यक्रम की विषय वस्तु, एकीकरण करने वाला मुख्य कारक होता है जिनमें सामान्य एवं समान रूचियों का समावेश होता है। सदस्य सामान्य शर्तों से बंधे होते हैं लेकिन समूह चाहे छोटा हो या बड़ा, प्रत्येक समूह में छोटे-छोटे समूह होते हैं जो व्यक्तिगत प्रेम एवं भावना पर आधारित होते हैं। इस स्थिति में संस्था समुदाय की रूचियों एवं आवश्यकताओं के अनुरूप विषय-वस्तु निश्चित करती है। जब एक बार समूह संगठित हो जाता है तो कार्यक्रम का महत्व इस बात पर निर्भर करता है कि सदस्य कार्य नियोजन-प्रक्रिया में किस प्रकार भाग ले रहे हैं। कार्यक्रम की विषय वस्तु सदैव समूहों की रूचियों पर निर्भर नहीं होती। यह परिस्थिति के अनुसार बदल भी जाती है।

12.9 कार्यक्रम के सिद्धान्त

समूह समाज कार्य में कार्यक्रम का विशेष महत्व है परंतु किसी भी कार्यक्रम की सफलता जहाँ उसके व्यावहारिक पक्ष पर निर्भर करती है, वहीं प्राथमिक रूप से वह उसके सिद्धान्त पर भी निर्भर करती है। अतः समूह समाज कार्य में कार्यक्रम भी निम्नलिखित सिद्धान्तों पर आधारित हैं:

(क) समूह चिकित्सा के रूप में समूह समाज कार्य में कार्यक्रम का प्रयोग किया जाना चाहिए। अर्थात् किसी भी कार्यक्रम का उद्देश्य लघु-कालीन न होकर दीर्घकालीन और स्थायी प्रभावकारी होना चाहिए।

(ख) समूह जिन लक्ष्यों का निर्धारण करता है उन्हीं के अनुरूप ही कार्यक्रम का उपयोग होना चाहिए।

(ग) कार्यक्रम में समूह के प्रत्येक सदस्य की भागीदारी सुनिश्चित की जानी चाहिए, जिससे सदस्यों में उत्तरदायित्व की भावना का विकास हो सके।

(घ) कार्यक्रम क्रियाओं के चलाने का निर्णय समूह का होना चाहिए अर्थात् अपनी समस्या का समाधान वे किस प्रकार करना चाहते हैं, उन्हें निर्णय लेने का अधिकार होना चाहिए।

(च) कार्यक्रम का उपयोग समूह प्रक्रिया को परिवर्तित करने के लिए किया जाना चाहिए। अर्थात समूह को नई दिशा प्रदान करने के लिए कार्यक्रम का उपयोग होना चाहिए।

(छ) सदस्यों की आवश्यकता, निपुणताओं और रूचियों के अनुरूप ही कार्यक्रम होने चाहिए।

(ज) कार्यक्रम का उपयोग समूह कार्य के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए किया जाना चाहिए।

12.10 कार्यक्रम का महत्व

जब व्यक्ति पर जिम्मेदारी का बोझ डाला जाता है तब वह उन्हीं कार्यों को अधिक अच्छे ढंग से करता है जिन्हें वह पहले या तो गलत कर रहा था या फिर करने से कतरा रहा था। कार्यक्रम के द्वारा जहाँ सदस्यों में उत्तरदायित्व की भावना का विकास होता है वहीं उन्हें मनोरंजन प्राप्त होता है। वह एक दूसरे के संवेगों को समझते हैं तथा एक दूसरे की आवश्यकताओं एवं आदतों से भी परिचित होते हैं। दल के रूप में कार्य करने के दौरान वे उन सभी पहलुओं को जाँचते-परखते हैं जिससे वह अभी तक अनभिज्ञ थे, ऐसा सदस्यों की शारीरिक व मानसिक निकटता के कारण ही होता है। जब तक सदस्य एक दूसरे को जानते नहीं हैं तब तक उनमें संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होने का डर बना रहता है, परन्तु कार्यक्रम के दौरान वे एक दूसरे को जानते हैं जिससे संघर्ष की स्थिति नहीं उत्पन्न हो पाती है क्योंकि तनाव का निवारण होता है। एक दूसरे को समझते हुए वे पूर्व खराब अनुभवों को भुला देते हैं तथा सकारात्मक सोच के साथ मेल-मिलाप बढ़ाते हैं। उनकी आपस की, व्यक्तिगत एवं सामूहिक समस्याओं का निरूपण तथा निराकरण कार्यक्रम द्वारा होता है। कार्यक्रम में प्रयुक्त विभिन्न नाटकों इत्यादि से जहाँ उनके मन की बात प्रकट होती है वहीं वे अपनी बातों का सकारात्मक तथा नकारात्मक प्रभाव भी जान पाते हैं। इससे आन्तरिक संघर्ष में कमी आ जाती है तथा उनका सांवेगिक तनाव भी कम होता है। कार्यक्रम सदस्यों में भागीकरण को बढ़ावा देता है तथा प्रजातांत्रिक मूल्यों की स्थापना में सहयोग करता है। सदस्यों में आपसी समन्वय भी कार्यक्रम के द्वारा ही बढ़ता है। उनको शारीरिक एवं बौद्धिक विकास के अवसर प्राप्त होते हैं, उनमें सामूहिकता की भावना बढ़ती है तथा उत्तरदायित्व का विकास होता है। कार्यक्रम का जीवन में अनेक प्रकार से उपयोग किया जाता है। कार्यक्रम के द्वारा ही समूह में हम की भावना का विकास होता है, वे एकता की शक्ति को जानते हैं। कार्यक्रम से ही वे एक-दूसरे के प्रति व्यवहार करना सीखते हैं। समूह सदस्य मिलकर कार्यों का सम्पादन करते हैं जिससे वे अपने-अपने उत्तरदायित्व के साथ-साथ एक दूसरे अधिकारों के विषय में जानकारी भी करते हैं।

16.11 प्रभावपूर्ण कार्यक्रम की आवश्यक परिस्थितियाँ

समूह कार्य-प्रक्रिया उस समय सम्पन्न होती है जब संस्था, कर्ता तथा समूह ऐसा वातावरण का निर्माण करते हैं जिसमें समूह सदस्य अपनापन अनुभव करते हैं एवं व्यक्तित्व विकास के अवसर स्पष्ट दिखलायी देते हैं। यद्यपि समूह कार्य के लिए कार्यक्रम महत्वपूर्ण होता है लेकिन कार्यक्रम किस प्रकार चलाया जा रहा है, यह अत्यधिक महत्वपूर्ण होता है। प्रभावपूर्ण कार्यक्रम संचालन के लिए निम्नलिखित परिस्थितियों को पूरा करना चाहिए:

16.12 समूह कार्य में कार्यक्रम माध्यम

कार्यक्रम माध्यम समूह के मध्य क्रियाकलापों को संपन्न कराने हेतु आवश्यक हैं। कार्यकर्ता समूह की रचना, उद्देश्य तथा स्तर के आधार पर कार्यक्रमों को निर्धारित करता है। अतः खेल तथा शिल्प क्रियाओं का आयोजन कार्यक्रम के अंग के रूप में किया जाता है। सामाजिक विकास तथा अन्तरविवेक के बहुत से सन्देश गाँवों में लोकरीतियों के माध्यम से किये जाते हैं, क्योंकि लोक रीतियाँ ग्रामीण व्यवस्था का आधार होती हैं। ये सभी कार्यक्रम क्रियाएं अर्थपूर्ण अन्तःक्रिया के लिए अवसर प्रदान करते हैं।

निम्नलिखित प्रकार के कार्यक्रम समस्या समाधान अथवा उपचार के लिए उपयोग में लाए जाते हैं:

1. खेल

इसके अन्तर्गत शारीरिक, बौद्धिक एवं स्मृति सम्बन्धी आदि सभी खेल आते हैं। कार्यकर्ता विभिन्न प्रकार के खेलों को समूह सदस्यों के मध्य सम्पन्न करवाता है। खेलों की प्रकृति समूह के सदस्यों की प्रकृति पर निर्भर करती है।

2. ड्रामा तथा हास्य नाटक

ड्रामा तथा हास्य नाटक के द्वारा समूह की विभिन्न समस्याओं को परिलक्षित किया जाता है। कार्यकर्ता द्वारा समूह सदस्यों को विभिन्न प्रकार की क्रियाओं को सम्पन्न करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है जो उनकी कठिनाइयों तथा समस्याओं के समाधान के लिए महत्वपूर्ण होती हैं। व्यक्ति अपने तथा दूसरों के व्यवहार के विषय में अन्तर्दृष्टि का विकास इन्हीं के माध्यम से करते हैं।

3. संगीत एवं कला

संगीत के माध्यम से मनुष्य के आंतरिक भावों एवं संवेगों की अभिव्यक्ति होती है। संगीत चाहे वैयक्तिक स्तर पर आयोजित हो अथवा सामूहिक, दोनों ही स्थितियों में हृदय एवं मन को, आनंद और संतुष्टि देता है। कलात्मक कार्यों से जहाँ एक ओर मानसिक सन्तोष मिलता है, ध्यान केन्द्रित होता है वहीं दूसरी ओर आत्म प्रकटन का अवसर प्राप्त होता है। व्यक्ति में रचनात्मक शक्ति का विकास होता है तथा व्यक्तित्व में सन्तुलन बना रहता है। कला व्यक्ति के मनोभावों को चित्रित करने का एक तरीका भी है। इसी के माध्यम से व्यक्ति अपने वियोग की अभिव्यक्ति भी करता है।

4. वार्तालाप

वार्तालाप का प्रारम्भ समूह के निर्माण के समय से ही हो जाता है। कार्यकर्ता, वार्तालाप के माध्यम से ही समूह सदस्यों की विशेषताओं से परिचित होता है तथा वैयक्तिक इतिहास की जानकारी प्रात करता है। इन क्रियाओं में भाषण, संगोष्ठियाँ, विचार-विमर्श, संवेदनशील खेल आदि सम्मिलित हैं।

5.विभिन्न गतिविधियाँ

इस प्रकार की क्रियाओं का उपयोग मौखिक संचार प्रक्रिया के प्रतिरोध स्वरूप होती है। इसके अन्तर्गत छुआ-छुई, अमौखिक संचार, नृत्य, हास्य-व्यंग तथा शारीरिक अभ्यास आदि आते हैं।

6. कार्य संपादन

समूह सदस्यों को किसी परियोजना को पूरा करने के लिए निर्देश दिये जाते हैं तथा सहयोगिक क्रियाओं के आधार पर कार्यक्रम सम्पन्न होता है।

7.ध्यान

इसके अन्तर्गत कार्यकर्ता सदस्यों को अपना ध्यान किसी बिन्दु विशेष पर केन्द्रित करने को कहता है। इसके द्वारा जहाँ कार्यकर्ताओं में आत्मबल का विकास होता है वहीं उनमें दृढ़ इच्छाशक्ति का विकास होता है और वे स्वयं अपनी समस्याओं का हल खोजने में सक्षम बनते हैं।

माध्यम समूह में ''टीम भावना'' का विकास करते हैं तथा यहीं से विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से जनतांत्रिक प्रक्रिया भी सुदृढ़ होती है क्योंकि खेल, संगीत व नाटक इत्यादि से कार्यकर्ता समूह के सदस्यों में समूह समाज कार्य के मूल्यों को मजबूती प्रदान करता है।

कार्यकर्ता कार्यक्रम की सहायता से समूह की समस्याओं का समाधान करता है तथा समूह सदस्य अपनी क्षमताओं, योग्यताओं और कौशलों का विकास करते हैं। उन्हें अपने पर नियन्त्रण रखने की योग्यता आती है, इच्छा संतुष्टि के अवसर प्राप्त होते हैं, यथार्थ से सामना करने में सक्षम होते हैं, संवेगों की अभिव्यक्ति हैं, वास्तविकता को समझने का अवसर प्राप्त होता है, उचित एवं सामान्य दृष्टिकोण विकसित होता हैं, तथा प्रजातांत्रिक नेतृत्व का विकास होता है। साथ ही साथ उन्हें समूह में काम करने तथा जीवनयापन की कला आती है। अतः कार्यक्रम माध्यम समूह के विकास में अहम् भूमिका का निर्वहन करते हैं।

(क) कार्यक्रम समूह के सदस्यों की रूचियों पर आधारित होना चाहिए,

(ख) कार्यक्रम के अन्तर्गत समूह-सदस्यों की आयु, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि तथा आर्थिक स्तर का ध्यान अवश्य रखना चाहिए,

(ग) कार्यक्रम को लचीला होना चाहिए,

(घ) कार्यक्रम में विभिन्न प्रकार की रूचियों एवं आवश्यकताओं को पूरा करने की क्षमता होनी चाहिए,

(च) कार्यक्रम में भाग लेने वाले सदस्य को अधिकाधिक आवश्यकताओं के पूरे अवसर मिलने चाहिए,

(छ) कार्यक्रम सदैव सरल से जटिल की ओर होना चाहिए,

(ज) कार्यक्रम समूह सदस्यों के स्तर से अधिक जटिल नहीं होना चाहिए, एवं

(झ) कार्यक्रम के माध्यम से समूह सदस्यों को धीरे-धीरे परिपक्व बनाने का प्रयास करना चाहिए।

12.13 सारांश

प्रस्तुत इकाई के अंतर्गत सर्वप्रथम कार्यक्रम के अर्थ, कार्यक्रम के प्रमुख अंगभूत तथा कार्यक्रम माध्यमों के उपयोग का वर्णन किया गया है। तत्पश्चात् कार्यक्रम के महत्व तथा कार्यक्रम की शर्तों के विषय में वर्णन किया है। इसके पश्चात कार्यक्रम की प्रकृति तथा उद्देश्यों तथा कार्यक्रम के तत्व को समझा। कार्यक्रम के सिद्धान्त तथा कार्यक्रम के महत्व का अध्ययन किया। अंत में कार्यक्रम की आवश्यक परिस्थितियों तथा कार्यक्रम माध्यमों का अध्ययन किया।

12.14 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. सामूहिक समाज कार्य में कार्यक्रम के अर्थ को समझाइये तथा सामूहिक कार्य में कार्यक्रम का एक प्रक्रिया के रूप में वर्णन कीजिए।

2. सामूहिक कार्य में कार्यक्रम के प्रमुख अंगभूत का वर्णन कीजिए तथा कार्यक्रम के माध्यमों के उपयोग को वर्णित कीजिए।

3. प्रभावात्मक कार्यक्रम की शर्तों का उल्लेख करते हुए कार्यक्रम की प्रकृति एवं उद्देश्य को समझाइये।

4. सामूहिक समाज कार्य में कार्यक्रम के तत्वों एवं इसके सिद्धान्तों को समझाते हुए विस्तृत वर्णन कीजिए।

5. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिये:
    1. कार्यक्रम का महत्व
    2. प्रभावपूर्ण कार्यक्रम की आवश्यक परिस्थितियाँ
    3. समूह कार्य में कार्यक्रम माध्यम

12.15 सन्दर्भ ग्रन्थ

सिंह, डी॰ के॰, भारती, ए॰ के॰, सोषल वर्क कान्सेप्ट ऐंड मैथड्स, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.

सिंह, डी॰ के॰, पालीवाल, सौरभ, मिश्र, रोहित, मानव समाज, संगठन एवं विघटन के मूल तत्व, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2010.

मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक सामूहिक कार्य, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, वर्ष 1977.

सिंह, सुरेन्द्र, मिश्र, पी॰ डी॰, समाज कार्य- इतिहास, दर्शन एवं प्रणालियाँ,

रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2006.

मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, वर्ष 1985.

सिंह, डी॰ के॰, भारत में समाज कल्याण प्रशासन: अवधारणा एवं विषय क्षेत्र, रायल बुक डिपो लखनऊ, वर्ष 2011.

सिंह, सुरेन्द्र, वर्मा, आर॰ बी॰ एस॰, भारत में समाज कार्य का क्षेत्र, रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.

मिश्रा, पी॰ डी॰, मिश्रा, बीना, व्यक्ति और समाज, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2007.